श्रीगुह्यसमाजतन्त्रम्

(संस्कृत मूल एवं हिन्दी अनुवाद)

Guhyasamāj Tantram

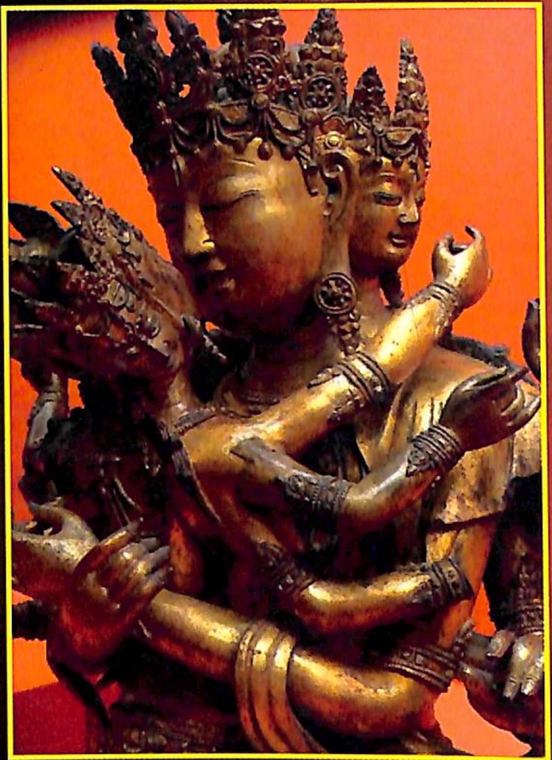

काशीनाथ न्यौपाने

Kashinath Nyaupane

INDIAN MIND

Guhyasamāj Tantra
(Sanskrit Text with Hindi Translation)

Translated By
Kashinath Nyaupane

INDIAN
MIND

श्रीगुह्यसमाजतन्त्रम्
(संस्कृत मूल एवं हिन्दी अनुवाद)

काशीनाथ न्यौपाने

INDIAN
MIND

First Edition 2012

© Kashinath Nyaupane

Published by **Indian Mind**, Varanasi.

Sole Distributor
Indica Books
Varanasi 221 001 (U.P.)
India
e-mail : indicabooks@satyam.net.in
website : www.indicabooks.com

ISBN : 81-86117-10-5

Designed by : Abhijit Pandit

Printed in India by
Dee Gee Printers
Varanasi. Cell :91+9935408247

विषय-सूचि

अध्याय	पृष्ठ संख्या
पूर्वपीठिका	7
१. प्रथमः पटलः	15
२. द्वितीयपटलः	33
३. तृतीयपटलः	39
४. चतुर्थपटलः	45
५. पञ्चमः पटलः	51
६. षष्ठः पटलः	57
७. सप्तमपटलः	65
८. अष्टमः पटलः	73
९. नवमः पटलः	79
१०. दशमपटलः	85
११. एकादशपटलः	91
१२. द्वादशपटलः	101
१३. त्रयोदशपटलंः	115
१४. चतुर्दशपटलः	145
१५. पञ्चदशपटलः	165
१६. षोडशपटलः	193
१७. सप्तदशपटलः	211
१८. अष्टादशपटलः	241
सन्दर्भग्रन्थ सूची	273

पूर्वपीठिका

गुह्यसमाजतन्त्र अति प्राचीनतम ग्रन्थ है। इसमें वज्रयानानुसारि-तान्त्रिक-अनुष्ठानों की विधियाँ निबद्ध हैं। गुह्यसमाज शब्द का रहस्यपूर्ण अर्थ इस ग्रन्थ के १८वें पटल में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है। यथा –

त्रिविधं कायवाक्चित्तं गुह्यमित्यभिधीयते ।
समाजं मीलनं प्रोक्तं सर्वबुद्धाभिधानकम् ॥

प्रसंग भेद से वज्र शब्द का विविध अर्थों में व्यवहार होता है। सांकेतिक रूप से वज्र शब्द का अर्थ निम्नलिखित शब्दों के द्वारा किया गया है :

पञ्च हेतिश्च वेतिश्च वज्रमित्यभिधीयते

इसके अतिरिक्त गुह्यसमाज में वज्रयान का तात्पर्य निम्नांकित शब्दों में स्पष्ट किया है।

मोहोद्देशस्तथा रागः सदा वज्ररतिस्तथा।
उपायस्तेन बुद्धानां वज्रयानमिति स्मृतम् ॥

वज्र शब्द का सांकेतिक अर्थ स्पष्ट रूप से निम्न पद्य से किया हुआ है। यथा –

दृढं सारमसौशीर्यमच्छेद्याभेद्यलक्षणम् ।
अदाहि अविनाशि च शून्यता वज्रमुच्यते ॥

मनुष्यों को निर्वाण लाभ करा देने वाला यान हि वज्रयान है। मन्त्र प्रयोग मात्र से हि निर्वाण लाभ नहीं, वरन वज्र शब्द के द्वारा प्रतिपाद्यवस्तु-समूह के माध्यम से पूर्वोक्त अभिप्रेत वस्तु का लाभ होता है।

वज्र शब्द उन सभी अर्थों का प्रतिपादन करता है, जो कठिन है, अभेद्य है, अच्छेद्य है, अदाह्य एवं अविनाशी है।

प्रसिद्ध वज्र शब्द के द्वारा इन्द्र के अस्त्र का भी बोध होता है। बौद्ध-सम्प्रदाय के पौराणिक-ग्रन्थों में वज्रपाणि का उल्लेख मिलता है।

बौद्ध-भिक्षुक एवं श्रमण के पास जो अस्त्र रहता है, जिसके द्वारा वे

विरोधि शक्तियों के साथ युद्ध करते हैं उसको भी वज्र कहा जाता है।

वर्णनातीत अद्वितीय-शून्य, जो माध्यमिक मत में एकमात्र परमार्थ-तत्त्व है, एवं योगाचार-सिद्धान्त के अनुसार जिसको विज्ञानस्वरूप चरमतत्त्व कहा जाता है - ये दोनों भी वज्र के समान अविनाशी कहे गये हैं।

वज्रयानानुयायियों एवं शाक्तों की जो रहस्यपूर्ण भाषा है, इन दोनों के अनुसार वज्र शब्द के द्वारा पुरुष की प्रजननेन्द्रिय का भी प्रतिपादन किया जाता है। जैसे - पद्म शब्द के द्वारा स्त्री-प्रजननेन्द्रिय का बोध होता है। वज्रयान में अद्वैतदर्शन का भी प्रतिपादन किया गया है :- इसका कथन है कि सभी प्राणी वज्रसत्त्व हैं, यह वज्रसत्त्व ही प्राणिमात्र में एक रूप से अनुगत रहता है। इस विश्लेषण से यही सिद्ध होता है कि वज्रयान अद्वैत-दर्शन, इन्द्रजाल एवं कामशास्त्र का विचित्र-सम्मिश्रण है।

तथागतगुह्यक अथवा अष्टादशपटल इन दो नामों से भी यह ग्रन्थ प्रसिद्ध है। अष्टादशपटल इस नाम से पता चलता है कि इस ग्रन्थ में अट्ठारह परिच्छेद या अध्याय हैं।

परम्पराक्रम में यह स्वीकार किया जाता है कि गुह्यसमाजतन्त्र के पृथक्-पृथक् दो भाग हैं। पूर्वार्द्धकाय और उत्तरार्द्धकाय। इन दो भागों में परवर्ति भाग मूलभूत गुह्यसमाज का अंश नहीं हैं। इस विषय में विश्वसनीय प्रमाण ही उपलब्धि हैं, अतः पूर्वभाग ही गुह्यसमाज के मौलिक अंश के रूप में ग्रहण के योग्य है। परवर्त्ति-बौद्धतान्त्रिक ग्रन्थों के ग्रन्थकारों में ऐकमत्य है कि गुह्यसमाज का आदि में अट्ठारह ही परिच्छेद थे। इसका परवर्ती अंश अनङ्गवज्ररचित प्रज्ञोपायविनिश्चयसिद्धि से प्रक्षिप्त हुआ है। अनङ्गवज्र सातवीं शताब्दी के अन्त में थे।

गुह्यसमाज के रचनाकाल के निर्णय में बौद्धतन्त्रयान के कतिपयविशिष्ट विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रयास किया है। कुछ विद्वानों ने कहा है कि असंग जो तृतीयशताब्दी में वर्तमान थे, वे ही इस ग्रन्थ के रचयिता हैं। परन्तु उनके इस काल्पनिक-सिद्धान्त में निर्भरयोग्य किसी प्रमाण का उल्लेख नहीं मिलता है। अतः जब तक बौद्धमन्त्रयान एवं तन्त्रयान के अन्य अप्रकाशित ग्रन्थ प्रकाश में नहीं आ जाते हैं, तबतक इसके रचनाकाल के सम्बन्ध में नियत-समय

कहना कठिनतम प्रतीत होता है।

गुह्यसमाजतन्त्र ऐसे मार्ग का उद्घाटन करता है जिसका अवलम्बन कर वर्तमान जीवन में ही सम्बोधि-लाभ सम्भव होता है। गुह्यसमाजतन्त्र में इस प्रसंग का स्पष्टरूप में निर्देश किया है कि सम्यक्सम्बोधि-लाभ की कामना करनेवाले धर्मसम्बन्धि कठोर नियम का परिपालन कर भी अपने अभीष्ट लाभ में समर्थ नहीं होते हैं। परन्तु गुह्यसमाजतन्त्र ने घोषणा की है कि अपनी इन्द्रियवृत्ति को चरितार्थ करके इसी जीवन में बोधि लाभ करना वज्रयानियों के लिए अनायास सम्भव होता है। कहा है :-

अपितु भगवन्तः सर्वतथागता अस्मिन् गुह्यसमाजे बुद्धिभूमिं लक्षणलवसुमुहूर्तेनैव निष्पादयन्ति। यदनेकैर्गङ्गाबालूकासमैः कल्पैः घटयन्तो व्यायच्छन्तो बोधिसत्त्वा बोधिं न प्राप्नुवन्ति। तदिहैव जन्मनि गुह्यसमाजाभिरतो बोधिसत्त्वः सर्वतथागतानां बुद्ध इति संज्ञां गच्छति।

दुष्करैर्नियमैस्तीव्रैः सेव्यमानो न सिद्ध्यति।
सर्वकामोपभोगैस्तु सेवयंश्चाशु सिद्ध्यति ॥

गुह्यसमाज ने यथासम्भव सत्वर मोक्ष लाभ करने के प्रवेश द्वार का उद्घाटन किया है। उनकी प्रक्रिया से यौगिक समाधि एवं तान्त्रिक अनुष्ठान के द्वारा मनुष्य अनायास में बुद्धत्व लाभ करने में समर्थ होता है। इस ग्रन्थ में दो प्रकार की सिद्धि बताई गई है। वे हैं सामान्य और उत्तमा। इन दोनों के बल से अलौकिक शक्ति का लाभ होता है, प्रथम प्रकार की सिद्धि में अन्तर्ध्यानादि अलौकिक क्रियायें अन्तर्भूत हैं। द्वितीय प्रकार की सिद्धि प्रथम से ज्यादा उत्कर्षयुक्त है और इसके द्वारा बुद्धत्व लाभ होता है। षडङ्गयोग का अनुष्ठान उत्तमा सिद्धिलाभ का उपाय बताया गया है।

अन्तर्द्धानादयः सिद्धाः सामान्य इति कीर्तिताः।
सिद्धिरुत्तममित्याहुर्बुद्धा बुद्धत्वसाधनम् ॥
सेवाषडङ्गयोगेन कृत्वा साधनमुत्तमम् ।
साधयेदन्यथा नैव जायते सिद्धिरुत्तमा ॥

इस ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में पाँच ध्यानी बुद्धों के एक मण्डल का

उल्लेख है। इसके साथ पाँच स्त्री देवताओं के सम्बन्ध का भी विवरण वहाँ मिलता है। इसमें कहा है कि इन बोधिचित्तवज्रों ने पाँच प्रकार की समाधि का अनुष्ठान कर लिया है। इन पाँच समाधियों का नाम यथाक्रम निर्दिष्ट है- (१) ज्ञानप्रदीपवज्र, (२) सर्वतथागत-समय सम्भववज्र, (३) सर्वतथागत-रत्नसम्भववज्रश्री, (४) महारागसम्भववज्र और (५) अमोघसमय सम्भववज्र। इसके साथ-साथ पूर्वोक्त भगवान् बोधिचित्तवज्र ने समान संख्यक रहस्यपूर्ण मन्त्रवर्णों का उच्चारण भी किया है। (१) वज्रधृक्, (२) जिनजिक्, (३) रत्नधृक्, (४) आरोलिक्, (५) प्रज्ञाधृक्-इसका यथाक्रमानुसारी सम्बन्ध समझना चाहिए। इसका फल यही हुआ कि पूर्वोक्त बोधिचित्तवज्र इन्द्रजाल के समान पाँच प्रकार के पुरुषाकार में परिवर्तित हो जाते हैं। पूर्वोक्त पाँच प्रकार की समाधियों का अनुष्ठान एवं यथाक्रम में पाँच प्रकार के मन्त्रों के उच्चारण के फलस्वरूप यह परिवर्तन भगवान् बोधिचित्तवज्र को हुआ था। उन सब परिवर्तित रूपों का निम्नलिखित रूपों में निर्देश किया जा सकता है। अक्षोभ्य, वैरोचन, रत्नकेतु, लोकेश्वर, महाविद्यापति, अमोघवज्र। इन पाँचों बोधि चित्तवज्रों का विभिन्न दिशाओं में स्थान दिया गया है। जिससे एक मण्डल के रूप में हो सके। पुनः बोधिचित्तवज्र पाँच विभिन्न प्रकार की समाधि में समाहित हो गये एवं प्रत्येक समाधि के अव्यवहित उत्तरकाल में समान संख्यक मन्त्रों का उच्चारण किया। जिसका परिणाम यही हुआ कि एक के बाद और एक पाँच प्रकार की स्त्री देवताओं ने भगवान् बोधिचित्तवज्र के परिवर्तित रूपसे उत्पत्ति लाभ किया। उन सबों का नाम निम्नलिखित है - द्वेषरति, मोहरति, इर्ष्यारति, रागरति, और वज्ररति। ये पाँच प्रकार की स्त्री मूर्तियाँ पूर्वोक्त पाँच प्रकार के योगी अथवा ध्यानी बुद्धो के साथ यथाक्रम में सम्मिलित हो गयीं। इसके बाद भगवान् बोधिचित्तवज्र ने चार प्रकार की समाधियों का अवलम्बन किया एवं प्रत्येक समाधि के बाद यथाक्रम में चार प्रकार के मन्त्रों का उच्चारण किया। वे चार प्रकार के मन्त्र हैं - यमान्तकृत्, प्रज्ञान्तकृत्, पद्मान्तकृत् एवं विघ्नान्तकृत्। इसका फल यही हुआ कि बोधिचित्तवज्र चार दिशाओं का अर्थात् पूर्व दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर द्वार के रक्षक चार देवताओं में परिवर्तित हो गये। इस ग्रन्थ में कहा गया है कि

पूर्वोक्त पाँच प्रकार की समाधि एवं मन्त्रों के द्वारा उत्पादित बुद्ध-समूह पाँच स्कन्ध के प्रतीक हैं, इसके द्वारा पाँच प्रकार के ध्यानी बुद्धों का स्वरूप ग्रन्थकार ने रहस्यपूर्ण ढंग से इंगित किया है। इसके साथ ही इस ग्रन्थ में योग के छह अंग भी उल्लिखित हुए हैं- (१) प्रत्याहार, (२) ध्यान, (३) प्राणायाम, (४) धारणा, (५) अनुस्मृति, (६) समाधि।

प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा।
अनुस्मृतिः समाधिश्च षडङ्गो योग उच्यते ॥

प्रत्याहारादि छह अंगों का स्वरूपविश्लेषण इस ग्रन्थ के श्लोक में किया गया है –

पञ्चस्कन्धाः समासेन पञ्चबुद्धाः प्रकीर्तिताः

गुह्यसमाजतन्त्र में उल्लेख किया गया है कि तथागत-समूह भगवान् वैरोचन के शरीर से उत्पन्न हुए, एवं वे स्त्री देवता में रूपान्तरित हो गये थे। इन सबों का नाम यही है – लोचना, मामकी, पाण्डरवासिनी एवं समय-तारा। कहा है –

स्वबिम्बानि स्त्रीबिम्बान्यभिनिर्माय भगवतो वैरोचनस्य कायादभिनिष्क्रान्ता अभूवन्। तत्र केचिद् बुद्धलोचनाकारेण केचिन् मामक्याकारेण केचित्पाण्डरवासन्याकारेण संस्थिता अभूवन् ।

पृथिवी लोचनाख्याता अब्धातुर्मामकी स्मृता।
पाण्डराख्या भवेत्तेजो वायुस्तारा प्रकीर्तिता ॥

ये पञ्चधातु स्वरूपिणी है। पूर्वोक्त स्त्री देवता समूह ध्यानी बुद्ध की शक्ति है। उन्होंने और भी कहा है कि प्रज्ञाभिषेक भी शक्ति के अभिषेक के साथ एक है। जिसके स्वरूप का विस्तृत विवरण ब्राह्मण सम्प्रदाय में प्रचलित तन्त्र ग्रन्थों में प्रतिपादित किया गया है।

बोधिचित्त का स्वरूप निरूपण गुह्यसमाज के द्वितीय अध्याय का मुख्य प्रतिपाद्य है। बोधिचित्त का स्वरूप-निरूपण महायान सम्प्रदाय के ग्रन्थों में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस ग्रन्थ में कहा गया है कि भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र ने स्वयं वैरोचन, अक्षोभ्य, रत्नकेतु, अमितायु एवं अमोघसिद्धि के साथ क्रमिक विभिन्न प्रकार की समाधियों का अनुष्ठान

किया। उन सबों ने अपनी अनुभूति के अनुसार बोधिचित्त का विलक्षण स्वरूप प्रकाशित किया है। उन लोगों ने जो रहस्योद्घाटन किया है उसका सारांश यही है कि सम्यक्सम्बोधि लाभ करने के बाद सभी वस्तुओं का निरात्म एवं निःस्वभावरूप में ज्ञान होता है। आत्मा करके कोई वस्तु विद्यमान नहीं है, वस्तुओं का अपना कोई स्थिर स्वभाव नहीं है ऐसी स्थिति में सभी पदार्थों की शून्यता ही बोधिचित्त में स्फुरण होती है।

गुह्यसमाज में यौगिक समाधि पर विशेष महत्त्व दिया गया है। इसके द्वारा मनुष्यों की सुप्त मानसिक शक्ति को उद्बोध कराकर ऐन्द्रजालिक कार्य का अनुष्ठान किया जाता है, जो कर्मानुष्ठान साधारण स्थिति में करना असम्भव है। इस ग्रन्थ में विभिन्न प्रकार की समाधियों के अतिरिक्त अनेक प्रकार की मुद्राएँ मण्डलों एवं तान्त्रिक अनुष्ठानों का निरूपण भी किया गया है। जैसा कि –

सर्वभावविगतं स्कन्धधात्वायतनग्राह्यग्राहकवर्जितं धर्मनैरात्म्यसमतया स्वचित्ताद्यनुत्पन्नं शून्यताभावम्।

अनुत्पन्ना इमे भावा न धर्मा न च धर्मता।
आकाशमिव नैरात्म्यमिदं बोधिनयं दृढम् ॥
अभावाः सर्वधर्मास्ते धर्मलक्षणवर्जिताः ।
धर्मनैरात्म्यसम्भूता इदं बोधिनयं दृढम् ॥
अनुत्पन्नेषु धर्मेषु न भावो न च भावना।
आकाशपदयोगेन इति भावः प्रगीयते ॥
प्रकृतिप्रभास्वराधर्माः सुविशुद्धाः नभः समाः ।
न बोधिर्नाभिसमयमिदं बोधिनयं दृढम्॥
अहो बुद्ध अहो धर्म अहो संघस्य देशना।
शुद्धतत्त्वार्थ शुद्धार्थ बोधिचित्त नमोऽस्तुते ॥
समन्तभद्रसत्त्वार्थ बोधिचित्त प्रवर्तक ।
बोधिचर्य महावज्र बोधिचित्त नमोऽस्तुते ॥
धर्मनैरात्म्यसम्भूत बुद्धबोधिप्रपूरक।
निर्विकल्प निरालम्ब बोधिचित्त नमोऽस्तुते ॥

चित्तं तथागतं शुद्धं कायवाक्चित्तवज्रधृक् ।
बुद्धबोधिप्रदाता च बोधिचित्त नमोऽतुते ॥

इस ग्रन्थ के पञ्चम अध्याय में धर्मसम्बन्धी अनुष्ठान के ऊपर विशेष महत्त्व दिया है और उसका पूर्ण विश्लेषण भी प्रस्तुत किया है। इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मोक्ष का द्वार सभी व्यक्तियों के लिए मुक्त है। इसमें जाति आदि निबन्धन किसी प्रकार की बाधाएँ नहीं हैं। आध्यात्मिक क्षेत्र में किसी प्रकार की अभ्युन्नति नहीं रहने पर भी वज्रयान मार्ग में प्रवेश करने में किसी प्रकार की बाधा नहीं है। इसमें स्पष्टरूप से कहा गया है कि योग तन्त्र उपाय के द्वारा सम्बोधि लाभ में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होती है। भगवान् ने स्वयं एक अलौकिक उपाय अवलम्बन कर इस सत्य को अविश्वासि बोधिसत्त्वों के चित्त में सुदृढ रूप से स्थापित किया था।

इसके नवम पटल में कहा है कि बोधिसत्त्वों ने एक स्वर से नीति विगर्हित अनुष्ठानों के द्वारा मन्त्र सिद्धि एवं सम्बोधि लाभ होता है, इसका प्रतिवाद किया है। स्वयं भगवान् ने बोधिसत्त्वों को उक्त मत ग्रहण में काठिन्य समझ कर उनके द्वारा प्रकाशित मार्ग का जो अन्तर्निहित रहस्य है उसका निम्नोद्धृत उक्ति के द्वारा प्रकाश किया है –

मा कुलपुत्रा इमां हीनसंज्ञां जुगुप्सितसंज्ञां चोत्पादयथ। तत् कस्माद्धेतोः। रागचर्या कुलपुत्रा यदुत बोधिसत्त्वचर्या यदुत अग्रचर्या यथा अपि नाम कुलपुत्रा आकाशं सर्वत्रानुगतमाकाशानुगतानि सर्वधर्माणि। तानि न कामधातुस्थितानि न रूपधातुस्थितानि नारूपधातुस्थितानि न चतुर्महाभूतास्थितानि। एवमेव कुलपुत्राः सर्वधर्मा अनुगन्तव्याः। इदमर्थवशं विज्ञाय सर्वतथागताः सर्वसत्त्वानामाशयं विज्ञाय ततो धर्मं देशयन्ति। एवमेव कुलपुत्रा आकाशधातुपदनिरुक्त्या ते तथागतसमया अनुगन्तव्याः। तद्यथा अपि नाम कुलपुत्राः काण्डं च मथनीयं च पुरुषहस्तव्यायामं च प्रतीत्य धूमः प्रादुर्भवति अग्निमभिवर्तयति स चाग्निर्न काण्डस्थितो न मथनीयस्थितो न पुरुषहस्तव्यायाम स्थितः। एवमेव कुलपुत्राः सर्वतथागतवज्रसमया अनुगन्तव्याः। गमनागमनार्थैरिति।

इस ग्रन्थ में भिन्न-भिन्न बौद्ध देव देवियों का विचित्र आकार के साथ

उल्लेख किया गया है। यहाँ स्त्री देवताओं का उल्लेख किया है, एवं चार द्वार के रक्षक चार देवताओं का भी उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त अपराजित, हयग्रीव, वज्रामृत, टक्किराज, महाबल, नीलदण्ड, वज्राचल, एकाक्षर, शुम्भ, जम्भल, चुन्दवज्री, मञ्जुश्री, वज्रैकजटा इसी प्रकार अन्य देवी-देवताओं का उल्लेख मिलता है। इसमें विशेष ध्यान देने योग्य बात यही है कि वज्रसत्त्व एवं वज्रधर को एक विशेष स्थान दिया गया है। जो शून्यता के अधिष्ठातृदेवता के रूप में विद्यमान है। इस प्रसंग में यह उल्लेख करना उचित होगा कि ब्राह्मणों में प्रचलित देवता जैसे रुद्र, शिव, विष्णु, इन्द्र आदि का साधारण रूप में उल्लेख किया गया है।

गुह्यसमाजतन्त्र को सर्वप्रथम समालोचनात्मक दृष्टिकोण से डा० विनयतोष भट्टाचार्य ने गायकवाड ओरियन्टल सिरीज के ५३ संख्यक ग्रन्थ में सन् १९३१ में प्रकाशित किया था। इसके बाद विद्वान् श्री शीतांशुशेखर बागची ने मिथिला विद्यापीठ, दरभंगा से सन् १९६५ में प्रकाशित किया था। हम उन दोनों के आभारी हैं।

इस ग्रन्थ के सम्पादन एवं हिन्दी अनुवाद के क्रम में नेपाल में उपलब्ध विभिन्न हस्तलिखित ग्रन्थों का भी अवलोकन किया गया है और हम लोगों के पास सुरक्षित हस्त लिखित ग्रन्थों का भी उपयोग किया गया है। आशा है पाठकगण इस हिन्दी अनुवाद से लाभान्वित होंगे।

अन्त में, अत्यन्त तत्परता से इसे प्रकाशित करने के लिए इण्डिका बुक्स के निर्देशक श्री दिलीप कुमार जी को हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

– सम्पादक एवं अनुवादक

ॐ नमः वज्रसत्त्वाय

अथ श्रीगुह्यसमाजतन्त्रम्

प्रथमः पटलः

एवं मया श्रुतम्। एकस्मिन् समये भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तहृदयवज्रयोषिद्भगेषु विजहार। अनभिलाप्यानभिलाप्यैः सर्वबुद्धक्षेत्रसुमेरुपरमाणुरजःसमैर्बोधिसत्त्वैर्महासत्त्वैः। तद्यथा। समयवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। कायवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। वाग्वज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। चित्तवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। समाधिवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। जपवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। पृथिवीवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। अब्वज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। तेजोवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। वायुवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। आकाशवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। रूपवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। शब्दवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। गन्धवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। रसवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। स्पर्शवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन। धर्मधातुवज्रेण च नाम बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन।

एवंप्रमुखैरनभिलाप्यानभिलाप्यैः

सर्वबुद्धक्षेत्रसुमेरुपरमाणुरजःसमैर्बोधिसत्त्वैर्महासत्त्वै-
राकाशधातुसमाध्मातैश्च तथागतैः। तद्यथा। अक्षोभ्यवज्रेण
च नाम तथागतेन। वैरोचनवज्रेण च नाम तथागतेन।

रत्नकेतुवज्रेण च नाम तथागतेन। अमितवज्रेण च नाम तथागतेन। अमोघवज्रेण च नाम तथागतेन।

एवं प्रमुखैः सर्वाकाशधातुसमाध्मातैश्च तथागतैः। तद्यथा।
अपि नाम तिलबिम्बमिव परिपूर्णः सर्वाकाशधातुः
सर्वतथागतैः संदृश्यते स्म।

अथ भगवान् महावैरोचनस्तथागतः सर्वतथागतमहारागवज्रं नाम समाधिं समापन्नः तं सर्वतथागतव्यूहं स्वकायवाक्चित्तवज्रेषु प्रवेशयामास। अथ ते सर्वतथागता भगवतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतेः परितोषणार्थं स्वबिम्बानि स्त्रीबिम्बान्यभिनिर्माय भगवतो वैरोचनस्य कायादभिनिष्क्रान्ता अभूवन्। तत्र केचित् बुद्धलोचनाकारेण केचित् मामक्याकारेण केचित् पाण्डरवासिन्याकारेण केचित् समयताराकारेण संस्थिता अभूवन्। तत्र केचित् रूपस्वभावाकारेण केचित् शब्दस्वभावाकारेण केचित् गन्धस्वभावाकारेण केचित् स्पर्शस्वभावाकारेण संस्थिता अभूवन्।

अथ खलु अक्षोभ्यस्तथागतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तहृदयवज्रयोषिद्भगेषुचतुरस्रं विरजस्कं महासमयमण्डलमधिष्ठापयामास।

स्वच्छं च तत्स्वभावं च नानारूपं समन्ततः।
बुद्धमग्नि समाकीर्णं स्फुलिङ्गगहनज्वलम्।
स्वच्छादिमण्डलैर्युक्तं सर्वतथागतं पुरम् ॥ १ ॥

अनुवाद

मैंने ऐसा सुना है। किसी एक समय भगवान् ने सभी तथागतों के काय, वाक्, चित्त, हृदयरूपी वज्रस्त्रियों के भगों में विहार किया।

व्याख्या

यहाँ 'एवम्' यह पद सभी तन्त्रों के अर्थों का परिसूचक निपात है। 'मया' = मैंने इस पद के द्वारा साक्षात् मैंने ही सुना है, परम्परा से अथवा अन्य व्यक्ति से नहीं सुना ऐसा अर्थ है। एकस्मिन् समये एक किसी समय में सुना है। और किसी समय और ही कुछ सुना। अथवा और समय में यह नहीं सुना अथवा एक समय में एक काल में, एक क्षण में वे तीन विशेषण उनकी बहुविज्ञता, तन्त्रदुर्लभता और प्रज्ञा का उत्कर्ष का द्योतन करते हैं। कहाँ किस प्रकार और किसके साथ सुना है इसी के लिए कहा भगवान् के मुख से ही सुना है। स्थान सम्पत्ति और भाग्य सम्पत्ति तथा समस्त विघ्नों के नाशक होने से भी भगवान् हैं। सर्वतथागत इस शब्द से स्थान सम्पत्ति दिखाया गया है। 'तथता' में जाने

के कारण वे तथागत हैं। काय वाक् चित्त – हृदय ही महावज्रधर है। उसकी वज्रयोषित् (स्त्री) प्रज्ञा है। वही प्रज्ञा ही भग है। उसी भग में अर्थात् क्लेशों के भञ्जन के कारण ही भगवान् ने विहार किया ऐसा कहा गया है।

यहाँ पर आनन्द ही समन्तभद्र-बोधिसत्त्व या वज्रप्राणि हैं और कोई दूसरा नहीं। अन्यथा ८४ हजार सूत्रादिपदों को जिनमें धर्मस्कन्ध वज्रयान आदि तथागत से सुनकर जितना है उतना ही कौन एक ही बार ग्रहण कर सकता है। इसीलिए यहाँ सङ्गीतिकार आनन्द ही हैं।

यहाँ 'एवं' ये दो अक्षर प्रज्ञा और उपाय के वाचक हैं। क्योंकि देवेन्द्र परिपृचछा में भगवान् ने उनके प्रश्नों को सुनकर सबसे पहले 'एवम्' यही कहा था। और कहा –

'ए' कार माता है। 'व' कार पिता है। बिन्दु दोनों का योग है। वही परम अद्भुत भी है। 'ए' कार पद्म है। 'व' कार वज्र है। बिन्दु उसमें बीज है। जिससे सारा जगत् उतपन्न होता है। 'ए' कार प्रज्ञा है 'व' कार सुरत है। बिन्दु अनाहत तत्त्व है। उससे अक्षर उत्पन्न होते हैं ॥

उसी प्रकार 'मया' भी दो अक्षर हैं। इसी 'मया' से सद् धर्म का और सर्वज्ञ का निर्देशन किया गया है। इसी से सद्धर्म को ही गुरु बनाना चाहिए।

सर्वतथागत = पञ्चस्कन्ध हैं। उनसे युक्त ही वाक्, काय और चित्त हैं। हृदय वज्र महासुख है। स्त्रियों में जो मुद्रा है वह संस्कार पूर्ण है। भग – सुसंस्कृत कमल है। विजाहर अर्थात् बिन्दुरूप से भगवान् वज्रधृक् स्थित हो गए।

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिः सर्वतथागतमण्डलमध्ये प्रतिष्ठापयामास। अथ खलु अभोभ्यस्तथागतः रत्नकेतुस्तथागतः अमितायुस्तथागतः अमोघसिद्धिस्तथागतः वैरोचनस्तथागतः बोधिचित्तवज्रस्य तथागतस्य हृदये विजहार।

अथ भगवान् बोधिचित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागताभिभवनवज्रं नाम समाधिं समापन्नः। समनन्तरसमापन्नस्य च सर्वतथागताधिपतेः अथायं सर्वाकाशधातुः सर्वतथागतवज्रमयः संस्थितोऽभूत्। अथ यावन्तः सर्वाकाशधातुसंस्थिताः सर्वसत्त्वाः सर्वे च तेन वज्रसत्त्वाधिष्ठानेन

सर्वतथागतसुखसौमनस्यलाभिनोऽभूवन्।

अथ भगवान्बोधिचित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रसमयोद्भववज्रं नाम समाधिं समापद्येमां महाविद्यापुरुषमूर्ति सर्वतथागतसत्त्वाधिष्ठानमधिष्ठापयामास। समनन्तराधिष्ठितमात्रे स एव भगवान् बोधिचित्तवज्रस्तथागतस्त्रिमुखाकारेण सर्वतथागतैः सन्दृश्यते स्म।

अथ अक्षोभ्यप्रमुखाः सर्वतथागता भगवतो बोधिचित्तवज्रस्य हृदयादभिनिष्क्रम्य इदमुदानमुदानयामासुः -

अहो हि सर्वबुद्धानां बोधिचित्तप्रवर्तनम्।
सर्वतथागतं गुह्यं अप्रतर्क्यमनाविलम् ॥ २ ॥ इति ॥

अनुवाद

उस समय भगवान् अनगिनत एवं शब्दों के द्वारा वर्णनातीत, असंख्य - बुद्ध क्षेत्रों में अवस्थित सुमेरु पर्वत के परमाणु के बराबर बोधिसत्त्व एवं महासत्त्वों के साथ विहार कर रहे थे। उनमें से कुल मूलभूत बोधिसत्त्व एवं महासत्त्वों के नाम निम्न प्रकार हैं - समयवज्रनामक बोधिसत्त्व महासत्त्व, कायवज्र, वाग्वज्र, चित्तवज्र, समाधिवज्र, जपवज्र, पृथिवीवज्र, अप् (जल) वज्र, तेजोवज्र, वायुवज्र, आकाशवज्र, रूपवज्र, शब्दवज्र, गन्धवज्र, रसवज्र, स्पर्शवज्र और धर्मधातु नामक बोधिसत्त्व एवं महासत्त्वों के नाथ भगवान् विहार कर रहे थे।

यहाँ समयवज्र अमोघसिद्धि हैं। कायवज्र क्षितिगर्भ हैं। वाग्वज्र लोकेश्वर हैं। चित्तवज्र वज्रपाणि हैं। समाधिवज्र आकाशगर्भ हैं। जयवज्र में मैत्रेय हैं। पृथिवी वज्र लोचना हैं। अप् वज्र - मामकी हैं। तेजोवज्र पाण्डरवासिनी हैं। वायुवज्र समयतारा हैं। आकाश वज्र मञ्जुश्रीः। रूपवज्र रूपविषय हैं। शब्द वज्र- गन्ध-रस-स्पर्श वज्र हैं। धर्मधातु वज्र समन्तभद्र हैं। और केवल बोधिसत्त्व ही नहीं थे विहार में किन्तु तथागत भी थे। ॥ २ ॥

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः पुनः समाजमागम्य भगवन्तं बोधिचित्तवज्रं सर्वतथागतपूजास्फरणसमयतत्त्वरत्नमेघैः सम्पूज्य प्रणिपत्यैवमाहुः -

भाषस्व भगवन् तत्त्वं वज्रसारसमुच्चयं।
सर्वताथागतं गुह्यं समाजं गुह्यसम्भवम् ॥ ३ ॥ इति ॥

अथ भगवान् बोधिचित्तवज्रस्तथागतस्तान् सर्वतथागतान् एवमाह। साधु साधु भगवन्तः सर्वतथागताः। किन्तु सर्वतथागतानामपि संशयकरोऽयं कुतोऽन्येषां बोधिसत्त्वानामिति।

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः आश्चर्यप्राप्ताः अद्भुतप्राप्ताः। सर्वतथागतसंशयच्छेत्तारं भगवन्तं सर्वतथागतस्वामिनं पप्रच्छुः। यद्भगवानेवंगुणविशिष्टेऽपि सर्वतथागतपर्षदि सर्वतथागतकायवाक्चित्तगुह्यं निर्देष्टुं नोत्सहते तद्भगवान् सर्वतथागताधिष्ठानं कृत्वा सर्वतथागतवज्रसमयसम्भवपदैः सर्वतथागतानां सुखसौमनस्यानुभावनार्थं यावत्सर्वतथागतज्ञानाभिज्ञावाप्तिफलहेतोः संप्रकाशयत्विति।

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागताध्येषणां विदित्वा ज्ञानप्रदीपवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं द्वेषकुलपरमसारहृदयंस्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ वज्रधृक् ॥ अथास्मिन् भाषितमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः अक्षोभ्यमहामुद्रासंयोगपरमपदैः कृष्णसितरक्ताकारेण सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतसमयसम्भववज्रं नाम समाधिं समापद्येदं मोहकुलपरमसारहृदयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ जिनजिक् ॥ अथास्मिन् भाषितमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषो वैरोचनमहामुद्रासंयोगपरमपदैः सितकृष्णरक्ताकारेण सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्य पुरतो निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतरत्नसम्भववज्रश्रियं नाम समाधिं समापद्येदं चिन्तामणिकुलपरमसारहृदयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास। रत्नधृक्। अथास्मिन् भाषितमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषो रत्नकेतुमहामुद्रासंयोगपरमपदैः

पीतसितकृष्णाकारेण सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्य दक्षिणे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतमहारागसम्भववज्रंनाम समाधिंसमापद्येदं वज्ररागकुल परमसारहृदयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ आरोलिक् ॥ अथास्मिन् भाषितमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषो लोकेश्वरमहाविद्याधिपतिमहामुद्रासंयोगपरमपदै रक्तसितकृष्णाकारेण सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्य पृष्ठतो निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतामोघसमयसम्भववज्रं नाम समाधिं समापद्येदं समयाकर्षणकुलपरमसारहृदयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ प्रज्ञाधृक् ॥ अथास्मिन् भाषितमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषोऽमोघवज्रमहामुद्रासंयोगपरमपदैः हरितसितकृष्णाकारेण सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्य उत्तरे निषीदयामास।

द्वेषमोहस्तथारागश्चिन्तामणिसमयस्तथा।
कुला ह्येते तु वै पञ्च काममोक्षप्रसाधकाः ॥ ४ ॥ इति ॥

अथ भगवान् सर्वतथागत वज्र धरानुरागणसमयं नाम समाधिं समापद्येमां सर्ववज्रधराग्रमहिषीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ द्वेषरति ॥ अथास्यां विनिःसृतमात्रायां स एवं भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्या पुरुषः स्त्रीरूपधरो भूत्वा [सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रे] निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतानुरागणवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां सर्वतथागताग्रमहिषीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ मोहरति ॥ अथास्यां विनिःसृतमात्रायां स एवं भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः स्त्रीरूपधरो भूत्वा पूर्वकोणे निषीदयामास।

[अथ भगवान् सर्वतथागतरत्नधरानुरागणवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां सर्वेर्ष्याधराग्रमहिषीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ ईर्ष्यारति ॥ अथास्यां विनिःसृतमात्रायां स एव भगवान्

सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः स्त्रीरूपधरो भूत्वा दक्षिणकोणे निषीदयामास]।

अथ भगवान् सर्वतथागतरागधरानुरागणवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां सर्वरागधराग्रमहिषीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ रागरति ॥ अथास्यां विनिःसृतमात्रायां स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः स्त्रीरूपधरो भूत्वा पश्चिमकोणे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविसम्वादनवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां सर्वतथागतप्रज्ञाधरग्रमहिषीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास। ॥ वज्ररति ॥ अथास्यां विनिःसृतमात्रायां स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः स्त्रीरूपधरो भूत्वा उत्तरकोणे निषीदयामास।

अथ भगवान् महावैरोचनवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वतथागतमण्डलाधिष्ठानं नाम महाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ यमान्तकृत् ॥ अथास्मिन् विनिःसृतमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः सर्वतथागतसन्त्रासनाकारेण पूर्वद्वारे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागताभिसम्बोधि वज्रं नाम समाधिं समापद्येमं सर्वतथागतमण्डलाधिष्ठानं नाम महाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ प्रज्ञान्तकृत् ॥ अथास्मिन् विनिःसृतमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषो वज्रसमयसन्त्रासनाकारेण दक्षिणद्वारे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतधर्मवशङ्करिं नाम समाधिं समापद्येमं सर्वतथागतरागधर मण्डलाधिष्ठानं नाम महाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ पद्मान्तकृत् ॥ अथास्मिन् विनिःसृतमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः सर्वतथागतवागाकारेण पश्चिमद्वारे निषीदयामास।

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं

सर्वतथागतकायवाक्चित्तमण्डलाधिष्ठानं नाम महाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ विघ्नान्तकृत् ॥ अथास्मिन् विनिःसृतमात्रे स एव भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तविद्यापुरुषः सर्वतथागतकायवाक्चित्ताकारेण उत्तरद्वारे निषीदयामास।

सर्वतथागतकायवाक्चित्तसम्भाषणमण्डलसमयसत्त्वाः।

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजेसर्वतथागतसमाधिमण्डलाधिष्ठानपटलः प्रथमोऽध्यायः।

अनुवाद

इस प्रकार के प्रमुख बोधिसत्त्व एवं महासत्त्व जिनके विषय में कुछ कहना और गणना करना संभव नहीं हैं, वे इतने थे जैसे सुमेरु पर्वत के जितने परमाणु हो सकते हैं अथवा समग्र आकाश में जितने धूलकण हो सकते हैं उतने बोधिसत्त्व एवं महासत्त्व विराजमान थे। जैसे कि उस अवसर पर अक्षोभ्य नामक तथागत, वैरोचनवज्रतथागत, रत्नकेतुवज्रतथागत, अमितवज्रतथागत और अमोघवज्र तथागत (तथागत के रूप में) भी उपस्थित थे।

इन प्रमुख तथागतों के साथ साथ समग्र आकाश को ढकने वाले तथागत भी थे। जैसा कि यहाँ तक कि समग्र आकाश मण्डल मानो सरसों के कणों से जैसे ढक गया हो वैसे ही तथागतों से आकाश ढका हुआ जैसा दिखता था।

[उस समय भगवान् ने अपने शरीर को विस्फारित करके (फैलाकर) मण्डलात्मक रूप में चक्राकार बनाकर उसके बीच में कूटागार में बैठे थे ज़िससे सभी उनको देख सकें और सुन सकें]

अब इसके बाद महावैरोचन भगवान् तथागत सर्वतथागत महाराग वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट हो गये। उन्हें सर्वतथागत व्यूह रूप स्वकायवाक्चित्तवज्रों में भगवान् ने प्रवेश कराया।

अब वे सभी तथागत सर्वतथागत-काय-वाक्-चित्तवज्राधिपति भगवान् के परितोषण के लिए अपने विम्ब और स्त्रीविम्बों का निर्माण करके भगवान् वैरोचन के शरीर से बाहर निकल गये। उनमें कुछ बुद्ध लोचनाकार में दिखे, कुछ मामकी के आकार धारण करके खड़े हो गये, कुछ अन्य पाण्डरवासिनी

के रूप में और कुछ समय–तारा के आकार में परिणत होकर खड़े हुए। अन्य कुछ रूप स्वभाव के आकार में, अन्य–शब्द स्वभाव–आकार में, कुछ गन्ध स्वभावाकार में और कुछ स्पर्श–स्वभावाकार के रूप में परिणत हो गए।

इसके बाद अक्षोभ्य तथागत ने सर्वतथागत काय–वाक्–चित्त–हृदय वज्रयोषिद् भगों में चारों ओर अतिस्व%छ महासमय मण्डल का निर्माण किया।

[वह अति स्वच्छ नाना रूपों से युक्त बुद्धरूप अग्नि जो चारों ओर से समाकीर्ण और उसके विस्पुलिङ्गों से सभी ओर घिरा हुआ था साथ ही वह तथागत नगर जैसा था जिसमें अनेक पवित्र मण्डल बने हुए थे]

इसके बाद भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्राधिपति, सर्वतथागत मण्डल में प्रतिष्ठापित हुए। इसके बाद अक्षोभ्य तथागत, फिर रत्नकेतु तथागत, फिर अमितायु तथागत, फिर अमोघसिद्धि तथागत और फिर वैरोचन तथागत ने बोधिचित्त वज्र तथागत के हृदय में विहार किया।

इसके बाद भगवान् बोधिचित्त वज्र नामक तथागत ने सर्वतथागतअभिभवनवज्र नामक समाधि में प्रवेश किया। जब इन्होंने समाधि में प्रवेश किया उसके तत्काल बाद सर्वतथागत अधिपति के द्वारा यह विशाल आकाश धातु सर्वतथागतवज्रमय हो गया। इसके बाद आकाश धातु में अवस्थित जितने भी प्राणी थे और जो भी बोधिसत्त्व या महासत्त्व थे उस वज्रसत्त्व के अधिष्ठान से सर्वतथागत सुख–सौमनस्य लाभी अर्थात् आनन्द में संनिहित हो गये। आनन्दित हो गये।

[अतीत, अनागत एवं वर्तमान तथागतों का चन्द्र वज्रादिक्रम से एकीकरण ही सर्वतथागताभिवन है। उस समय सभी वज्रसत्त्व समाधि में निमग्न हो गये थे। सर्वतथागत स्कन्धादिस्वभाव हैं। सर्वाकाशधातु में कहने का तात्पर्य है ६२ हजार नाडियाँ हैं वे सब एकत्र होकर सर्वतथागत के वज्र हो जाते हैं वही उपाय ज्ञान भी है। सभी सत्त्व का अर्थ है स्थाणु आदि पदार्थ। वज्र सत्त्वाधिष्ठान अर्थात् उपायज्ञान के उदय से। पञ्चस्कन्ध स्वभाव के कारण सभी तथागत पदार्थ के लिए ही एकीकृत होते हैं। वही अभेद्य वज्र कहलाता है]

इसके बाद भगवान् बोधिचित्त नामक वज्रतथागत ने सर्वतथागत काय-वाक्-चित्त वज्र समयोद्भव वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके यह महाविद्यापुरुष मूर्ति को सर्वतथागत सत्त्वों के अधिष्ठान में प्रतिष्ठापित किया। उनके अधिष्ठित होते ही वही भगवान् बोधिचित्त वज्र तथागत तीन मुखों के आकार में दिखे और सभी ने उन्हें उसी तीनमुखों के स्वरूप में ही देखा।

[महाविद्या परमार्थ सत्य है। पुरुष संवृति सत्य है]

इसके बाद अक्षोभ्य आदि प्रमुख तथागत भगवान् बोधिचित्त वज्र के हृदय से निकलकर यह गाथा कहने लगे - आश्चर्य है सर्व तथागतों का बोधिचित्त प्रवर्तन!! क्योंकि सभी तथागत गुह्य तर्कातीत हैं और दोषरहित भी हैं।

इसके बाद भगवान् सर्वतथागतों ने फिर समीप में आकर भगवान् बोधिचित्त वज्र को सर्वतथागत के पूजा का विस्तृत सिद्धान्त तत्त्व रूप रत्नों के द्वारा पूजा करके नमस्कार करते हुए यों कहा - वज्रसार से बने हुए जो तत्त्व हैं हे भगवन् कृपया आप कहें। वह सर्वतथागत गुह्यसमाज है और गुह्य से ही निकला है।

[चन्द्र और पद्म का योग ही समाज है। अथवा प्रज्ञा और उपाय का योग ही समाज है। संवृति और परमार्थ सत्यों का मिलन ही समाज है। गुह्य प्रभास्वर तत्त्व है। उससे निष्पन्न अद्वय ज्ञानात्मक महावज्रधर ही गुह्य समाज है]

अब, इसके बाद भगवान् बोधिचित्त वज्र तथागत ने उन सर्वतथागतों को यों कहा - बहुत अच्छा साधु-साधु भगवान् तथागतों! किन्तु सर्व तथागतों के लिए भी यह निश्चय ही सन्देहास्पद है तब क्या कहना और बोधिसत्त्वों के विषय में।

[यहाँ पर तथागत रत्नपुद्गल आदि हैं जो परिपक्वकुशलमूल हैं, शास्त्रों में प्रवीण हैं। बुद्धत्व प्राप्ति की कामना वाले हैं और नियत गोत्र हैं। उनके लिए भी गुरु के बताये बिना समाज का अर्थ कठिन है। फिर अन्य चन्दनादि पुद्गलों के विषय में क्या कहा जाये जो परिपक्व कुशलमूल होंते हुए भी हीनाधिमुक्ति हैं और यह दुर्गाह्य होने से उनके लिए समझना कठिन है]।

अब सभी सर्वतथागत भगवान् आश्चर्य प्राप्त हुए और अद्भुत अवस्था को प्राप्त हो गए। सर्वतथागतों ने संशय - नाश करने वाले सर्वतथागत स्वामी को

पूछा – इस प्रकार के विशिष्टगुण से युक्त सर्वतथागत परिषद् में सर्व तथागत के कायवाक्चित्त गुह्य को निर्देश करने में उत्साहित नहीं हैं तो तब भगवान् सर्वतथागत का अधिष्ठान करके सर्वतथागतवज्र समय सम्भव पदों के द्वारा सर्वतथागतों का सुखसौमनस्य के अनुभवार्थ जब तक सर्वतथागत ज्ञान के प्राप्तिरूप फल के कारण को भगवान् इस प्रकार प्रकाशन करें जिससे सभी बोधिसत्त्व महासत्त्व जान सकें।

अब भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्र तथागत ने सभी तथागतों के अध्येषणा = प्रार्थना को स्वीकार करते हुए ज्ञान प्रदीप वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके यह द्वेषकुल–परम सारहृदय को अपने काय–वाक् चित्त वज्रों से बाहर निष्काशन किया। वह है – वज्रधृक् ।

अब उनके कहने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत के काय–वाक् चित्त विद्या पुरुष ने अक्षोभ्य रूप महामुद्राके संयोग से उत्पन्न हुए परमपदों के द्वारा कृष्ण, सफेद और लाल आकार से सर्वतथागत कायवाक्चित्त रूपी वज्र का सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र में रख दिया।

[इस प्रकार की प्रार्थना से प्रसन्नचित्त भगवान् ने उन सभी के अभिषेक के लिए ज्ञान मण्डल का निर्माण किया। ज्ञान प्रदीप अक्षोभ्य हैं। अभेद्य होने से वज्र है। प्रभा स्वर समाधि से बाहर निकलकर पञ्च क्लेशों से व्याप्त सत्त्व धातु को देखकर क्लेशों के स्वभावों का ज्ञान ही बोधि है। वही स्वभाववाला मैं हूँ यह समझ कर शिष्यों के देशों के नाश के लिए यह देवकुल परम सार हृदय अपने काय–वाक–चित्त वज्रों से भगवान् ने बाहर निकाला। महाकरुणा का उपाय ही क्रोध है वही द्वेष भी। उसका कुल द्वेष कुल है। आकांक्षा के अनुरूप फलप्रदान करने के कारण ही परमसार = हृदयमन्त्र है। आन्तरिक उत्कट इच्छा है। सत्यद्वय रूप ज्ञान वज्रज्ञान है। उसको धारण करने से भी वज्रधर हैं। महावज्रधर के कायवाक्चित्तरूप वज्र में भगवान् बैठ गये यही काय ---- निषीदयामास का अर्थ है।]

इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागतसमय सम्भव वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस मोह कुल परमसार हृदय को स्वकाय–वाक्चित्तवज्रों से बाहर निकाला। वह है – जिनजिक् अब उनके बोलने मात्र से ही वे ही

भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्त विद्या पुरुष ने वैरोचन महामुद्रा के संयोगजन्य परमपदों से सफेद-काला-रक्त आकार द्वारा सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्र के सामने बिठाने का काम किया।

[यहाँ पर उत्सर्ग मण्डल का निर्देश करते हैं। मूढ प्राणियों के विशोधन के लिए शान्त रस ही मोह है वही परमपद है वही उनका कुल है। विजय में तत्पर जिन ही मार = काम है। उनको १२ आकार युक्त धर्मचक्र से जीतने के कारण ही वे जिनजिक् हैं। वज्रोपक्षसमाधि से चार मारों को जितने वाले सभी जिनजिक् हैं। वैरोचन मुद्रा के साथ एकाकार होकर सामने भगवान् को ही देखते हुए बैठ गए यही इसका तात्पर्य है।]

इसके बाद भगवान् ने सर्व तथागत रत्न सम्भव वज्रश्री नामक समाधि में प्रविष्ट होकर चिन्तामणि कुल परमसार हृदय को अपने कायवाक्चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे रत्नधृक हैं। अब इनके बोलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त विद्या पुरुष ने रत्नकेतु महामुद्रा संयोगजन्य परमपदों से पीला सफेद और काले आकार से युक्त होकर सर्वतथागत कायवाक्चित्त के दक्षिण में बैठ गए।

[सभी तथागतों का रत्न संवृति बोधिचित्त है उसी से उत्पन्न होने से रत्नसंभव है। सर्व तथागतों का रत्न परमार्थ बोधिचित्त है उसी से उत्पन्न होने से रत्नसंभव वज्रश्री अविनश्वर श्री = ऐश्वर्य है। सभी इच्छाओं को पूरा करने से भी चिन्तामणि है। सभी इच्छाओं को पूरा करने वाले रत्न धारण करने से भी रत्नधृक् कहा गया है। भूत कोटि रत्न के धारण करने से भी रत्नधृक् हैं। धन-मद आदि द्वारा गर्वित प्राणियों के लिए दान में बुद्धासन बनाकर मान के विशुद्धि पद में स्थापित करके भगवान् के दक्षिण की ओर बैठ गए यही भाव है]।

अब इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागत महाराग सम्भव वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके वज्र राग कुल परमसार हृदय को अपने काय-वाक्चित्त वज्र से उत्पन्न किया। वह - आरोलिक् है। अब उनके बोलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्त विद्या पुरुष ने लोकेश्वर महाविद्या के अधिपति रूप महामुद्रा के संयग से परमपदों के द्वारा लाल-सफेद कृष्ण आकार से

सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र के पीछे की ओर बैठ गये।

[यहाँ पर रागरति ही प्राणियों के राग से राग नाश के लिए अमिताभ योग दिखाने के लिए यह परिच्छेद आरंभ करते हैं। सभी तथागतों का महाराग ही परमानन्द है। उससे निष्पन्न बोधिचित्त है उसी से अमिताभ की उत्पत्ति होती है। सभी तथागतोंका महाराग ही प्रभास्वर है उसी से उद्भुत अमिताभ हैं। आ–चारों ओर से रो = संसार उससे लिक् = जाता है इसी से आरोलिक् कहा गया है। रो = तीन ज्ञान भी है। उसी से परमार्थ सत्य में गए हैं ऐसा अर्थ है]।

इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागत अमोघ समय सम्भववज्र नामक समाधि में प्रवेश करके समयाकर्षण कुल परमसार हृदय को अपने कायवाक्चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वह प्रज्ञाधृक् हैं। अब इनके बोलने मात्र से उन्हीं भगवान् ने सर्वतथागतकायवाक्चित्त विद्या पुरुष ने अमोघवज्रमहामुद्रा के संयोगजन्य परमपदों से हरा-श्वेत-कृष्ण आकार द्वारा सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र के उत्तर में बैठ गये।

[सर्वतथागत अमोघ = अमोघसिद्धि हैं। वही समय = कृत्य अनुष्ठान लक्षण सकल जगदर्थ सम्पादन द्वारा अलङ्घनीय होने से। ईर्ष्या – क्लेश विशोधन के द्वारा आकृष्ट करके समयभ्रंशादि दोष के नाश के लिए जो कुल है वही समयाकर्षण कुल है। समय = सूक्ष्मधातु है। उस उपाय से ज्ञान को आकृष्ट करके परमानन्द का उत्पादन करके परिशोधन कुल ही समयाकर्षण कुल है। प्रविचय लक्षण ही प्रज्ञा है। उसको धारण करने से प्रज्ञाधृक् कहलाता है। प्रज्ञा ही चन्द्रामास है उसको सूक्ष्मधातु से धारण करने से भी प्रज्ञाधृक् कहलाते हैं।]

द्वेष कुल, मोहकुल, रागकुल, चिन्तामणि कुल तथा समय कुल वे सभी पाँच कुल काम और मोक्ष को देने वाले हैं। ऐसा कहा गया है ॥ ४ ॥

[शिष्यों के लिए मोक्ष की इच्छा उत्पन्न कराना ही काम है। आस्रव = मल रहित महासुख ही मोक्ष है। वे कुल पञ्च स्कन्ध स्वभाव युक्त होने से काम के उपभोग से मोक्षदायक हैं। अथवा काम और मोक्ष देने वाले हैं। स्कन्ध ही बुद्ध के मुख हैं क्योंकि वे बोधि के कारणभूत हैं। वे भी तथागत ही हैं । अद्वय द्वययोग से उत्पन्न हुए हैं। फिर वैरोचन आदि के उपभोग के लिए चार देवियों की सृष्टि करते हैं]

इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागत वज्रधरानुराग समय नामक समाधि में प्रवेश करके इन सर्व वज्र धराग्र महिषी को अपने काय वाक् चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे द्वेषरति हैं। इनके बाहर आने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्त विद्यापुरुष स्वयं स्त्रीरूप धारण करके सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्र में बैठ गये।

[वज्र धरानुराग समया = मामकी हैं, उनके आलम्बनभूत समाधि वही है। द्वेषरतिः – द्वेष = अक्षोभ्य हैं उनमें रति = द्वेष रति अथवा द्वेष–क्लेश विशुद्धि में रति ही द्वेषरति है। वही वज्रधर मामकी रूप होकर नैऋत्य कोण में बैठ गया।]

अब इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागतानुरागणवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इन सर्वतथागताग्रमहिषियों को अपने कायवाक् चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वह मोहरति हैं। अब इनके बाहर निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत के काय–वाक् चित्त विद्यापुरुष स्त्रीरूप धारण करके पूर्वकोण में बैठ गये।

[सर्वतथागत वैरोचन हैं। तदनुरागणवज्रा लोचना हैं। मोह = वैरोचन हैं उनमें रति ही मोहरति है। मोह शुद्धि उनमें रति मोहरति है।]

इसके ब्राद भगवान् ने सर्वतथागत रत्नधरानुरागणवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके सर्व ईर्ष्या धराग्रमहिषी को अपने काय वाक् चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे ईर्ष्यारति हैं। अब उनके निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक् चित्त विद्यापुरुष ही स्त्री रूप धारण कर दक्षिण कोण में बैठ गए।

इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागत रागधरानुरागणवज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर सर्वरागधराग्रमहिषी को अपने कायवाक् चित्तवज्रों से बाहर निकाला। वे हैं रागरति। इनके निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त विद्या पुरुष स्वयं ही स्त्रीरूप धारण करके पश्चिम कोण में बैठ गये।

[रागधर = अमिताभ हैं। उसमें अनुरागवती पाण्डरवासिनी हैं। राग अमिताभ हैं उनमें रति ही रागरति है। रागविशुद्धि के लिए रति भी रागरति है।]

अब भगवान् ने सर्वतथागतकायवाक् चित्त विसम्वादन नामक समाधि में प्रविष्ट होकर सर्वतथागत प्रज्ञाधराग्रमहिषी को अपने काय-वाक् चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे वज्ररति हैं। अब इनके बाहर आने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त विद्यापुरुष स्वयं स्त्रीरूप धारण कर उत्तरकोण में बैठ गए।

[काय वाक् चित्त विसम्वादन = वे कायवाक्चित्त अनित्य है यह बताने के लिए है विसम्वादन कहा गया है। सभी पदार्थ शून्य हैं इसीलिए भी विसंवाद कहा है। सर्वतथागत प्रज्ञाधर अमोघसिद्धि हैं। तदनुरागणवज्रा = समयतारा हैं। वज्र = अमोघसिद्धि हैं उनमें रति वज्ररति हैं। वज्रज्ञान में रति भी वज्ररति है। वे चार देवियाँ सहचारिणी हैं। उनके साथ संयोग करते हुए सर्वतथागतों का अग्रस्थान में रहना ही अग्रसम्पत् है। अग्रमहिषी = कामैश्वर्य हैं। अग्रमहिषी = सम्पत् हैं]

अब भगवान् ने महावैरोचनवज्रनामक समाधि में प्रवेश करके इन सर्वतथागत मण्डलाधिष्ठान नामक महाक्रोध को अपने काय वाक् चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे है यमान्तकृत् अब इनके निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागतकाय वाक् चित्त विद्यापुरुष ही सर्वतथागत सन्तानाकार होकर पूर्वद्वार में बैठ गये।

[वैरोचन ही अभिषेक स्वभाव के हैं। वज्र उन्हीं का है। यम = नरक है उसको भगवान् महाक्रोध समाधि से समाप्त करते हैं इसीलिए वे यमान्तकृत् हैं। यम = मोह = अन्धकार है अविद्या, उसका परमार्थ सत्य से अन्त करते हैं इसीलिए यमान्तकृत् हैं।]

अब भगवान् ने सर्वतथागत अभिसम्बोधि नामक समाधि में प्रविष्ट होकर सर्वतथागतमण्डलाधिष्ठान नामक महाक्रोध को अपने कायवाक्चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे हैं प्रज्ञान्तकृत् । अब इनके बाहर निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक् चित्त विद्या पुरुष ही वज्र समय सन्यास आकार से युक्त होकर दक्षिणद्वार में बैठ गए।

[सर्वतथागतानामसम्बोधि = रत्नसंभव। अच्छे मुकुट में जिसका वज्र है वह अपराजित क्रोध भी है। प्रज्ञा द्वारा क्लेश को नाश करने से प्रज्ञान्तकृत् हैं।

विकल्पात्मिका ही प्रज्ञा है। उसके प्रभास्वर प्रवेश द्वारा उस क्लेश का अन्त करने से प्रज्ञान्तकृत् हैं। वज्र समय के द्वारा दुष्टों का संत्रासन ही वज्र समय संत्रासन है। वज्र समय लौकिक डाकिनियाँ है। उनका संत्रासन ही वज्र समय संत्रासन कहलाता है।]

अब इसके बाद भगवान् ने सर्वतथागत धर्मवशङ्करी नामक समाधि में प्रवेश करके सर्वतथागतरागधरमण्डलाधिष्ठान नामक महाक्रोध को अपने कायवाक्चित्त वज्रों से बाहर निकाला। वे है पद्मान्तकृत्। इनके निकलने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्तविद्यापुरुष सर्वतथागत वाक् के आकार से युक्त होकर पश्चिम द्वार में बैठ गये।

[धर्मरत्न = अमिताभ हैं। वही आकर = गोत्र है जिसका, वे हयग्रीव हैं। वही समाधि है। उदयकालिक कमल के तरह क्लेशों के सम्पर्क से शून्य, और क्लेशों को नाश करने से भी पद्मान्तकृत् हैं। पद्म योनि है। उसी में द्वय रूप इन्द्रियों के समापत्ति उपाय द्वारा परमानन्द सुख निर्माण करने से भी पद्मान्तकृत् हैं।]

अब भगवान् ने सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर सर्वतथागतकाय वाक् चित्त मण्डलाधिष्ठान नामक महाक्रोध को अपने कायवाक्चित्तवज्रों से बाहर निकाला। वे हैं विघ्नान्तकृत्। अब इनके बाहर आने मात्र से वे ही भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त विद्यापुरुष स्वयं ही सर्वतथागतकायवाक् चित्ताकार में परिणत होकर उत्तरद्वार में बैठ गए।

[सर्व तथागत काय वाक् चित्त = भगवान् अमोघसिद्धि हैं। विघ्नों का नाश करने से विघ्नान्तकृत्। विघ्न चार धातु हैं। क्षयवृद्धि आदि द्वारा शरीर को पीडन करने से विघ्न हैं। उनके उपाय ज्ञान उदय से विनाश करने से ही विघ्नान्तकृत् कहा गया है। देवताओं का योग = क्रम से बैठना ही मण्डल है। यहाँ भी उसी प्रकार कायमण्डल में ३२ देवताओं का विन्यास होता है। काय मण्डल में भी ३२ देवताओं का मण्डल होना चाहिए। क्योंकि भगवान् ने ही व्याख्यातन्त्र में व्याख्या किया है।]

सर्वतथागत काय वाक् चित्त सम्भाषण मण्डल समय सत्त्व हैं। इस प्रकार सर्वतथागत कायवाक्चित्त रहस्य के भी अतिरहस्य में गुह्यसमाज में,

महागुह्यतन्त्रराज में सर्वतथागत समाधिमण्डलाधिष्ठान पटल नामक प्रथम अध्याय पूर्ण हुआ।

[निदान = आदिकारण = तन्त्र के उद्भव के कारण को लेकर जो अर्थ यहाँ दिखाया गया है। साथ ही यहाँ तन्त्र-शास्त्र का अर्थ भी बताया गया है। शेष = बचा हुआ प्रसङ्ग के अनुसार ही बताया जाएगा। सर्वतथागतकायवाक्चित्त रहस्य में गुह्यसमाज में सर्वतथागतमण्डलाधिष्ठान पट पूर्ण हुआ है। जैसे पट = कपड़ा मच्छर आदि कीडों से रक्षा करा है वैसे ही यह तन्त्रार्थ क्लेश-कर्म-जन्मादि उपद्रवों से रक्षा करने से इसे पटल कहा गया है।]

प्रथम पटल पूर्ण हुआ।

अथ द्वितीयपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागता: भगवतः सर्वतथागतकायवाक्चित्ताधिपतेः पूजां कृत्वा प्रणिपत्यैवमाहुः -

भाषस्व भगवन् सारं कायवाक्चित्तमुत्तमम्।
सर्वताथागतं गुह्यं बोधिचित्तमनुत्तरम् ॥ १ ॥

अब, इसके बाद सभी भगवान् तथागतों ने सर्वतथागतकायवाक्चित्ताधिपति भगवान् की पूजा एवं उन्हें प्रणाम करके ऐसा कहा - हे भगवन् कायवाक्चित्त के उत्तमता (रहस्य) को कृपया आप बतावें। और सर्वतथागत क्या है? गुह्य क्या है? एवं अनुत्तर बोधि चित्त क्या है?

[यहाँ निष्पन्न क्रम को दिखाने के लिए यह पटल प्रारंभ हुआ है। काय वाक् चित्ताधिपति = महावज्रधर हैं। कायवाक्चित्त तीनों का अभेद होने से ही उत्कृष्ट है। क्रियादि नयों में आश्रितों में अप्रकाश्य होने से गुह्य है। इसी से यह तन्त्र अनुत्तर तन्त्र है।]

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागतानामध्येषणां विदित्वा सर्वबोधिसत्त्वानां चेतसैव चित्तपरिवितर्कमाज्ञाय बोधिसत्त्वानेवं आह। उत्पादयन्तु भवन्तः चित्तं कायाकारेण कायं चित्ताकारेण चित्तं वाक्प्रव्याहारेणेति।

अथ ते महाबोधिसत्त्वाः सर्वतथागतकायवाक्चित्ताकाशाकारेण संयोज्य इदमुदानमुदानयामासुः -

अहो हि समन्तभद्रस्य कायवाक्चित्तवज्रिणः ।
अनुत्पादप्रयोगेण उत्पादोऽयं प्रगीयते ॥ २ ॥

इसके बाद सर्व तथागत कायवाक्चित्त वज्र तथागत भगवान् ने सर्वतथागतों के अध्येषणा को जानकर सभी बोधिसत्त्वों के अपने चित्त से चित्त में हुए वितर्क को जानकर बोधिसत्त्वों को इस प्रकार से बोधित किया। आप लोग

चित्त को शरीर के आकार में, शरीर को चित्ताकार में और चित्त को वचन के आकार में उत्पादन करें। इसके बाद महाबोधि सत्त्वों ने सर्वतथागत कायवाक् चित्त और आकाश के आकार में संयोजित किया और यह उद्गार व्यक्त करने लगे। [उत्पादन करें - अर्थात् त्रिवज्र के रूप में उत्पादन करने के लिए ही यह कहा गया है। और मनोमय देह उत्पादन के लिए भी कहा गया है। चित्त भय को सूक्ष्मधातु के साथ संयुक्त करके - संभोग-काय के रूप में जो काय उत्पन्न होगा वह चित्ताकार में परिणत होगा। क्योंकि चित्त के अतिरिक्त यहाँ कुछ भी नहीं है। अन्त में आकाश-स्वभावात्मक प्रभास्वर के साथ संयुक्त करके महावज्रधर अपने को निष्पन्न करें।]

आश्चर्य है काय-वाक्चित्त वज्र स्वरूप भगवान् समन्तभद्र का अनुत्पाद प्रयोग द्वारा जो कृत्य है वही उत्पादन कहा जाता है।

[समन्तभद्र का अर्थ है महावज्रधर = अर्थात् बोधिचित्त प्रवर्तन ही है। अनुत्पाद = परमार्थ सत्य है। उसमें मनोमयकाय का प्रवेश ही अनुत्पाद प्रयोग है। उसके द्वारा उत्पन्न ही प्रभावस्वर है।]

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागताभिसम्बोधिनयवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार -

अभावे भावनाभावो भावना नैव भावना ।
इति भावो न भावः स्याद् भावना नोपलभ्यते ॥ ३ ॥

इसके बाद सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्र तथागत भगवान् ने तथागताभिसम्बोधिनयवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस प्रकार बोधिचित्त का उद्घोषण किया - अभाव में भावना का भाव है और भावना खुद में भावना नहीं है। इस प्रकार का भाव भाव नहीं है क्योंकि भावना उपलब्ध ही नहीं है।

इत्याह भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः ।

अथ भगवान् वैरोचनवज्रस्तथागतः सर्वतथागताभिसमयवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार। सर्वभावविगतं स्कन्धधात्वायतनग्राह्यग्राहकवर्जितं धर्मनैरात्म्यसमतया

स्वचित्तमाद्यनुत्पन्नं शून्यताभावम्।

इत्याह भगवान् वैरोचनवज्रस्तथागतः।

अथ भगवान् अक्षोभ्यवज्रस्तथागतः सर्वतथागताक्षयवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार -

अनुत्पन्ना इमे भावा न धर्मा न च धर्मता ।

आकाशमिव नैरात्म्यमिदं बोधिनयं दृढम् ॥ ४ ॥

भगवान् सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र तथागत ने ऐसा ही कहा है।

[सर्वतथागतों की अभिसंबोधि का तात्पर्य है दो सत्यों का द्वैधीकारलक्षण है और वही उसकी नीति है। 'स्थिर' कोई भी पदार्थ नहीं है इसीलिए भावना का अभाव कहा गया है। जो भी सत् की भावना है वह भावना नहीं है। क्योंकि भावना के बिना वह है। इस प्रकार भावाभाव युक्त जो भाव है वह भाव नहीं है। इस प्रकार भाव्य, भावक और भावना उपलब्ध नहीं है। पृथिवी आदि सभी धर्मों को निराकरण करके सभी संस्कृत और असंस्कृत धर्म हैं उन सभी का अभाव ही शून्यता है जो अभिनिवेश दृष्टि होने से। संवृति सत्य के निराकरण के लिए 'भावना भावना नहीं है ऐसा कहा है' ।]

अब, इसके बाद वैरोचन वज्रतथागत भगवान् ने सर्वतथागताभिसमयवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस बोधिचित्तका उद्गार किया। सभी भावों से रहित, स्कन्ध-धातु आयतन-ग्राह्यग्राह्यरहित धर्मनैरात्म्यसमता से अपना जो चित्त है वह पूर्व में अनुत्पन्न ही है और शून्यतारूप है। यही कहा भगवान् वैरोजन वज्र तथागत ने इस अवसर पर।

अब इसके बाद अक्षोभ्यवज्रतथागत भगवान् ने सर्वतथागतअक्षयवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस प्रकार बोधिचित्त का उद्गार किया - ये सारे धर्म अनुत्पन्न है। कोई धर्म और धर्मता नहीं है। यह बोधि नय दृढ है और आकाश के तरह ही नैरात्म्य भी है।

इत्याह भगवान् अक्षोभ्यवज्रस्तथागतः ।

अथ भगवान् रत्नकेतुवज्रस्तथागतः सर्वतथागतनैरात्म्यवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार -

अभावाः सर्वधर्मास्ते धर्मलक्षणवर्जिताः ।
धर्मनैरात्म्यसम्भूता इदं बोधिनयं दृढम् ॥ ५ ॥

यही कहा अक्षोभ्यवज्रतथागत भगवान् ने।

अब, इसके बाद रत्नकेतुवज्रतथागत भगवान् ने सर्वतथागतनैरात्म्यवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस प्रकार बोधिचित्त का उद्गार किया - सभी धर्मों का अभाव है। वे धर्म धर्मलक्षणरहित भी हैं। और धर्म नैरात्म्य से उत्पन्न होने से यह बोधि 'नय' अत्यन्त दृढ है।

इत्याह भगवान् रत्नकेतुवज्रस्तथागतः ।

अथ भगवान् अमितायुर्वज्रस्तथागतः सर्वतथागतज्ञानार्चिःप्रदीपवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार -

अनुत्पन्नेषु धर्मेषु न भावो न च भावना ।
आकाशपदयोगेन इति भावः प्रगीयते ॥ ६ ॥

यही भगवान् रत्नकेतुवज्रतथागत ने कहा।

[सर्वतथागत नैरात्म्य ही परमार्थ सत्य है। वही वज्र भी है। सर्वधर्म = सास्रव और अनास्रव धर्म ही हैं। धर्मलक्षणवर्जित का अर्थ है - धर्म (पदार्थ) ही जब सिद्ध नहीं हैं तो उनका लक्षण कैसे संभव है। जैसे वन्ध्या पुत्र काला हो या गोरा इसका क्या लेना देना! धर्म नैरात्मय परमार्थ सत्य है। उसी से स्वाधिष्ठान क्रम से उत्पन्न धर्मनैरात्म्य सम्भूत हैं।]

इसके बाद अमितायु वज्रतथागत नामक भगवान् ने सर्वतथागत ज्ञानार्चिः प्रदीपवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस बोधिचित्त का उद्गार किया - अनुत्पन्न धर्मों में न भाव है न भावना ही। आकाश के साथ संयुक्त होने से ही भाव है ऐसा कहा जाता है।

इत्याह भगवान् अमितायुर्वज्रस्तथागतः ।

अथ भगवान् अमोघसिद्धिवज्रस्तथागतः सर्वतथागताभिभवनवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं बोधिचित्तमुदाजहार –

प्रकृतिप्रभास्वरा धर्माः सुविशुद्धा नभः समाः ।
न बोधिर्नाभिसमयमिदं बोधिनयं दृढम् ॥ ७ ॥

ऐसा ही भगवान् अमितायुवज्रतथागत ने कहा है।

[यहाँ आकाश पद योग का अर्थ है – आकाश ही परमार्थ सत्य होने से उसके साथ संवृति सत्य का एकाकार होना ही है।]

अब इसके बाद अमोघसिद्धि वज्र तथागत भगवान् ने सर्वतथागताभिभवनवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस प्रकार बोधिचित्त का उद्‌गार किया – सारे धर्म प्रकृति प्रभास्वर हैं। सुविशुद्ध हैं। आकाश के तरह ही हैं। न बोधि है न अभिसमय ही है। यही ३७ बोधिनय है।

इत्याह भगवान् अमोघसिद्धिवज्रस्तथागतः ।

अथ खलु मैत्रेयप्रमुखा महाबोधिसत्त्वाः सर्वतथागतकायवाक्‌चित्तगुह्यधर्मतत्त्वाक्षरं श्रुत्वा आश्चर्यप्राप्ताः अद्‌भुतप्राप्ता इदमुदानमुदानयामासुः ।

अहो बुद्ध अहो धर्म अहो सङ्घस्य देशना ।
शुद्धतत्त्वार्थ शुद्धार्थ बोधिचित्त नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥

भगवान् अमोघसिद्धिवज्रतथागत ने यही कहा है ॥

[प्रकृति = संवृति सत्य है। प्रभास्वर = परमार्थ सत्य है। बाह्य और आध्यात्मिक दोनों ही सत्य द्वय स्वभाव युक्त हैं।]

अब इसके बाद मैत्रेय आदि प्रमुख महाबोधिसत्त्वों ने सर्वतथागतकायवाक्‌चित्त गुह्य धर्मतत्त्व के अक्षरों को सुनकर आश्चर्य प्रकट किया और अद्भुतता का अनुभव भी किया साथ ही यह उद्‌गार भी प्रकट किया – आश्चर्य हैं बुद्ध, धर्म भी आश्चर्यमय है। संघ की देशना भी आश्चर्य मय है। आप शुद्ध तत्त्व हैं, शुद्ध अर्थ हैं ऐसे बोधिचित्त को नमस्कार है।

धर्मनैरात्म्यसम्भूत बुद्धबोधिप्रपूरकः ।
निर्विकल्प निरालम्ब बोधिचित्त नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥

हे धर्मनैरात्म्य से उत्पन्न होने वाले! आप ही बुद्ध के ज्ञान के प्रपूरक हैं। आप ही निर्विकल्प, निरालम्ब हैं ऐसे आप को नमस्कार है।

समन्तभद्र सत्त्वार्थ बोधिचित्तप्रवर्तक ।
बोधिचर्य महावज्र बोधिचित्त नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

आप ही समन्तभद्र हैं। सत्त्वों के प्रयोजन भी आप ही हैं। बोधिचित्त प्रवर्तक भी आप ही हैं। बोधिचर्या, महावज्र, और बोधिचित्त आप ही हैं। ऐसे आपको नमस्कार है।

चित्तं ताथागतं शुद्धं कायवाक्चित्तवज्रधृक् ।
बुद्धबोधिप्रदाता च बोधिचित्त नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥

चित्त आप हैं जो तथागत का है और वह अत्यन्त विशुद्ध भी है। काय-वाक्, चित्त और वज्र को आप ही धारण करते हैं। बुद्ध के बोधिदाता आप ही हैं। ऐसे बोधिचित्त को नमस्कार है।

इति सर्वतथागतकायवाक्चित्त रहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे बोधिचित्तपटलो द्वितीयोऽध्यायः ।

इस प्रकार सर्वतथागतकायवाक्चित्त के रहस्य में भी अति रहस्यात्मक गुह्यसमाज में महागुह्यतन्त्रराज में बोधिचित्तपटल नामक द्वितीय अध्याय पूर्ण हुआ। [सर्वतथागतों का कायवाक् चित्तगुह्य = मनोमयदेह ही है। अहो बुद्ध --- आदि संवृति सत्य के आधार पर ही स्तुति है। अहो धर्म --- इत्यादि परमार्थ सत्य के आधार पर की गई स्तुति है। अहो धर्म की देशना --- आदि दोनों सत्यों को मिश्रित करके --- है। बोधिचित्त = महावज्रधर है। धर्म नैरातम्य से उत्पन्न = परमार्थ सत्य से उत्पन्न। संसार और निर्वाण दोनों में अच्छे होने से समन्तभद्र हैं। सर्व सम्पत् स्वभाव होने से सर्वार्थ हैं। बोधि = परमार्थ सत्य है। बोधिचर्या = संवृति सत्य। महावज्र = दोनों सत्यों से युक्त।]

द्वितीय पटल पूर्ण हुआ।

तृतीयपटलः

अथ भगवान् कायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागतस्फरणमेघव्यूहं नाम समाधिं समापद्येदं वज्रव्यूहं नाम समाधिपटलमुदाजहार ॥

ओं शून्यताज्ञानवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् बुद्धमण्डलम् ।
रश्मिमेघमहाव्यूहं बुद्धज्वालासमप्रभम् ॥ १ ॥

अब इसके बाद कायवाक्चित्तवज्रगत भगवान् ने सर्वतथागत-स्फरणमेघव्यूह नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इस वज्रव्यूह नामक समाधि पटल की व्याख्या की - ऊँ शून्यता ज्ञानवज्र स्वभाव से मैं संयुक्त हूँ।

[कायवाक्चित्तवज्र तथागत = महावज्रधर हैं। सर्वतथागत = अक्षोभ्य आदि। स्फरण मेघ व्यूह = प्राणियों के लिए दशों दिशाओं में स्फरण = व्याप्त मेघ = धर्म जलवर्षा के कारण, वही व्यूह = समूह ही हैं। देवताओं के निष्पत्ति के लिए ही यह ऊँ --- इत्यादि मन्त्र निर्दिष्ट हुआ है।]

आकाश धातु के बीचों बीच में बुद्ध मण्डल की भावना करनी चाहिए। वह मण्डल किरणों का विशिष्ट मेघ व्यूह हैं और बुद्ध = ज्ञान रूप ज्वालाओं से प्रकाशित होता है·

पञ्चरश्मिसमाकीर्णं समन्तात् परिमण्डलम् ।
पञ्चकामगुणाकीर्णं पञ्चोपहारमण्डितम् ॥ २ ॥

पाँच रश्मियों से व्याप्त, चारो तरफ मण्डलों से घिरा हुआ, पञ्च काम गुणों से व्याप्त, पाँचों हारों से सुशोभित भी है

भावयित्वा समासेन बिम्बमध्ये विभावयेत् ।
वैरोचनमहामुद्रां कायवाक्चित्तलक्षिताम् ॥ ३ ॥

संक्षेप में उस बुद्ध मण्डल का ध्यान करके फिर बुद्ध बिम्ब में ध्यान करना चाहिए। उसमें वैरोचन महामुद्रा जो कायवाक्चित्त लक्षणों से युक्त है उसे ध्यान करें।

कायवाक्चित्तवज्रस्य मुद्रां वाऽथ विभावयेत् ।
अक्षोभ्य प्रवरां मुद्रां सम्भारद्वययोगतः ॥ ४ ॥

अथवा कायवाक्चित्तवज्र के मुद्रा का ध्यान करें। उसमें अक्षोभ्य की मुद्रा जो दो संभारों से युक्त है उसे भी ध्यान करें

[आकाश धातु के मध्य में = धर्मोदय में स्थित है। पञ्चरश्मिसमाकीर्ण = पञ्चवर्ण भूभाग युक्त। चारों ओर से घिरना = सर्वतोभद्र का स्वरूप। पञ्चकामगुण = रूपवज्रादि सहित। पञ्चोपहारमण्डित = देवताओं के सन्निधि में चढ़ाया हुआ पञ्चोपहार पूजा। संभारद्वय योग = जहाँ देवताचक्र का संहार होता है वह महावज्रधर है।]

रत्नकेतुमहामुद्राममितायुः प्रभाकरीम् ।
अमोघसिद्धिमहामुद्रां भावयेद् बुद्धमण्डले॥ ५ ॥

रत्नकेतुमहामुद्रा को, अमितायु = प्रभाकरीमुद्रा को और अमोघसिद्धिमहामुद्रा को भी बुद्धमण्डल में ध्यान करें

[बुद्धमण्डल में भावना करे का अर्थ है उसमें लिखें]

इन्द्रनीलप्रभाकारं कायवाक्चित्तवज्रिणम् ।
वज्रहस्तं महाज्वालं विकटोत्कटभीषणम् ॥ ६ ॥

इन्द्रनील समान तेज युक्त, कायवाक्चित्त वज्र से युक्त, हाथ में वज्रधारण करने वाले, महाज्वालरूप, विकटोत्कट भीषण का ध्यान करें

[यहाँ अक्षोभ्य ही द्वेषवज्र होकर इन्द्रनील वर्ण के हो गए। इसीलिए विकटोत्कटभीषण = लम्बे दाँत से डरावने और क्रोधराग मिश्रण युक्त भी हैं]

स्फटिकेन्दुप्रभाकारं जटामुकुटमण्डितम्।
चक्रहस्तं महाज्वालं नानालङ्कारभूषितम् ॥ ७ ॥

स्फटिक-चन्द्र ज्योति आकार स्वरूप, जटामुकुट धारण किए हुए, चक्रहस्त, महाज्वालास्वरूप अनेक अलंङ्कारों से भूषित वैरोचन तथागत का ध्यान करें

जाम्बूनदप्रभाकारं बुद्धमेघसमाकुलम् ।
नवशूलं महावज्रं पाणौ तस्य विभावयेत् ॥ ८ ॥

सुवर्ण के वर्ण जैसे वर्णवाले, बुद्ध ज्ञान से युक्त, नयाँ शूल और महावज्र जिन्होंने अपने हाथों में धारण किया है ऐसे रत्न संभव का ध्यान करें। [जम्बुनद = सोना है। वे रत्नसंभव ही द्वेषवज्र हैं।]

मरकतप्रभाकारं वज्रज्वालाविभूषितम् ।
रत्नहस्तं विभावित्वा ज्वालामेघं समन्ततः ॥ ९ ॥

पन्ने के आकृति जैसे वर्ण वाले, वज्र ज्वाला से भूषित, हाथों में रत्नधारण करने वाले मेघों के ज्वाला से घिरे हुए अमोघसिद्धि का ध्यान करें।

पद्मरागप्रभाकारं जटामुकुटमण्डितम् ।
पद्महस्तं महाज्वालं भावयेद् रागवज्रिणम् ॥ १० ॥

पद्मराग = माणिक्य प्रभा के आकार वाले, जटामुकुट धारण करने वाले, हाथ में कमल धारण करने वाले, महाज्वालामय, रागवज्री अमिताभ का ध्यान करें ।

पञ्चरश्मिप्रभाकारं बिम्बममोघवज्रिणम् ।
खड्गहस्तधरं सौम्यं भावयेद्बुद्धमण्डलम् ॥ ११ ॥

पाँच प्रकार के सफेद पीला-नीला आदि रश्मियों से युक्त, बिम्बरूप अमोघवज्री को जिन्होंने खड्गधारण किया है और अति सौम्य स्वभाव के धनी हैं उन्हें बुद्धमण्डल में भावना करें।

अथ भगवान् कायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः धर्मधातुस्वभाववज्रं नाम समाधिं समापद्येदं कायवाक्चित्ताधिष्ठानमन्त्रमुदाजहार ॥

ओं धर्मधातुवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

इसके बाद काय वाक् चित्त वज्र तथागत भगवान् ने धर्मधातु स्वभाव नामक समाधि के द्वारा कायवाक् चित्ताधिष्ठान मन्त्र का उद्गार किया - ऊँ धर्मधातु वज्रस्वभाव युक्त मैं हूँ ॥

[मैं धर्म धातु वज्रस्वभाव का हूँ = इससे चन्द्र मण्डलाकार में बैठकर उसमें तीन अक्षर द्वारा देवताओं का विग्रह बनाकर सूक्ष्मयोग का ध्यान करने के लिए ही यह कहा गया है]।

पञ्चवर्णं महारत्नं सर्षपस्थलमात्रकम् ।
नासिकाग्रे प्रयत्नेन भावयेद् योगतः सदा ॥ १२ ॥

पाँच वर्ण युक्त महारत्न जो सरसों के परिमाण के समान है, उसे नासिका के अग्रभाग = कूटस्थ, में योग के माध्यम से भावना करना चाहिए ।

स्थिरं तु स्फारयेद् रत्नमस्थिरं नैव स्फारयेत्।
स्फारयेत् प्रवरैर्मेघैर्वज्रज्वालासमप्रभैः ॥ १३ ॥

उसके दर्शन के लिए जब उसका ध्यान करे तब स्थिरता पूर्वक ही वज्र की भावना करें। अस्थिरता पूर्वक नहीं करना चाहिए। वज्र श्रेष्ठों के माध्यम से ही उसे प्रकाशित करना चाहिए। क्रमशः महामुद्रा के रूप में ही उसे प्रकाशित करना चाहिए।

चक्रवज्रमहामेघैः पद्मकोशवरायुधैः ।
बोधिसत्त्वमहामेघैः स्फारयेत् स्फरणात्मकः ॥ १४ ॥

चक्र वज्र रूप महामेघों के द्वारा पद्मकोश रूप श्रेष्ठ आयुधों से, और बोधिसत्त्व रूप महामेघ द्वारा स्फरण-प्रकाश-स्वभाव युक्त उसका प्रकाशन करना चाहिए।

[स्फांरयेत् - आच्छादित करे प्रकाशित करे। स्फारयेत् - निकाले भी]

आकाशधातुमध्यस्थं वज्रमण्डलमालिखेत् ।
स्वच्छमण्डलमध्यस्थं भावयेत् चक्रमण्डलम् ॥ १५ ॥

आकाशधातु में अवस्थित वज्रमण्डल का लेखन करना चाहिए। वह स्वच्छमण्डल में स्थित है उसे और चक्रमण्डल की भी भावना करनी चाहिए।

पद्ममण्डलसङ्काशं भावयेत्पद्मभावनैः ।
रत्नमण्डलसङ्काशं भावयेत् रत्नतत्परः ॥ १६ ॥

पद्ममण्डल से संयुक्त पद्मभावना से ही उसकी भावना करनी चाहिए और रत्नमण्डल में प्रकाशित तत्त्व का ही तत्पर होकर भावना करनी चाहिए।।

योगमण्डलसम्भूतं लिखेदाकाशसन्निधौ।
एते वै प्रवरा बुद्धाः कायवाक्चित्तभावनैः ।
मण्डलवज्रसम्भूताः सर्वज्ञाकारलाभिनः ॥ १७ ॥

योगमण्डल से निःसृत तत्त्व को आकाश के सन्निधि में ही लेखन करना चाहिए। वे सब श्रेष्ठ बुद्ध हैं। क्योंकि काय, वाक् और चित्त भावना से सुभावित भी हैं

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे वज्रव्यूहो नाम समाधिपटलस्तृतीयः ।

इस प्रकार सर्वतथागत कायवाक्चित्त के रहस्य से अतिशय रहस्य युक्त गुह्य समाज में महागुह्यतन्त्रराज में वज्रव्यूह नामक समाधि पटल तृतीय पूर्ण हुआ।

[यहाँ पर तथता के आलम्बनपूर्वक चक्रमण्डल में ध्यान करके उसके ऊपर चक्र को भावित करके उसके परावृत्ति से वैरोचन का ध्यान करना चाहिए। पद्मकुल में अमिताभ हैं। रत्नकुल में रत्नसंभव हैं – वे पीतवर्ण के हैं। योगमण्डल में विश्ववज्र अमोघसिद्धि हैं। कायमण्डल में अक्षोभ्य वज्रसंभूत हैं।]

तृतीय पटल पूर्ण हुआ।

चतुर्थपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः पुनः समाजमागम्य भगवन्तं सर्वतथागतगुह्यकायवाक्चित्तवज्राधिपतिं अनेन स्तोत्रराजेनाध्येषितवन्तः।

सर्वताथागतं शान्तं सर्वताथागतालयम् ।
सर्वधर्माग्रनैरात्म्यं देशमण्डलमुत्तमम् ॥ १ ॥

अब इसके बाद भगवान् सर्वतथागत फिर से समाज में आकर सर्वतथागत गुह्यात्मक काय, वाक् और चित्त वज्र के अधिपति भगवान् को इस स्तोत्रराज के द्वारा स्तुतिपूर्वक अध्येषणा करने लगे - सर्वतथागत जो शान्त स्वभाव के हैं सर्वतथागत के आलय में व्यवस्थित हैं ऐसे भगवान् कृपया उत्तम-मण्डलात्मक सर्वधर्माग्रनैरात्म्य की देशना करें।

[सर्वतथागत = अक्षोभ्य हैं। शान्त स्वभाव = वैरोचन स्वभाव। सर्वतथागत आलय = रत्नकेतु स्वभाव। सर्वधर्म = अमिताभ स्वभाव। अग्रनैरात्म्य = अमोघसिद्धि स्वभाव के हैं।]

सर्वलक्षणसम्पूर्णं सर्वलक्षणवर्जितम् ।
समन्तभद्रकायाग्र्यं भाषमण्डलमुत्तमम् ॥ २ ॥

सभी लक्षणों से पूर्ण, सर्वलक्षण रहित, समन्तभद्रकाय के अग्रवर्ती, मण्डलों में अत्यन्त समुज्वल मण्डल के विषय में देशना करें - भगवान् । [सर्वलक्षण संपूर्ण = कुल त्रय। समन्तभद्रकाय = न्यूनातिरिक्त दोष रहित।]

शान्तधर्माग्रसम्भूतं ज्ञानचर्याविशोधकम् ।
समन्तभद्रवाचाग्र्यं भाषमण्डलमुत्तमम् ॥ ३ ॥

शान्तधर्म में आगे रहने वाले, ज्ञानचर्या के परिशोधक, समन्तभद्र वचनों के अग्र में रहने वाले उत्तम मण्डल का उपदेश करें ।

[शान्तधर्म --- परमार्थ सत्य से निर्गत ज्ञान जो आभास युक्त है और वह रागादि ही है। समन्तभद्रः वाग् ऐश्वर्य प्राप्त ही वाचाग्र हैं।]

सर्वसत्त्वमहाचित्तं शुद्धं प्रकृतिनिर्मलम् ।
समन्तभद्रचित्ताग्र्यं घोषमण्डलमुत्तमम् ॥ ४ ॥

सभी सत्त्वों का महाचित्त रूप, शुद्ध, प्रकृति निर्मल, समन्तभद्रचित्त के अग्रस्वरूप उत्तम मण्डल की देशना भगवान् करें।

अथ वज्रधरः शास्ता त्रिलोकस्तु त्रिधातुकः ।
त्रिलोकवरवज्राग्र्यस्त्रिलोकाग्रानुशासकः॥ ५ ॥
भाषते मण्डलं रम्यं सर्वताथागतालयम् ।
सर्वताथागतं चित्तं मण्डलं मण्डलाकृतिम् ॥ ६ ॥

इसके बाद शास्ता, वज्रधर, त्रिलोकी, त्रैधातुक त्रिलोकवज्र के अग्रस्वरूप, त्रिलोक के अग्र अनुशासक भगवान् रमणीय मण्डल के विषय में जो सर्वतथागतों का आलय है, सर्वतथागतों का चित्तस्वरूप है ऐसे मण्डलाकृतिरूप मण्डल के विषय में उपदेश करते हैं ।

[वज्र = अद्वय ज्ञान, उसके धारण से वज्रधर। विनेयों को गुण सिखाने से शास्ता। त्रिलोक - भू, भूव, स्वर्लोक। त्रिलोकवज्रवर = प्रत्येक बुद्ध आदि उनके प्रभु = अग्र। त्रिलोकाग्र = ब्रह्मादि देवता, उन्हें शासन करने से। मण्डल = मण्ड = मार = कामदेव। उसको ग्रहण करने निग्रह करने से वह आकार मण्डल है। ऐसा चित्त मण्डल है उसी के विषय में बता रहे हैं।]

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चित्तमण्डलमुत्तमम् ।
चित्तवज्रप्रतीकाशं कायवाक्चित्तमण्डलम् ॥ ७ ॥

अब मैं, आपने प्रश्न किया है इसीलिए उत्तम, चित्त मण्डल के विषय में बताऊँगा जो मण्डल चित्त वज्र प्रतीक एवं काय, वाक् एवं चित्त का संयुक्त रूप मण्डलात्मक हैं ।

[चित्तवज्र = अक्षोभ्य हैं]।

नवेन सुविशुद्धेन सुप्रमाणेन चारुणा ।
सूत्रेण सूत्रयेत् प्राज्ञः कायवाक्चित्तभावनैः ॥ ८ ॥
द्वादशहस्तं प्रकुर्वीत चित्तमण्डलमुत्तमम् ।
चतुरस्त्रं चतुर्द्वारं चतुष्कोणं प्रकल्पयेत् ॥ ९ ॥
तस्याभ्यन्तरतश्चक्रमालिखेत्परिमण्डलम् ।
मुद्रान्यासं ततः कुर्यात् विधिदृष्टेन कर्मणा ॥ १० ॥

नयें, सुविशुद्ध, अच्छे प्रमाण युक्त सूत्र के द्वारा विद्वान् को काय, वाक् और चित्त के भावना से उसे सूत्रित करना चाहिए। वह चित्त मण्डल १२ हाथ लम्बा होना चाहिए। चारों तरफ फैला हुआ हो, चार कोनों वाला हो और उसमें चार द्वार होने चाहिए। उसके अन्दर में चक्र लिखे जिसमें परिमण्डल भी होना चाहिए। उसके बाद मुद्रान्यास करें विधिपूर्वक क्रम से ।

तस्य मध्ये लिखेद् वज्रमिन्द्रनीलसमप्रभम् ।
पञ्चशूलं महाज्वालं भयस्यापि भयङ्करम् ॥ ११ ॥

उसके बीच में वज्र को लिखें। उसमें इन्द्रनील के समान प्रभा हो और पञ्च शूल, महाज्वाला, जो भय का भी भयङ्कर है क्योंकि वे द्वेष वज्र हैं।

पूर्वेण तु महाचक्रं वज्रज्वालाविभूषितम् ।
दक्षिणेन महारत्नं स्फुलिङ्गगहनाकुलम् ॥ १२ ॥

उस मण्डल में पूर्व दिशा में वज्र ज्वाला विभूषित महाचक्र को लिखना चाहिए। दक्षिण में स्फुलिङ्ग रूप गहन आकृति युक्त महारत्न को लिखें ।

पश्चिमेन महापद्मं पद्मरागसमप्रभम् ।
उत्तरेण महाखड्गं रश्मिज्वालाकुलोज्वलम् ॥ १३ ॥

पश्चिम में महापद्म जो पद्मराग है, उसके समान स्वरूपवाले को लिखें। उत्तर की ओर रश्मि ज्वाला कुल से उज्जवल महाखड्ग को लिखें ।

पूर्वकोणे लिखेन्नेत्रं मेघमध्यसमप्रभम् ।
दक्षिणेन ततो वज्रं मामकीकुलसम्भवम् ॥ १४ ॥

पूर्व कोण में मेघ के बीज से उत्पन्न जैसे नेत्रों को लिखें। उसके दक्षिण कोण में मामकी कुल से उद्भूत वज्र को लिखें।

पश्चिमेन लिखेत्पद्मं सकन्दं विकचाननम् ।
उत्तरेणोत्पलं कुर्यान्नीलाभ्रमिव शोभनम् ॥ १५ ॥

उससे भी पश्चिम कोण में सुन्दर रूप में फैले हुए कमल को लिखें। उससे उत्तर में, नील आकाश जैसे वर्ण वाले कमल को ही लिखें ।

आलिखेत् पूर्वद्वारे तु मुद्गरं ज्वालसुप्रभम् ।
दक्षिणेनालिखेद्दण्डं वज्रज्वालादिसुप्रभम् ॥ १६ ॥

पूर्व द्वार में ज्वाला से उज्जवल मुसल को लिखे। उससे दक्षिण की ओर वज्र ज्वाला से उज्जवल दण्ड को लिखें ।

पश्चिमेनालिखेत्पद्मं खड्गज्वालाप्रभाकरम् ।
उत्तरेण लिखेद्वज्रं वज्रकुण्डलिवज्रिणम् ॥ १७ ॥

उससे पश्चिम कोण में खड्ग ज्वाला से चमत्कृत पद्म का लेखन करना चाहिए। उससे उत्तर में वज्रकुण्डल से युक्त और वज्र से युक्त वज्र को ही लिखें।

परिस्फुटं तु विज्ञाय मण्डलं चित्तमुत्तमुत्तमम् ।
पूजां कुर्वीत यत्नेन कायवाक्चित्तपूजनैः ॥ १८ ॥

इस प्रकार अति सुन्दर, अति पूर्ण मण्डल बन गया है जो उत्तम चित्त से युक्त है ऐसा जान कर ही यत्नपूर्वक काय, वाक् और चित्त के पूजन द्वारा वहाँ पूजा करना चाहिए ।

षोडशाब्दिकां संप्राप्य योषितं कान्तिसुप्रभाम्।
गन्धपुष्पाकुलां कृत्वा तस्य मध्ये तु कामयेत् ॥ १९ ॥

उक्त मण्डल के पूजन के पश्चात् षोडश वर्शीय स्त्री को प्राप्त करना चाहिए। जो समग्र कान्ति से युक्त हो। उसे गन्ध-पुष्प मालाओं से सुशोभित करके उस मण्डल के बीच में उससे सुख-रति की कामना करनी चाहिए।

अधिवेष्ट्य च तां प्रज्ञां मामकीं गुणमेखलाम् ।
सृजेद्बुद्धपदं सौम्यमाकाशधात्वलङ्कृतम् ॥ २० ॥

उस प्रज्ञा रूपिणी स्त्री को जो मामकी कुल की है गुण मेखला में संविष्ट है उसे अपने बाहों में लेकर आकाश धातु से अलंकृत बुद्धपद की सृष्टि करें।

विण्मूत्रशुक्ररक्तादीन् देवतानां निवेदयेत् ।
एवं तुष्यन्ति सम्बुद्धाः बोधिसत्त्वा महाशयाः ॥ २१ ॥

उस प्रज्ञा स्त्री के विष्ठा, मूत्र, शुक्र, रक्त आदि देवताओं को निवेदन करे देवें। इससे सम्बुद्ध खुश होते हैं, जो महाशय हैं और बोधिसत्त्व तथा महासत्त्व रूप हैं।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे गुह्यकायवाक्चित्तमण्डलपटलश्चतुर्थोऽध्यायः ।

इस प्रकार सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्य के भी रहस्यभूत गुह्यसमाज में महागुह्यतन्त्रराज में गुह्यकायवाक्चित्तमण्डल पटल चतुर्थ पूर्ण हुआ।

चतुर्थ पटल पूर्ण हुआ।

अथ पञ्चमः पटलः

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक् -
चित्तवज्रधरो राजा सर्वाग्र्यो भुवनेश्वरः ।
धर्मचर्याग्र्यधर्मार्थी भाषते चर्यलक्षणम् ॥ १ ॥

अब, इसके बाद सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्रधर राजा भगवान् सर्वाग्र्य भुवनेश्वर, धर्मचर्या के अग्र धर्म के लिए चर्या का लक्षण बता रहे हैं।

निर्विकल्पार्थसम्भूतां रागद्वेषमहाकुलाम् ।
साधयेत् प्रवरां सिद्धिमग्रयानेह्यनुत्तरे ॥ २ ॥

निर्विकल्पार्थ सम्भूत, रागद्वेष महाकुल रूप उत्तम सिद्धि, अग्रयान रूप अनुत्तर तन्त्र में साधना करें।

[धर्मचर्या में चर्या = प्रपञ्चता, निष्प्रपञ्चता और अत्यन्त निष्प्रपञ्चता के भेद से त्रिविध होती है। चरति अनेन जिससे गमन करता है वही चर्या है। निर्विकल्प = परमार्थ सत्यम् अग्रयान = वज्रयान। अनुत्तर = अति उत्कृष्ट ।]

चण्डालवेणुकाराद्या मारणार्थार्थचिन्तकाः ।
सिद्धयन्त्यग्र्ययानेऽस्मिन् महायाने ह्यनुत्तरे ॥ ३ ॥

चाण्डाल जाति के लोग, वेणुकार = डोम्बी डोम आदि जाति के लोग जो केवल मारण आदि मृत्यु धर्म के पदार्थों के चिन्तन में लगे रहते हैं इस अनुत्तर महायान में जो अग्रयान है में साधना करने से वे भी सिद्ध हो जाते हैं।

[चाण्डाल - वेणुकार आदि के उल्लेख से इस धर्म में साधना प्रधान है व्यक्ति, देश काल आदि अप्रधान हैं यही दिखाते हैं। अनुत्तर महायान = वज्रयान]

आनन्तर्यप्रभृतयः महापापकृतोऽपि च।
सिद्धयन्ते बुद्धयानेऽस्मिन् महायानमहोदधौ ॥ ४ ॥

आनन्तर्य कर्म में लगे हुए, महापाप कृत्य में रत भी महायानमहोदधि स्वरूप इस वज्रयान में सिद्ध होते हैं।

[आनन्तर्य = मातृ पितृ भिक्षु-वधादि, बुद्ध प्रतिमा भेद, सद्धर्म प्रतिक्षेपक आदि पाँच कर्म। महा पाप किए हुए भी इसमें पार हो जाते हैं]

आचार्यनिन्दनपरा नैव सिद्धयन्ति साधने ।
प्राणातिपातिनः सत्त्वा मृषावादरताश्च ये ॥ ५ ॥
ये परद्रव्याभिरता नित्यं कामरताश्च ये।
विण्मूत्राहारकृत्या ये भव्यास्ते खलु साधने॥ ६ ॥

किन्तु आचार्य - सद्गुरु के निन्दा करने वाले कभी भी सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकते। साथ ही प्राणातिपात में लगे हुए, मृषावाद में रत, दूसरों के द्रव्य हरण में लगे हुए, निरन्तर कामाचार में संलग्न प्राणी भी साधना में सिद्ध नहीं होते साथ ही वे विष्ठा, मूत्र के आहरकृत्य में संलग्न हो जाते हैं और वे भ्रष्ट हो जाते हैं।

मातृभगिनीपुत्रींश्च कामयेद्यस्तु साधकः ।
स सिद्धिं विपुलां गचछेत् महायानाग्रधर्मताम् ॥ ७ ॥
मातरं बुद्धस्य विभोः कामयन्न च लिंप्यते ।
सिद्धयृते तस्य बुद्धत्वं निर्विकल्पस्य धीमतः ॥ ८ ॥

जो साधक माता, बहन और पुत्री की कामना करता है वह इस महायानाग्रधर्म में विपुल सिद्धि प्राप्त करता है। बुद्ध की माता को जो व्यक्ति चाह करता है वह लिप्त नहीं होता। वह व्यक्ति जो निर्विकल्प - अवस्था में है और धीमान् के लिए बुद्धत्व सिद्ध होता है।

[बुद्धजननी = वज्र क्षत्रेश्वरी ही है। प्रज्ञा ही = माता है। निर्वाण ही पुत्री है।]

अथ खलु सर्वनिवरणविस्कम्भिप्रभृतयो महाबोधिसत्त्वा आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ताः । किमयं भगवान् सर्वतथागतस्वामी सर्वतथागतपर्षन्मण्डलमध्ये दुर्भाषितवचनोदाहारं भाषते। अथ ते सर्वतथागताः सर्वनिवरणविस्कम्भिप्रभृतीनां महाबोधिसत्त्वानां आश्चर्यवचनमुपश्रुत्यैतान् बोधिसत्त्वानेवं आहुः -

अलं कुलपुत्रा मा एवम् वोचत ।
इयं सा धर्मता शुद्धा बुद्धानां सारज्ञानिनाम् ।
सारधर्मार्थसम्भूता एषा बोधिचरिपदम् ॥ ६ ॥

अब निश्चय ही सर्वनिवारण विस्कम्भि प्रभृति महाबोधि सत्त्वगण आश्चर्य चकित हुए और अद्भुत अवस्था को प्राप्त हुए। और कहने लगे कि वे सर्वतथागत स्वामी भगवान् सर्वतथागत परिषद् के मण्डल के मध्य में क्यों ऐसा दुर्भाषित वचनों को उदाहरण के रूप में बोल रहे हैं। इसके बाद उन बोधि सर्वतथागत भगवान् ने सर्व निवारण विस्कम्भ आदि महाबोधि सत्त्वों के आश्चर्य वचनों को सुनकर उन बोधिसत्त्वोंसे कहा - बस मेरे कुल पुत्रों! आप लोग ऐसा न बोलें। यह वही शुद्ध धर्म है। स्तरों के ज्ञाता बुद्धों का धर्म है। सार धर्मार्थ से निकला है, यही बोधिचित्त पद भी है।

अथ खल्वनभिलाप्यानभिलाप्यबुद्धक्षेत्रपरमाणुरजःसमा बोधिसत्त्वा भीताः सन्त्रस्ता मूर्च्छिता अभूवन्। अथ भगवन्तः सर्वतथागतास्तान् सर्वबोधिसत्त्वान् मूर्च्छितान् दृष्ट्वा भगवन्तं सर्वतथागतकायवाक्चित्ताधिपतिमेवमाहुः। उत्थापयतु भगवन्नेतान् महाबोधिसत्त्वान् ।

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः आकाशसमताद्वयवज्रं नाम समाधिं समापन्नः। समनन्तरसमापन्नस्य च भगवतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतेः प्रभया स्पृष्टमात्रा अथ ते बोधिसत्त्वाः स्वेषु स्वेष्वासनस्थानेषु स्थिता अभूवन्। अथ ते सर्वतथागता आश्चर्यप्राप्ताः अद्भूतप्राप्ताः प्रीत्योद्बेलप्रायाः एवं धर्मघोषमकार्षुः।

अहो धर्म अहो धर्म अहो धर्मार्थसम्भव।
धर्मशुद्धार्थनैरात्म्य वज्रराज नमो नमः ॥ १० ॥

इसके बाद वे सब अनगिनत एवं वर्णनातीत बुद्ध क्षेत्रों के परमाणुरजों के समान बोधिसत्त्व डर गए और सन्त्रस्त होकर मूर्च्छित हुए। अब भगवान् सर्वतथागतों ने उन सर्वबोधिसत्त्वों को मूर्छित देखकर भगवान् सर्वतथागत वाक् चित्ताधिपति को यह कहा - भगवान् आप इन महाबोधिसत्त्वों को उठायें।

अब भगवान् सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र तथागत आकाश समता द्वय वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट हो गए। उनके समाधि में प्रविष्ट होते ही उन भगवान् सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्राधिपति के प्रभा के स्पर्श करने मात्र से अब वे सब बोधिसत्त्व गण अपने-अपने आसनस्थानों में स्थित हो गए।

अब वे सर्वतथागत आश्चर्य चकित एवं अद्भुत अवस्था को प्राप्त हो गए। साथ ही प्रीति सुख से सुखी हो गए एवं धर्मघोष करने लगे।

कायवाक्चित्तसंशुद्ध आकाशसमतालय।
निर्विकार निराभास वज्रकाय नमो नमः ॥ ११ ॥

आप काय, वाक् और चित्तों से विशुद्ध हैं। आकाश के समान शुद्ध हैं। निर्विकार एवं निराभास हैं ऐसे वज्रकाय को नमस्कार, नमस्कार है।

चित्तं ताथागतं श्रेष्ठं त्रैयध्वपथवर्तिनम् ।
धातुभूतमहाकाश आकाशार्थ नमो नमः ॥ १२ ॥

आप तथागत का चिह्न श्रेष्ठ है। तीन अध्व के मार्ग में अब स्थित भी हैं। धातु भूत महाकाश रूप हैं ऐसे आकाशार्थ रूप आपको नमस्कार है, नमस्कार है ।

आकाशकायसम्भूत आकाशवाक्प्रवर्तक ।
आकाशचित्तधर्माग्र चर्यापद नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥

आकाश काय से समुत्पन्न, आकाश से वाक्-वचन को प्रवर्तित करने वाले, आकाश सदृश चित्त रूप धर्माग्र! भगवन्, हे चर्यापदरूप प्रभु आपको नमस्कार है।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे समन्तचर्याग्रपटलः पञ्चमोऽध्यायः।

इस प्रकार श्री सर्वतथागत काय, वाक् और चित्त रहस्य के अति रहस्यभूत गुह्य समाज में महागुह्यतन्त्रराज में समन्त चर्याग्रपटल नामक पाँचवाँ पटल पूर्ण हुआ।

[आकाश काय ज्ञान–आदर्श ज्ञान। उससे संभूत वैरोचन हैं। आकाशपथ समता ज्ञान है उससे निष्पन्न रत्न संभव हैं। आकाश सदृश चित्त वाले अक्षोभ्य हैं। धर्म = प्रत्यवेक्षण ज्ञानात्मक अमिताभ हैं। जगदर्थाश्चर्य के पद के प्रतिष्ठापक अमोघसिद्धि हैं। इस अवसर पर पञ्चकुलात्मक रूप से महावज्रधर भगवान् की स्तुति की गई है]

पञ्चम पटल पूर्ण हुआ।

षष्ठः पटलः

अथ खलु अक्षोभ्यवज्रस्तथागतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तगुह्यवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं चित्ताधिष्ठानमन्त्रमुदाजहार।

ओं सर्वतथागतचित्तवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

अथ भगवान् वैरोचनवज्रस्तथागतो विरजपदवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं कायाधिष्ठानमन्त्रमुदाजहार। ओं सर्वतथागतकायवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

अथ भगवानमितायुवज्रस्तथागतः सर्वतथागतसमताद्वयवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं वागधिष्ठानमन्त्रमुदाजहार ।

ओं सर्वतथागतवाग्वज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

त्रिवज्रं ताथागतं शुद्धं पदं पदविभावनम्।
निष्पादयेदेभिः प्रवरैर्मन्त्रलक्षणलक्षितम् ॥ १ ॥

अब इसके बाद भगवान् अक्षोभ्यवज्रतथागत ने सर्वतथागतकायवाक्चित्तगुह्यवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस चित्ताधिष्ठानमन्त्र का उद्गार किया – ऊँ सर्वतथागत चित्तवज्र स्वभावात्मक मैं हूँ।

इसके बाद भगवान् वैरोचनवज्रतथागत ने विरजपदवज्र नामक समाधि में प्रवेश करके इस कायाधिष्ठानमन्त्र का उद्गार किया अर्थात् कहा – ऊँ सर्वतथागतकायवज्र स्वभाव वाला मैं हूँ।

[विरजवज्र = आदर्श ज्ञानात्मक वैरोचन]

अब इसके बाद भगवान् अमितायुवज्रतथागत ने सर्वतथागतसमताद्वयवज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इस प्रकार वाग् अधिष्ठान मन्त्र का कथन किया – ऊँ सर्वतथागतवाग्वज्र स्वभावात्मक मैं हूँ।

[अमितायुः = समता अद्वय प्रत्यवेक्षण ज्ञानात्मक – अमिताभ]

त्रिवज्र, तथागत, शुद्ध पदों का चिन्तन परंपद जो विशिष्ट मन्त्रों के द्वारा

लक्षित पद को इनके द्वारा निष्पन्न करें।

[त्रिवज्र = काय-वाक् एवं चित्त जिसमें हैं। पद = शरीर। तथागत = अक्षोभ्य आदि स्वभावयुक्त गुह्य = श्रावक आदि के द्वारा अज्ञात। पदविभावन = पद लोचनादि व्यूह, उसकी भवना। मन्त्र = अक्षोभ्य आदि। मन्त्र लक्षण = तीन अक्षर।]

अथ भगवान् रत्नकेतुवज्रस्तथागतः ज्ञानप्रदीपवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं अनुरागणमन्त्रमुदाजहार।

ओं सर्वतथागतानुरागणवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

अथ भगवानमोघसिद्धिवज्रस्तथागतोऽमोघवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं पूजामन्त्रमुदाजहार।

ओं सर्वतथागतपूजावज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥

पञ्चकामगुणैर्बुद्धान् पूजयेद्विधिवत्सदा।
पञ्चोपहारपूजाभिर्लघुबुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ २ ॥

अब भगवान् रत्न केतुवज्र तथागत ने ज्ञानप्रदीप नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अनुरागणमन्त्र का कथन किया - ॐ सर्वतथागतानुरागण वज्रस्वभाव वाला मैं हूँ।

अब भगवान् अमोघसिद्धि वज्र तथागत ने अमोघ वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इस पूजामन्त्र का उद्गार किया - ॐ सर्वतथागत पूजा स्वभावात्मक मैं हूँ।

[समापत्ति क्रिया के बाद सर्वतथागतों के पूजा के लिए यह मन्त्र उद्धृत किया गया है।]

पाँच कामगुणों के द्वारा विधिपूर्वक बुद्धों की पूजा करें। क्योंकि पञ्चोपचार पूजा के द्वारा शीघ्र ही बुद्धत्व उपलब्ध होगा।

इत्याह भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिर्वज्रधरः ।
अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिर्वज्रधर इदं सर्वतथागतमन्त्ररहस्यमुदाजहार।
॥ ओं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्वभावात्मकोऽहम् ॥
मन्त्रनिध्यप्तिकायेन वाचा मनसि चोदितः ।
साधयेत् प्रवरां सिद्धिं मनः सन्तोषणप्रियाम् ॥ ३ ॥

सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्राधिपति वज्रधर भगवान् ने ऐसा कहा। इसके बाद भगवान् सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्राधिपति ने वज्रधर समाधि में प्रविष्ट होकर इस प्रकार सर्वतथागत मन्त्र के रहस्य का कथन किया – ॐ सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्रस्वभावात्मक मैं हूँ।

मन्त्र निरूपणात्मक शरीर के द्वारा उसे प्रेरित होकर मन में उत्तम सिद्धि प्राप्त करना चाहिए जिससे सन्तुष्टि भी होगी और मन में आनन्द का उल्लास भी होगा।

[मन्त्र आलि और कालि हैं। प्रवेश की स्थिति और व्युत्थान की स्थिति के द्वारा जो ज्ञान है वही मन्त्रनिष्पत्ति है। काय का अर्थ है – साधनभूत निर्माण शरीर से। वाचा = वज्रज्ञापन द्वारा। मन में = हृदय में अवस्थित – वज्रसत्त्व। मनसन्तोष = महामुद्राविशुद्धिकारक प्रिया = महावज्रधर की मूर्ति का निष्पादन।]

चित्तनिध्यप्तिनैरात्म्यं वाचा कायविभावनम् ।
निष्पादयन्ति संयोगमाकाशसमतालयम् ॥ ४ ॥

मन्त्रपरिज्ञान से होने वाले नैरात्म्य को वचन के द्वारा काय की भावना करते हुए आकाश के समान आलय का निष्पादन करते हैं।

[चित्त की नैरात्म्य साधना और वचन तथा शरीर का भी नैरात्म्यीकरण की भावना करना है। वाक्, काय और चित्त का लक्षण = प्रज्ञा, उपाय और उपलब्धि रूप त्रिवेणी है। आकाश समता = परमार्थ लक्षण वही आलय उत्पत्ति स्थान है जिस वज्रधर का]

कायवाक्चित्तनिध्यप्तेः स्वभावो नोपलभ्यते ।
मन्त्रमूर्तिप्रयोगेण बोधिचित्ते च भावना ॥ ५ ॥
विचार्येदं समासेन कायवाक्चित्तलक्षणम् ।
भावयेद् विधिसंयोगं समाधिं मन्त्रकल्पितम् ॥ ६ ॥

काय, वाक् और चित्त के यथार्थ ज्ञानात्मक विज्ञप्ति का स्वभाव उपलब्ध नहीं होता। मन्त्र मूर्ति के प्रयोग द्वारा बोधि चित्त में भावना करनी चाहिए। ऐसा विचार करके काय, वाक् और चित्त के लक्षणों का विचार एवं भावना करनी चाहिए। उसके बाद विधि द्वारा कल्पित और मन्त्र योगों से युक्त समाधि की भावना करें।

[काय वाक् चित्तों के निरूपण से जो स्वभाव उपलब्ध होता है वह संवृति सत्य है, वह स्वभाव उपलब्ध नहीं है। मन्त्र = प्रणव आदि। संवृति सत्य और परमार्थ सत्य के एकीकरण से बोधि संयोग समाधि होती है जो मन्त्रात्मक है। मन्त्र पञ्चरश्मियाँ हैं]

अथ वज्रधरः श्रीमान् सर्वताथागतान्वितः ।
सर्वबुद्धाग्रसर्वज्ञो भाषते भावनोत्तमम् ॥ ७ ॥

अब, सर्वतथागतों से युक्त श्रीमान् भगवान् वज्रधर जो सभी बुद्धों के शिष्यों में अग्रगामी और सर्वज्ञ हैं वे उत्तम भावना के विषय में बता रहे हैं । [अथ शब्द निष्पन्न क्रम के बाद के लिए है। वज्र को धारण करने से वज्रधर हैं। अथवा आदर्शादि पञ्चज्ञान को धारण करने से भी वज्रधर हैं।

[वज्र = अद्वय ज्ञान है उसे धारण करने से भी वज्रधर हैं। सर्वबुद्ध - वैरोचनादि। उनमें अग्र सर्वज्ञ = चित्तवज्र हैं]

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेच्चन्द्रमण्डलम् ।
बुद्धबिम्बं विभावित्वा सूक्ष्मयोगं समारभेत् ॥ ८ ॥

आकाश धातु के मध्य में प्रतिष्ठित चन्द्रमण्डल का ध्यान करें। उसमें बुद्ध विम्ब का विभावन करके सूक्ष्मयोग में प्रतिष्ठित हों।

नासाग्रे सर्षपं चिन्तेत् सर्षपे सचराचरम् ।
भावयेत् ज्ञानदं रम्यं रहस्यं ज्ञानकल्पितम् ॥ ९ ॥

नासिका के अग्रभाग में सरसों जैसे आकृति का चिन्तन करके उसमें सारा जगत् है ऐसी भावना करते हुए ज्ञान जन्य रमणीय रहस्य की भावना करें, जिससे ज्ञान प्राप्त होता है ।

[पहले संभोगकाय का निष्पादन करना चाहिए। नासिका के अग्रभाग में सरसों का तात्पर्य है - प्राणायाम की स्थिति। बुद्ध के पाँच रश्मियाँ भी उसी प्राणायाम में ही प्रतिष्ठित हैं। इससे वायु तत्त्व और मन्त्र तत्त्व का संमिश्रण कहा गया है।]

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेत् सूर्यमण्डलम् ।
बुद्धबिम्बं विभावित्वा पदं तस्योपरिन्यसेत् ॥ १० ॥
॥ हूँ ॥

आकाश धातु के मध्यस्थ सूर्य मण्डल का ध्यान करें। उसमें बुद्ध विम्ब की भावना करके उसके ऊपर 'पद' पैर रखे। वह है ॥ हूँ॥

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेच्चक्रमण्डलम् ।
लोचनाकारसंयोगं वज्रपद्मे विभावयेत् ॥ ११ ॥

इसी प्रकार आकाश धातु के मध्य में स्थित चक्रमण्डल का ध्यान करें। उसके बाद लोचनाकार से संयुक्त स्वरूप को वज्र पद्म में भावना करें।

[आकाश धातु अनाहत चक्र है। उसमें स्थित सूर्य मण्डल = अग्नि तत्त्व है। बुद्ध = वैरोचन हैं। लोचना के आकार के साथ सुयुक्त करना है - "आः वज्र हूँ" यही मन्त्र है]

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् रत्नमण्डलम् ।
आदियोगं प्रयत्नेन तस्योपरि विभावयेत् ॥ १२ ॥

आकाश धातु के मध्य में अवस्थित रत्नमण्डल का ध्यान करें। प्रयत्नपूर्वक उसके ऊपर आदि योग का ध्यान करें।

[रत्नमण्डल = रत्नसंभव का मण्डल माहेन्द्र मण्डल। पीत वर्ण का योग है]

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेत् पद्ममण्डलम् ।
पद्माकारसुसंयोगं भावयेद् रागवज्रिणम् ॥ १३ ॥

आकाश धातु के मध्य में पद्ममण्डल की भावना करनी चाहिए। और उसी में पद्माकार से सुसंयुक्त रागवज्री का ध्यान करें।

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् रश्मिमण्डलम् ।
सृजेद्बुद्धपदं सौम्यं परिवारं विशेषतः॥ १४ ॥

आकाश धातु के मध्य में स्थित रश्मि मण्डल की भावना करें। विशेष करके उस स्थान में परिवारात्मक, सौम्य, बुद्ध पद की सृष्टि करें।

[अनाहत चक्र में स्थित रश्मि मण्डल, वायव्य मण्डल जो कृष्ण वर्ण का है उसे वामभाग से निकालकर उसके ऊपर बुद्ध पद = 'हुँ' कार जो सौम्य - ह्रस्व का प्रवेश कराये। यह अमोघ सिद्धि का जाप है। इन चार मण्डलों का एक-एक मण्डल की प्रवृत्ति से निःसृत मण्डल त्रय ही परिवार है]

नीलोत्पलदलाकारं पञ्चशूलं विशेषतः ।
यवमात्रं प्रयत्नेन नासिकाग्रे विचिन्तयेत् ॥ १५ ॥

विशेष करके नील कमल दल के आकार को जिसमें पाँच शूल हैं यह = जो मात्र आकृति है उसका प्रयत्नपूर्वक नासिका के अग्रभाग में चिन्तन करें।

चणकास्थिप्रमाणं तु अष्टपत्रं सकेशरम् ।
नासिकाग्र इदं स्पष्टं भावयेद् बोधितत्परः ॥ १६ ॥

चना के बराबर परिमाण युक्त अष्टपत्रकमल में केशर को मिलाने के बाद जैसा आकार बनता है उसी आकृति को नासिका के अग्रभाग में प्रत्यनपूर्वक, बोधि चाहने वाला ध्यान करे।

चक्रादीनां विशेषेण भावनां तत्र कल्पयेत् ।
सिद्धयेद्बोधिपदं रम्यं मन्त्रसिद्धिगुणालयम् ॥ १७ ॥

विशेष करके चक्रादि की भावना करे। इस योग द्वारा मन्त्र सिद्धि रूप गुण के आलयभूत रमणीय बोधि पद सिद्ध होता है

[बोधि = अद्वयज्ञान। उसका पद = कारण। वह पद परमार्थ सत्य है]

सृजेत्तत्र समासेन बुद्धबोधिप्रतिष्ठितम् ।
निश्चारयेद्धर्मपदं कायवाक्चित्तलक्षितम् ॥ १८ ॥

संक्षेप में व्यक्त करने से यही कहा जा सकता है – बुद्ध बोधि में प्रतिष्ठित परमार्थ में प्रतिष्ठित करें। साथ ही काय, वाक् और चित्त लक्षण युक्त धर्म पद का निष्पादन करें।

[बुद्ध बोधि = बुद्ध – स्कन्ध आदि जो बोधि में प्रतिष्ठित। निर्माण काय में अवस्थित। समासेन = ज्ञानत्रय को संयोजित करके परमार्थ सत्य में निक्षिप्त करना है]।

अथ वज्रधरः श्रीमान् सर्वतत्त्वार्थदेशकः ।
सर्वचर्याग्रसम्भूतो भाषते गुह्यमुत्तमम् ॥ १९ ॥

अब सर्वतत्त्वार्थ के देशक श्रीमान् वज्रधर सर्वचर्याग्र – सम्भूत भगवान् उत्तम गुह्य का उपदेश कर रहे हैं।

षण्मासान् भावयेत् प्राज्ञो रूपशब्दरसान्वितः ।
गुह्यतत्त्वमहापूजां सम्पूज्य च विभावयेत् ॥ २० ॥

इसे योगी ६ महीनों तक भावना करे। और रूप, रस, शब्द आदि के सहयोग से गुह्य तत्त्वों की महापूजा करके भावना करें।

[अद्वय ज्ञान की देशना ही सर्वतत्त्वार्थ देशक है]

विण्मूत्राहारकृत्यार्थं कुर्यात् सिद्धिफलार्थिनः ।
सिद्ध्यतेऽनुत्तरं तत्त्वं बोधिचित्तमनाबिलम् ॥ २१ ॥

विष्ठा, मूत्र और आहारादि कृत्य के लिए सिद्धि रूप फल के अभिलाषी को भावना करनी चाहिए। इस कृत्य के द्वारा अनिन्दित अनुत्तर, बोधिचित्त की सिद्धि हो जाती है।

मांसाहारादिकृत्यार्थं महामांसं प्रकल्पयेत् ।
सिद्ध्यते कायवाक्चित्तरहस्यं सर्वसिद्धिषु॥ २२ ॥

मांसादि आहार कृत्य के लिए महामांस की कल्पना करे। इससे काय, वाक् और चित्त के रहस्य सर्वसिद्धियों में उपलब्ध होता है।

हस्तिमांसं हयमांसं श्वानमांसं तथोत्तमम् ।
भक्षेदाहारकृत्यार्थं न चान्यत्तु विभक्षयेत् ॥ २३ ॥

हाथी का मांस, घोड़े का मांस, कुत्ते का मांस सब उत्तम हैं। इन सभी का आहार कृत्य के लिए भक्षण करें। अन्य किसी भी चीज का भक्षण न करें।

[उपर्युक्त विष्ठा मूत्र आदि और विभिन्न प्रकार के मांसादि क्रोध देवता और उनके गणों को भक्षण करायें]

प्रियो भवति बुद्धानां बोधिसत्त्वश्च धीमताम् ।
अनेन खलु योगेन लघुबुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ २४ ॥

बुद्धों के लिए और बुद्धिमान् लोगों के लिए बोधिसत्त्व अतिशय प्रिय होते हैं। इस योग के द्वारा शीघ्र ही साधक बुद्धत्व प्राप्त करता है।

कामधात्वीश्वरो लोके स भवेत्पर कर्मकृत् ।
तेजस्वी बलवान् श्रेष्ठः कान्तिमान् प्रियदर्शनः ॥ २५ ॥

कामधातु का ईश्वर इस जगत् में कर्म में तत्पर हो जाए। वह तेजस्वी, श्रेष्ठ, बलवान्, कान्तियुक्त और प्रियदर्शन होता है।

सम्मानयदिमं लोके दर्शनेनैव चोदितः ।
इदं तत् सर्वबुद्धानां रहस्यं बोधिमुत्तमम् ।
मन्त्रगुह्यमिदं तत्त्वं कायवाक्चित्तलक्षितम् ॥ २६ ॥

इस लोक का सम्मान करते हुए प्रेरणा करने पर भी यह सर्व बुद्धों का उत्तम बोधि रहस्य है। यह मन्त्र गुह्य है, परम तत्त्व है जो काय, वाक् और चित्त के द्वारा परिलक्षित है।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे कायवाक्चित्ताधिष्ठानपटलः षष्ठोऽध्यायः ॥

षष्ठ पटल पूर्ण हुआ।

अथ सप्तमपटलः

अथ भगवान
सर्वतथागतकायवाक्चित्ताधिपतिर्महासमुच्चयमन्त्रचर्यासंबोधिपटलमुदाजहार।

सर्वकामोपभोगैश्च सेव्यमानैर्यथेच्छतः ।
अनेन खलु योगेन लघुबुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ १ ॥

अब इसके बाद, सर्वतथागत - काय, वाक् और चित्त के अधिपति ने महासमुच्चय - मन्त्रचर्याग्रसंबोधि पटल का उपदेश किया। सभी कामोपभोगों का इच्छापूर्वक सेवन करने से और इसी योग से शीघ्र ही बुद्धत्व की प्राप्ति होती है।

[सर्व काम = रूपादि विषय ही सर्व काम हैं]

सर्वकामोपभोगैस्तु सेव्यमानैर्यथेच्छतः ।
स्वाधिदैवतयोगेन पराङ्गैश्च प्रपूजयेत् ॥ २ ॥

सर्वकामों के उपभोग से, इच्छापूर्वक उनका सेवन करने से और अपने देवता के योग से एवं दूसरे अङ्गों से भी उनकी पूजा करें।

[स्वाधिदैवत योग = मायोपम समाधि]

दुष्करैर्नियमैस्तीव्रैः सेव्यमानो न सिद्धयति ।
सर्वकामोपभोगैस्तु सेवयंश्चाशु सिद्धयति ॥ ३ ॥

अत्यन्त दुष्कर, तीव्र नियमों से आराधना से यह सिद्धि नहीं मिलती किन्तु सर्वकामों के उपभोग पूर्वक सेवा करने से तत्काल सिद्धि मिलती है ।

भगवानभिक्षाशिना न जप्तव्यं नैव भैक्ष्यरतो भवेत् ।
जपमन्त्रैरभिन्नाङ्गः सर्वकामोपभोगकृत् ॥ ४ ॥

भिक्षा का भोजन करके जप नहीं करना चाहिए। और यहाँ तक की भिक्षा भी नहीं करनी है। मन्त्र जप के साथ अभिन्न रूप से रहते हुए सर्व कामों का उपभोग करते ही रहना चाहिए।

कायवाक्चित्तसौस्थित्यं प्राप्य बोधिं समुश्नुते ।

अन्यथाऽकालमरणं पच्यते नरके ध्रुवम् ॥ ५ ॥

काय, वाक् और चित्त में स्थित बोधि को प्राप्त करके, सुखोपभोग करता है। अन्यथा अकाल में मृत्यु होती है और नरक में पक जाते हैं।

बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च मन्त्रचर्याग्रचारिणः ।

प्राप्ता धर्मासनं श्रेष्ठं सर्वकामोपसेवनैः ॥ ६ ॥

बुद्ध, बोधिसत्त्व जो मन्त्र चर्या में अग्र स्थान में हैं, वे ही सर्वकाम के उपभोग के द्वारा श्रेष्ठ धर्मासन प्राप्त करते हैं।

सेवयेत्कामगान् पञ्च ज्ञानार्थिगणिनः सदा ।

तोषयेद्बोधिसत्त्वांश्च रागयेद् बोधिसौरिणा ॥ ७ ॥

ज्ञानार्थी गण हमेशा कामों से उत्पन्न पाँच गुणों का सेवन करे। बोधिसत्त्वों को खुश करे – तुष्ट करे। बोधिरूपी सूर्य से उन्हें रंजित करे।

रूपं विज्ञाय त्रिविधं पूजयेत् पूजनात्मकः ।

स एवं भगवान् विज्ञो बुद्धो वैरोचनः प्रभुः ॥ ८ ॥

त्रिविधि रूप को जान कर पूजनात्मक होकर पूजा करो। वे ही भगवान् विज्ञ हैं जो बुद्ध, वैरोचन और प्रभु भी हैं।

शब्दं त्रिविधं विज्ञाय देवतानां निवेदयेत् ।

स एवं भगवान् बुद्धो बुद्धरत्नाकरः प्रभुः ॥ ९ ॥

तीन प्रकार के शब्दों को जानकर देवताओं को निवेदन करे। वही भगवन् बुद्ध हैं, बुद्ध रत्नाकर = रत्नकेतु प्रभु हैं।

गन्धं ज्ञात्वा तु त्रिविधं बुद्धादौ तु निवेदयेत् ।

स एवं भगवान् बुद्धो रागधर्मधरः प्रभुः ॥ १० ॥

तीन प्रकार के गन्धों को जानकर उन्हें बुद्धों को अर्पित करें। वे ही भगवान् रागधर्म के धर्ता बुद्ध प्रभु हैं।

[गन्धधर = भगवान् अमिताभ हैं]

रसं ज्ञात्वा तु त्रिविधं देवतानां निवेदयेत् ।

स एवं भगवान् बिम्बो बुद्धो योऽमोघवज्रिमान् ॥ ११ ॥

तीन प्रकार के रसों को जानकर देवताओं को निवेदित करें। वे ही भगवान् विम्ब हैं, बुद्ध हैं, जो अमोघ वज्रधारी हैं।

[यहाँ रस – भगवान् अमोघसिद्धि हैं]

स्पर्शं ज्ञात्वा तु त्रिविधं स्वकुलस्य निवेदयेत् ।

स एवं भगवान् वज्री अक्षोभ्याकारलाभिनः ॥ १२ ॥

तीन प्रकार के स्पर्शों को जानकर अपने कुल को निवेदन करें। वे ही भगवान् वज्रधारी हैं अक्षोभ्य के आकार के लाभ के आकांक्षी हैं।

[वह स्पर्श = अक्षोभ्य भगवान् हैं]

रूपशब्दरसादीनां सदा चित्ते नियोजयेत् ।

इदन्तत् सर्वबुद्धानां गुह्यसारसमुच्चयम् ॥ १३ ॥

रूप, रस, शब्द आदि को सदा चित्त में नियोजित करना चाहिए। इसमें सभी बुद्धों का गुह्यसार का समुच्चय हो जाता है।

स्पर्शशब्दादिभिर्मन्त्री देवतां भावयेत् सदा ।

अथवा भावयेत्तत्र कुलभेदविभावनैः ॥ १४ ॥

स्पर्श, शब्द आदि के द्वारा मन्त्र जापक हमेशा देवताओं की भावना करे। अथवा कुल भेद के ज्ञान द्वारा वहाँ उन्हें भावित करे।

[कुल भेद = पाँच कुल]

बुद्धानुस्मृतिसंञ्चोद्योपस्थानस्मृतिभावना ।

भावनाकायवाक्चित्तवज्रानुस्मृतिभावना ॥ १५ ॥

कुलानुस्मृतियोगेन क्रोधानुस्मृतिभावना ।

समयानुस्मृतियोगात् भावयन् बोधिमाप्नुयात् ॥ १६ ॥

बुद्धानुस्मृति के द्वारा प्रेरित करके और उपस्थान स्मृति भावना के द्वारा, और काय वाक् चित्तवज्रभावना, अनुस्मृति भावना, कुल स्मृति योग द्वारा क्रोधानुस्मृति भावना और समयानुस्मृति योग द्वारा भावना = ध्यान करते हुए बोधि प्राप्त करे।

[यहाँ षट्स्मृति = छह स्मृतियों की भावना का उल्लेख किया है]

तां तां तच्छक्तिकां प्राप्य योषितं रूपसुप्रभाम् ।
प्रच्छन्नमारमेत् पूजामधिष्ठानपदस्मृतिः ॥ १७ ॥

उन उन शक्तियों को प्राप्त करके सुन्दर स्त्रीरूप को भी प्राप्त करके अधिष्ठान पद स्मृति के द्वारा एकान्त में शान्ति पूर्वक पूजा एवं आराधना प्रारंभ करें।

तथागतमहाभासां लोचनां वा विभावयेत् ।
द्वयेन्द्रियसमापत्या बुद्धसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १८ ॥

न् आभासवाले तथागतगुणयुक्त लोचना की भावना करे। द्वय-इन्द्रियों के समापत्ति पूर्वक बोधि सिद्धि प्राप्त करें।

[वैरोचन योगिनी ही भावना का विषय है। द्वय इन्द्रिय = स्त्रीपुरुषइन्द्रिय। अन्योन्य अनुरागपूर्वक आलिङ्गनादि कर्मानुष्ठान, बुद्ध = महावज्रधर]

हूँकारं च ओंकारं च पँकारं च विकल्पयेत् ।
पञ्चरश्मिसमाकीर्णं वज्रपद्मं च भावयेत् ॥ १९ ॥

हूँ कार, ऊँ कार, पँ कारों का विकल्पपूर्वक पञ्चरश्मियों से युक्त वज्रपद्म की भावना करें।

वज्रांशुमिव सज्वालां भावयेत्तां मनोरमाम् ।
बुद्धानुस्मृतियोगादीन् भावयेद् बोधिकाङ्क्षिणः ॥ २० ॥

वज्र के रश्मियों के तरह अच्छे ज्वालाओं से युक्त उस मनोरमा का ध्यान करे। और बुद्धानुस्मृति योग आदियों को भी बोधि चाहने वाला योगी ध्यान करे।

[यहाँ लोचना देवी हैं]

तत्र कथं बुद्धानुस्मृतिभावना ।
द्वयेन्द्रिय समापत्या बुद्धबिम्बं विभावयेत् ।
रोमकूपाग्रविवरे बुद्धमेघान् स्फरेद्बुधः ॥ २१ ॥

कैसे बुद्धानुस्मृति भावना करनी है? स्त्री-पुरुष इन्द्रियों के संयोग पूर्वक बुद्धविम्ब का ध्यान करे। साथ ही रोम कूपों के अग्रछिद्रों में बुद्ध के मेघों को विद्वान् प्रकाशित करे।

यहाँ बुद्ध – वैरोचन हैं। भगः परमार्थ सत्य है। उसमें लीन होने से लिङ्ग है।

[बुधः = स्वभावज्ञ]

तत्र कथं धर्मानुस्मृतिभावना।

द्वयेन्द्रियसमापत्या वज्रधर्मं विभावयेत् ।

रोमकूपाग्रविवरे धर्ममेघान् स्फरेद्बुधः ॥ २२ ॥

फिर धर्मानुस्मृति भावना वहाँ कैसे होगी? दो इन्द्रियों की समापत्तिपूर्वक वज्रधर्म की भावना होती है। उसी प्रकार रोमकूपाग्र विवर में धर्ममेघों को स्फुरित करना चाहिए विद्वान् को।

[वज्रधर्म = अक्षोभ्य]

तत्र कथं वज्रानुस्मृतिभावना।

द्वयेन्द्रिय समापत्या वज्रसत्त्वं विभावयेत् ।

रोमकूपाग्रविवरे वज्रमेघान् स्फरेद्बुधः ॥ २३ ॥

फिर कैसे वहाँ वज्रानुस्मृति होती है? द्वयेन्द्रिय समापत्तिपूर्वक वज्रसत्त्व की भावना करे। और रोम कूपों के अग्रविवरों में वज्र मेघों को प्रकाशित करे।

तत्र कथं कुलानुस्मृतिभावना।

द्वयेन्द्रियसमापत्या बुद्धबिम्बं विभावयेत् ।

रोमकूपाग्रविवरे कुलमेघान् स्फरेद्बुधः ॥ २४ ॥

वहाँ कैसे फिर कुलानुस्मृति की भावना करनी चाहिए? उस अवसर पर बुद्धविम्बों का ध्यान करना चाहिए। और रोमकूपों के अग्रविवरों में कुल मेघों को प्रकाशित करे।

तत्र कथं क्रोधानुस्मृतिभावना?

द्वयेन्द्रियसमापत्या क्रोधेश्वरं विभावयेत् ।

रोमकूपाग्रविवरे क्रोधमेघान् स्फरेद्बुधः ॥ २५ ॥

फिर कैसे क्रोधानुस्मृतिभावना करनी है? क्रोधेश्वर की भावना करें। रोमकूपों के अग्रविवरों में क्रोध मेघों को प्रकाशित करे।

तत्र कथं समयानुस्मृतिभावना?

स्ववज्रं पद्मसंयुक्तं द्वयेन्द्रियप्रयोगतः ।

स्वरेतोबिन्दुभिर्बुद्धान् वज्रसत्त्वांश्च पूजयेत् ॥ २६ ॥

कैसे समयानुस्मृति भावना होगी? द्वयेन्द्रिय प्रयोग के द्वारा पद्म संयुक्त स्ववज्र

को अपने वीर्य के बिन्दुओं से बुद्ध और वज्रसत्त्वों की पूजा अभिषेक करें ।

[क्रोध = अमोघसिद्धि हैं। समय = महावज्रधर। स्वरेत = अपना वीर्य = जिह्वा को तालु के मध्य में लगाकर पद्म और वज्र के घर्षण के तरह ही उस जगह = तालु से निसृत अमृत ही वीर्य है। उससे बुद्ध आदि रूप-स्कन्ध आदि को और वज्रसत्त्व = चित्त चैतसिकों को तृप्त करना ही अभिषेक है। यही अमृत पान है।]

तत्र कथं मण्डलानुस्मृतिभावना?

द्वयेन्द्रियसमापत्या स्वरेतस्तु विचक्षणः ।
निःसारयेत् सदा योगी मण्डलान् मण्डलाकरान् ॥ २७ ॥

वहाँ पर मण्डलानुस्मृति कैसे करनी है? विचक्षण व्यक्ति अपने रेत = वीर्य को मण्डल और मण्डलाकारों के लिए बाहर निःसतिर = (बहाये =) करें।

तत्र कथं कायानुस्मृतिभावना?

यत्कायं सर्वबुद्धानां पञ्चस्कन्धप्रपूरितम् ।
बुद्धकायस्वभावेन ममापि तादृशं भवेत् ॥ २८ ॥

वहाँ पर कैसे कायानुस्मृति भावना होती है? सर्व बुद्धों का जो पञ्चस्कन्धों से पूरित काय है, उसी बुद्ध काय के स्वभाव से युक्त मेरा काय भी वैसा ही बन जाय - यही कायानुस्मृति हैं।

[काय = वैरोचन हैं]

तत्र कथं वाचानुस्मृतिभावना?

यदेव वज्रधर्मस्य वाचो निर्युक्ति सम्पदः ।
ममापि तादृशो वाचो भवेद्धर्मधरोपमः ॥ २९ ॥

वाचानुस्मृति कैसे वहाँ करें? जो वचन वज्रधर्म का है और वह युक्ति सम्पत्ति से पूर्ण है। मेरी वाणी भी उसी प्रकार धर्मधर के तरह ही हो।

[वाणी = अमिताभ हैं]

तत्र कथं चित्तानुस्मृतिभावना?

यच्चित्तं समन्तभद्रस्य गुह्यकेन्द्रस्य धीमतः ।
ममापि तादृशं चित्तं तद्वद्वज्रधरोपमम् ॥ ३० ॥

वहाँ चित्तानुस्मृति भावना कैसे करनी है? जैसा चित्त, गुह्य केन्द्रित धीमान् समन्तभद्र का है उसी प्रकार, वज्रधर सदृश मेरा भी चित्त हो जाय।

[यहाँ पर चित्त = अक्षोभ्य हैं, गुह्य = अद्वय ज्ञान। उसको कहने से गुह्यक]

तत्र कथं सत्त्वानुस्मृतिभावना?

यच्चित्तं सर्वसत्त्वानां कायवाक्चित्तलक्षितम् ।
ममापि तादृशं चित्तं आकाशसमसारिणम् ॥ ३१ ॥

वहाँ पर कैसे सत्त्वानुस्मृति भावना करनी चाहिए? सभी प्राणियों का जो चित्त है और वह काय, वाक् और चित्त से उपलक्षित है, मेरा चित्त भी उसी प्रकार आकाश के तरह व्यापक और शून्य हो।

[सत्त्व = अण्डज, जरायुज, संस्वेदज और औपपादुक ही हैं। आकाश-समसारि = तत्त्वविद्]

तत्र कथं सर्वमन्त्रमूर्तिकायवाक्चित्तानुस्मृतिभावना?

यत्कायं मन्त्रवज्रस्य वाचा कायविभावनम् ।
ममापि तादृशं चित्तं भवेन्मन्त्रधरोपमम् ॥ ३२ ॥

वहाँ पर कैसे सर्वमन्त्रमूर्ति काय, वाक् और चित्तानुस्मृति भावना होगी? जो शरीर मन्त्र वज्र का है, और वचन के द्वारा काय का अनुस्मरण किया जाता है मेरा भी वैसा ही चित्त हो, मन्त्रधर के समान ही।

[मन्त्र = वचन। मन्त्रधरोपम = मन्त्र = तथागत, उनको धारण करने से मन्त्रधरे महावज्रधर]

तत्र कथं समयानुस्मृतिभावना?

समयाक्षरेन्द्रविधिना विधिवत्फलकांक्षिणः ।
मानयेत् ताथागतं व्यूहं सुतरां सिद्धिमाप्नुयात् ॥ ३३ ॥

वहाँ समयानुस्मृति भावना कैसे होगी? समय-अक्षर-इन्द्र विधि के द्वारा विधिपूर्वक फल का आकांक्षी तथागत गुह्य की पूजन करे वह निश्चय ही सरल तरीके से सिद्धि प्राप्त करेगा।

[समयः = प्रभास्वर]

तत्र कथं प्रज्ञापारमितासमयानुस्मृतिभावना?

प्रकृतिप्रभास्वराः सर्वे अनुत्पन्ना निराश्रवाः ।
न बोधिर्नाभिसमयो नवान्तं न च सम्भवः ॥ ३४ ॥

वहाँ पर कैसे प्रज्ञापारमिता समयानुस्मृति भावना की जाती है? सभी

प्राणी प्रकृति से ही प्रभास्वर हैं, अनुत्पन्न हैं निराश्रव हैं और न बोधि है, न अभिसमय ही है, न अन्त है, न सम्भव ही है।

[प्रज्ञा = आलोक। उससे प्रज्ञा-उपाय उपलब्ध है। उनके भी पार जाना ही प्रज्ञा पारमिता है। वही परमार्थ सत्य है और वही समय भी है]

तत्र कथमनुत्पादानुस्मृतिभावना?

प्रकृतिप्रभास्वरं सर्वं निर्णिमित्तं निरक्षरम् ।

न द्वयं नाद्वयं शान्तं खसदृशं सुनिर्मलम् ॥ ३५ ॥

वहाँ कैसे अनुत्पाद स्मृति भावना होती है? सब कुछ प्रकृति से ही प्रभास्वर है, सब कुछ निमित्त रहित है और शाश्वत भी नहीं है। द्वय नहीं है, अद्वय भी नहीं है, आकाश जैसा ही निर्मल है।

तत्र कथं द्वेषकुलपूजानुस्मृतिभावना?

द्वादशाब्दिकां संप्राप्य योषितं स्थिरचेतसम् ।

कुलयोगप्रभेदेन स्वशुक्रेण प्रपूजयेत् ॥ ३६ ॥

वहाँ कैसे द्वेषकुलपूजानुस्मृति भावना होती है? १२ वर्षीय, स्थिर चित्त वाली स्त्री को पाकर कुल योग प्रभेदात्मक अपने शुक्र से उनकी पूजा करें।

अनेन ताथागतं कायं चित्तं वज्रधरस्य च।

वाचं धर्मधराग्रस्य प्राप्येतेहैव जन्मनि ॥ ३७ ॥

इससे तथागत काय, चित्त और वज्रधर की वाणी जो धर्मधराग्र की है, वह इसी जन्म में प्राप्त होती है।

कायवाक्चित्तसंसिद्धौ ये चान्ये हीनजाः स्मृताः ।

सिद्ध्यन्ति तस्य जापेन त्रिवज्राभेद्यभावनैः ॥ ३८ ॥

काय, वाक् और चित्त की संसिद्धि के लिए जो भी अन्य हीन व्यक्तियाँ हैं, अभेद्य त्रिवज्र की भावना पूर्वक जप करने से वे भी सिद्धि प्राप्त करते हैं ।

[द्वेष = अक्षोभ्य चित्तवज्र हैं।]

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे मन्त्रचर्यापटलः सप्तमोऽध्यायः ।

सप्तम पटल पूर्ण हुआ।

अष्टमः पटलः

अथ भगवान् रत्नकेतुस्तथागतो भगवन्तं सर्वतथागतकायवाक्चित्ताधिपतिं परमेश्वरं महावज्रधरमनेन स्तोत्रराजेणाध्येषयामास ।

वज्रसत्त्व महायानाकाशचर्य विशोधक ।
समन्तभद्र पूजाग्र देश पूजां जिनोत्तम ॥ १ ॥

अब, भगवान् रत्नकेतु तथागत सर्वतथागत, काय चित्त वाक् के अधिपति भगवान् वज्रधर परमेश्वर को निम्न स्तोत्रराज के द्वारा प्रार्थना करते हुए कहते हैं – हे प्रभु! हे वज्रराज! महायान रूपी आकाश चर्या के आप ही संशोधक हैं। हे समन्तभद्र! पूजा के अग्राधिकारी भी आप ही हैं, हे जिनोत्तम! पूजा के विधि का रहस्य बतायें।

रागद्वेषमोहवज्र वज्रयानप्रदेशक ।
आकाशधातुकल्पाग्र घोष पूजां जिनालय ॥ २ ॥

राग, द्वेष और मोह वज्रस्वरूप हे भगवन्! आप ही वज्रयान के उपदेशक हैं। हे आकाश धातु के समान व्यापक प्रभु! हे जिनालय पूजा के विषय में आप कृपया बतायें।

मोक्षमार्गप्रणेता च त्रियानपथप्रवर्तक ।
बुद्ध सौभाग्यशुद्धात्म भाष पूजां नरोत्तम ॥ ३ ॥

आप ही मोक्षमार्ग के प्रणेता हैं, त्रियान के पथप्रदर्शक भी आप ही हैं, हे बुद्ध! हे सौभाग्य शुद्धात्मन्! हे नरोत्तम! पूजा को कृपया बतायें ।

बोधिचित्त विशालाक्ष धर्मचक्रप्रवर्तक ।
कायवाक्चित्तसंशुद्ध वज्रयान नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

हे बोधिचित्त! हे विशाल नेत्र वाले! हे धर्मचक्र के प्रवर्तक! हे काय,

वाक् और चित्त शुद्ध प्रभु! हे वज्रयान स्वरूप भगवन्! आपको नमस्कार है।

[राग = उपाय प्रकृति। द्वेष = प्रज्ञा प्रकृति। महामोह = अविद्या प्रकृति। बोधि = परमार्थ सत्य। चित्त = संवृति सत्य विशालाक्ष = विशाल नेत्र – वे हैं – मांस, दिव्य, प्रज्ञ, धर्म और बुद्ध नेत्र वाले]

अथ वज्रधरो राजा सर्वाकाशमहाक्षरः ।
सर्वाभिषेकसर्वार्थः सर्वेशो वज्ररत्नधृक्॥ ५ ॥
पूजां ताथागतीं श्रेष्ठां त्रिवज्राभेद्यसंस्थिताम् ।
कायवाक्चित्तसौभाग्यां भाषते जिनसम्भवाम् ॥ ६ ॥

अब इसके बाद सर्व आकाश स्वरूप महाक्षरात्मक वज्रधर राजा, सभी अभिषेकों का मूल, सभी बुद्धों के ईश, वज्र रत्न को धारण करने वाले भगवान् तथागत सम्बन्धी अति उच्च त्रिवज्र के द्वारा अभेद्य अवस्था में स्थित, काय वाक् और चित्त सौभाग्य स्वरूप, बुद्धों से समुत्पन्न पूजा के विषय में बताने जा रहे हैं।

प्राप्य कन्यां विशालाक्षीं रूपयौवनमण्डिताम् ।
पञ्चविंशतिकां गुह्ये तिर्यगस्याः प्रकल्पयेत् ॥ ७ ॥

रूप यौवन से युक्त विशाल आँखों वाली २५ वर्ष की कन्या को प्राप्त करके गुह्य में उसे तिरछा करके लिटा देना चाहिए।

[विशाल दो नेत्र = सत्य द्वय रूप नेत्र। २५ वर्ष वाली = २५ देवताओं से युक्त महामुद्रा जो स्वाधिष्ठान चक्र में है। प्राप्त करके = गुरुमुख से जानकर। तिर्यक् – तीरछा करना = वह पहले खड़ी है उसे अपने अनुरूप करना। कन्या = प्रज्ञा]

शुचौ विविक्ते पृथिवीप्रदेशे जिनात्मजं शान्तशिवालये च ।
विशुद्धतोयादिविलेपनं वा कुर्वीत शश्वज्जिनपूजहेतोः ॥ ८ ॥

पवित्र, एकान्त पृथिवी प्रदेश में, शान्त, शिवालय में भी मन्त्रधारक साधक उसे शुद्ध जल गन्ध आदि का विलेपन करे क्योंकि नित्य जिनों के पूजा के लिए ।

स्तनान्तरं यावच्छिखान्तमध्ये वल्गान्तरे चापि न्यसेद्विधिज्ञः ।

नाभिकटिगुह्ये जिनात्मजानां न्यासं प्रकुर्यात् कुलपञ्चकानाम् ॥ ९ ॥

स्तनों से लेकर केश राशि तक और इसी प्रकार गले में भी विधिज्ञ न्यास करे। नाभि में, कटि भाग में, गुह्य में भी जिनात्मज कुलपञ्चकों का न्यास करें उसी २५ वर्षीय युवती के शरीर में।

[स्तनान्तर - हृदय स्थान। यहाँ पर हूँकार से उत्पन्न अक्षोभ्य कुल की स्थापना ही है। केशों में ऊँकार से उत्पन्न वैरोचन कुल है। कण्ठ प्रदेश में = मुख में 'आ:' कार से उत्पन्न अमिताभ का न्यास करें। दोनों पदों के बीच में जंघाओं के मध्य में 'हा' कार से उत्पन्न अमोघसिद्धि को रखें। विधिज्ञ = उत्पत्तिक्रम को जानने वाला। नाभि-कटि-गुह्यों में स्वकार से उत्पन्न रत्न संभव कुल को स्थापित करे]।

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् ज्ञानसागरम् ।

आत्मानं चन्द्रमध्यस्थं भावयेद् हृदये पुनः ॥ १० ॥

आकाश धातु के मध्य में रहने वाले ज्ञान सागर का ध्यान करें। फिर हृदय में अपने को चन्द्र मण्डल मध्यस्थ के रूप में ध्यान करें।

संहारं च प्रकुर्वीत यदीच्छेत् शान्तवज्रधृक् ।

चतूरत्नमयं स्तूपं रश्मिज्वालाविभूषितम् ॥ ११ ॥

यदि शान्तवज्रधृक् चाहते हैं तो संहार भी करें। वह संहार चार रत्नमय स्तूप है जिसमें रश्मि ज्वालाओं का विभूषण लगा ही रहता है।

ज्ञानोदधिं स्त्रियं प्रस्थाप्य आलयन्तु विचिन्तयेत् ।

स्वरोमकूपविवरे पूजामेघान् स्फरेद्बुधः ॥ १२ ॥

ज्ञान के समुद्ररूप स्त्री को प्रस्थापित करते हुए आलय की भावना करनी चाहिए। अपने रोमकूप के छिद्रों में पूजा के मेघों को विद्वान् प्रकाशित करें।

पद्मं पञ्चविधं ज्ञात्वा उत्पलं च विचक्षणः ।

जातिकां त्रिविधं कृत्वा देवतानां निवेदयेत् ॥ १३ ॥

पाँच प्रकार के पद्मों को लाकर और वह उत्पल (कमल) जाति का हो, विद्वान् और तीन प्रकार के जातियों की कल्पना करके देवताओं को निवेदन

करें।

कर्णिकारस्य कुसुमं मल्लिकां यूथिकां तथा ।
करवीरस्य कुसुमं ध्यात्वा पूजां प्रकल्पयेत् ॥ १४ ॥

कर्णिकार के फुलों को, मल्लिका के फूल, यूथिका और करवीर के फूलों का भी ध्यान करके पूजा करनी चाहिए ।

[ध्यान बल से ये फूल उत्पन्न करके तथागतों को निवेदन करना चाहिए]।

योजनशतविस्तारं भावयेत् चक्रमण्डलम् ।
कुलानान्तु प्रकुर्वीत सदाध्यानविचक्षणः ॥ १५ ॥
पद्मं वज्रं तथा खड्‌गं उत्पलं भावयेद्बुधः ।
योजनकोटिविस्तारं चतुरस्त्रं सुशोभनम् ॥ १६ ॥

पाँचों कुलों के चक्रमण्डल सौ योजन तक फैला हुआ निर्मित करना चाहिए हमेशा ध्यान में लगे हुए साधक को और पद्म, वज्र, खड्‌ग और उत्पल की भावना करनी चाहिए। वह कोटियोजन विस्तारयुक्त चारों तरफ फैला हुआ सुन्दर होना चाहिए।

चतूरत्नमयं चैत्यं स्वच्छं प्रकृतिनिर्मलम् ।
भावयेच्चामरं प्राज्ञः कुलानां पूजहेतुना ॥ १७ ॥

चारों रत्नमय वह चैत्य हो जो स्वच्छ और प्रकृति से ही निर्मल होना चाहिए और प्राज्ञ साधक योगी पूजा के लिए चमर की भावना करे। उसे ध्यान से निष्पन्न करे।

पञ्चकामगुणैः स्वच्छां यादवीं च समारभेत् ।
रत्नवस्त्रादिभिर्नित्यं पूजयेद्बोधिकांक्षया ॥ १८ ॥

जिसे बोधि प्राप्ति की इच्छा हो उसे स्वच्छ पूजा विधि का आरम्भ करना चाहिए और रत्न, वस्त्र आदि से नियमित रूप से पूजा करनी चाहिए।

पञ्चोपहारपूजाग्रैर्देवतां तोषयेत् सदा ।
कन्यां रत्नकरीं श्रेष्ठां नानारत्नाद्यलङ्कृताम् ॥ १६ ॥
दद्याद्वै सर्वबुद्धानां सिद्धये तीव्रसाधकाः ।
सप्तरत्नैरिदं कृत्वा परिपूर्णं विचक्षणः ॥ २० ॥
दद्यात् प्रतिदिनं प्राज्ञो दानाब्धिसिद्धिकाङ्क्षया ।
अर्चिपतिमुद्रां समादाय बुद्धमण्डलमध्यतः ॥ २१ ॥

पञ्चोपहारात्मक पूजा से सदैव देवताओं को परितुष्ट करें। रत्न की कत्री, अनेक रत्नों से अलंकृत श्रेष्ठ कन्या का भी उपहार स्वरूप देवताओं को अर्पण करना चाहिए। उसे सर्वतथागतों को सिद्धि प्राप्ति हेतु तीव्र साधक प्रदान करें। सातों रत्नों से यह पूर्ण करके विचक्षण व्यक्ति जो प्राज्ञ हो, दानाब्धि सिद्धि की आकांक्षा से उन्हें अर्जित करें। वह अधिपति उस मुद्रा को लेकर बुद्ध मण्डल के मध्य से तथागतों को अर्पित करें।

दद्यात् स्पर्शसमायोगं बुद्धानां रागबुद्धिना ।
आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् बुद्धमण्डलम् ॥ २२ ॥

राग बुद्धि से स्पर्श समायोग से बुद्धों को अर्पित करें और आकाश धातु में स्थित बुद्ध मण्डल का ध्यान करें।

बिम्बं ताथागतमयं विधिभिः पूजयन्ति ये ।
तूर्णं सम्प्राप्य सुभगां चारुवक्त्रां सुशोभनाम् ॥ २३ ॥
अधिष्ठानपदं ध्यात्त्वा तत्त्वपूजां प्रकल्पयेत् ।
गुह्यशुक्रं विशालाक्षो भक्षयेत् दृढबुद्धिमान् ॥ २४ ॥

तथागतमय विम्ब को विधिपूर्वक जो पूजा करते हैं, वे तत्काल ही सुन्दर मुखवाली, सौभाग्यवती, अति सुन्दरी को प्राप्त करके अधिष्ठान पद का ध्यान करके, तत्त्व की पूजा करें। और विशाल नेत्र वाला वह दृढ बुद्धिमान् गुह्यशुक्र का भक्षण करें।

इदं तत् सर्वमन्त्राणां कायवाक्चित्तपूजनम् ।
मन्त्रसिद्धिकरं प्रोक्तं रहस्यं ज्ञानवज्रिणाम् ॥ २५ ॥

इस प्रकार यह सब, सभी मन्त्रों का काय, वाक् और चित्त का पूजन कहलाता है। इस ज्ञान वज्रिओं के मन्त्र सिद्धि कारक रहस्य को मैंने बताया है।

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे चित्तसमयपटलः अष्टमोऽध्यायः ।

अष्टम पटल पूर्ण हुआ।

अथ नवमः पटलः

अथ वज्रधरो राजा सर्वाकाश महाक्षरः ।
सर्वाभिषेकचर्याग्रः सर्ववित् परमेश्वरः ॥ १ ॥
कायवाक्चित्तसंयोगं त्रिवज्राभेद्यमण्डलम् ।
घोषयेत् परमं रम्यं रहस्यं बुद्धज्ञानिनाम् ॥ २ ॥

अथ – गुह्याभिषेक के बाद वज्रधर, राजा, सर्वाकाश, महाक्षर, सर्वाभिषेक के अग्राचार्य, सर्ववित्, परमेश्वर, काय, वाक् और चित्त के संयोग रूप त्रिवज्रात्मक अभेद्यमण्डल, जो ज्ञानीबुद्धों के लिए परम रमणीय रहस्य है उसे घोषित करें ।

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद्बुद्धमण्डलम् ।
अक्षोभ्यवज्रं भावित्वा पाणौ वज्रं विभावयेत् ॥ ३ ॥

आकाश धातु के मध्य में स्थित बुद्ध मण्डल का ध्यान करें और अक्षोभ्य वज्र को, जिनके हाथ में वज्र है ऐसी भावना करें ।

स्फुलिङ्गगहनाकीर्णं पञ्चरश्मिप्रपूरितम् ।
बुद्धस्य प्रभुतां ध्यात्वा तत्र वज्रेण चूर्णयेत् ॥ ४ ॥

जलते हुए अङ्गारों से गहन रूप में व्याप्त, पाँच रश्मियों से प्रपूरित, बुद्ध के प्रभुता का ध्यान करके वहाँ पर वज्र द्वारा खण्डित करें ।

कायवाक्चित्तसंयोगं अष्टवज्रेण चूणितम् ।
भाषयेत् परमं ध्यानं चित्तसिद्धिसमावहम् ॥ ५ ॥

काय, वाक् और चित्तों का जो संयोग है उसे अष्टवज्र के द्वारा चूर्णित कर दें। उसके बाद चित्त और सिद्धि समन्वित परम ध्यान की भावना करनी चाहिए ।

अनेन गुह्यवजेण सर्वसत्त्वं विघातयेत् ।
येऽप्यस्य तस्य वज्रस्य बुद्धक्षेत्रजिनौरसाः ।
द्वेषकुलसमायोगं ज्ञेयः सर्वकुलोन्नतम् ॥ ६ ॥

इसी गुह्य वज्र के द्वारा सभी सत्त्वों का विघातन करना चाहिए। जो भी उस वज्र के बुद्ध क्षेत्रस्थ बुद्ध पुत्र हैं, वे सब द्वेष कुल में समापन्न होकर सर्वकुल के उन्नत स्थान में हैं ऐसा जानना चाहिए।

अथ वज्रधरो राजा ज्ञानमोक्षप्रसाधकः ।
स्वभावशुद्धनिर्लेपो बोधिचर्याप्रवर्तकः ॥ ७ ॥
भाषते समयं तत्त्वं बुद्धबोधिप्रसाधकम् ।
आकाशधातुमध्यस्थं भावयेच्चक्रमण्डलम् ॥ ८ ॥
वैरोचनं विभावित्वा सर्वबुद्धान् विभावयेत् ।
सर्वरत्नप्रयोगेण वज्रबिम्बं प्रकल्पयेत् ॥ ९ ॥

अब, इसके बाद वज्रधर, राजा, ज्ञान और मोक्ष के साधक, स्वभाव शुद्ध निर्लेप और बोधिचर्या के प्रवर्तक भगवान् - बुद्ध बोधि प्रसाधक समय तत्त्व को बता रहे हैं। आकाश धातु में अवस्थित चक्रमण्डल की भावना करनी चाहिए। वहाँ पर भगवान् वैरोचन का ध्यान करने के बाद सभी बुद्धों का ध्यान करना चाहिए। उसके बाद सभी रत्नों के प्रयोग द्वारा वज्रविम्ब की कल्पना करें।

हरणं सर्वद्रव्याणां त्रिवज्रेणविभावयेत् ।
भवन्ति चिन्तामणिसमा द्रव्योदधिप्रपूरिताः ॥ १० ॥

सभी द्रव्यों का हरण, त्रिवज्र द्वारा भावना करने पर वे सभी समस्त-द्रव्य राशि से परिपूरित और चिन्तामणि समान हो जाते हैं।

औरसाः सर्वबुद्धानां भवन्ति मुनिपुंगवाः ।
मोहकुलसमं तत्त्वं ज्ञेयं सर्वकुलोद्भवैः॥ ११ ॥

वे सभी सर्व बुद्ध के औरस = पुत्र ही होते हैं, वे ही मुनिपुंगव होते हैं। इसीलिए मोहकुल के तत्त्वों को जानना चाहिए सर्वकुलोद्भव बुद्ध पुत्रों के द्वारा।

अथ वज्रधरो राजा रागमोहप्रसाधकः ।
गुह्यशुद्धनिरालम्ब उद्घोषयति मण्डलम्॥ १२ ॥

इसके बाद वज्रधर, राजा, रागमोहप्रसाधक भगवान् गुह्य शुद्ध निरालम्बात्मक मण्डल का उद्घोषण करते हैं।

आकाशधातुमध्यस्थं भावयेत्पद्ममण्डलम् ।
अमिताभं प्रभावित्वा बुद्धैः सर्वं प्रपूरयेत् ॥ १३ ॥

आकाश धातु के बीच में अवस्थित पद्ममण्डल की भावना करनी चाहिए। इसके बाद भगवान् अमिताभ का ध्यान करके बुद्धों के द्वारा सभी लोकों को ढक देना चाहिए।

योषिदाकारसंयोगं सर्वेषां तत्र भावयेत् ।
चतुःसमययोगेन इदं वज्रनयोत्तमम् ॥ १४ ॥

स्त्रियों के आकार से परिपूरित हुआ है ऐसी भावना करनी चाहिए। चतु:समय योग के कारण यह वज्रयान अत्यन्त उत्तम हो जाता है।

द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वांस्तानुपभुञ्जयेत् ।
इदन्तत् सर्वबुद्धानां त्रिकायाभेद्यभावनम् ॥
रागकुलसमायोगं भावनीयं तु मन्त्रिणा ॥ १५ ॥

पद्म और वज्र रूप दोनों इन्द्रियों के समागम पूर्वक उन सभी का उपभोग करें। यही वह सभी बुद्धों का त्रिकाय अभेद्य भाव है। इसीलिए मन्त्रजापक को रागकुल के समायोग की भावना करनी चाहिए।

अथ वज्रधरो राजा वज्रमन्त्रार्थसाधकः
ज्ञानसम्भूतनैरात्म्य इदं वचनमब्रवीत् ॥ १६ ॥
आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद्बुद्धमण्डलम् ।
वज्रामोघं प्रभायित्वा सर्वबुद्धांस्तु भावयेत् ॥ १७ ॥
मृषावादं वज्रपदं सर्वबिम्बान् विभावयेत् ।
विसम्बादयेज्जिनान् सर्वांस्तथा सर्वजिनालयान् ॥ १८ ॥
इदन्तत् सर्वबुद्धानां वागाकाशं सुनिर्मलम् ।
मन्त्रसिद्धिकरं प्रोक्तं रहस्यं ज्ञानबुद्धिनाम् ॥ १९ ॥

अब इसके बाद वज्र मन्त्रार्थ साधक, सबके स्वामी, भगवान् वज्रधर जो नैरात्म्य ज्ञान स्वरूप है ने यह वचन कहा –आकाश धातु के मध्य में स्थित बुद्ध मण्डल का ध्यान करना चाहिए। अमोघ वज्र का ध्यान करके सर्वबुद्धों की भावना करें। मृषावाद ही वज्रपद है इसीलिए सर्वविम्बों की भावना करनी चाहिए। अतएव सभी जिनों को विसम्वादित = वञ्चना करे जो सर्वजिन के आलय हैं। यह सब उन बुद्धों का वचन रूपी आकाश अत्यन्त निर्मल है। और मन्त्र सिद्धि करके ही ऐसा कहा भी गया है। अतएव ज्ञान बुद्धियों के लिए रहस्यपूर्ण भी है। इसी से समाकर्षण कुल को यथार्थ रूप में प्रेरित करना चाहिए ।

[झूठ बोलना = दूसरों के सुख के लिए और रत्नमयों के उपकारार्थ ही आचार्य असत्य बोलना कहते हैं।]

समया कर्षणकुलं प्रेरणीयं यथार्थतः ।
अथ वज्रधरो राजा त्रिवज्राभेद्यवज्रिणम् ।
सिद्धिवज्रप्रणेता च इदं वचनमब्रवीत् ॥ २० ॥
आकाशधातुमध्यस्थं भावयेत् समयमण्डलम् ।
रत्नकेतुं प्रभावित्वा सर्वबिम्बैरिदं स्फरेत् ॥ २१ ॥
पारुष्यवचनाद्यैस्तु सेवयन् ज्ञानमाप्नुयात् ।
इत्याह भगवान् सर्वतथागतवज्रव्यूहः ॥ २२ ॥

इतना सब कहने के बाद भगवान् सबके स्वामी वज्रधर ने त्रिवज्रा भेद्य वज्री को यह वचन कहा, वह वचन सिद्धि वज्र के प्रणेत्री भी है। आकाश धातु मध्य में स्थित समय मण्डल का ध्यान करना चाहिए। उसी में रत्नकेतु की भावना करके सम्पूर्ण विम्बों के द्वारा यह प्रकाशित करना चाहिए। पारुष्य = झूठ वचनों के द्वारा सेवा करने से ही ज्ञान प्राप्त होता है। यही सर्वतथागत वज्रव्यूह भगवान् ने कहा है ।

अथ खलु सर्वतथागतसमयवज्रकेतुप्रमुखास्ते महाबोधिसत्त्वा आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ता इदं वाग्वज्रघोषमकार्षुः । किमयं भगवान् सर्वतथागताधिपतिः त्रैधातुव्यतिरिक्तान् सर्वलोकधातुव्यतिरिक्तान्

सर्वतथागतसर्वबोधिसत्त्वपर्षन् मध्ये अद्भुतवाक्यार्थवज्रपदं भाषते स्म। अथभगवन्तः

सर्वतथागतास्तानभिलाप्यानभिलाप्यबुद्धक्षेत्रसुमेरुपरमाणुरजः समान् सर्वतथागतसमयवज्रकेतुप्रमुखान् महाबोधिसत्त्वानेवमाहुः। मा कुलपुत्रा इमां हीनसंज्ञां जुगुप्सितसंज्ञां चोत्पादयथ। ततः कस्माद्धेतोः। रागचर्या कुलपुत्रा यदुत बोधिसत्त्वचर्या यदुत अग्रचर्या। तद्यथा अपि नाम कुलपुत्रा आकाशं सर्वत्रानुगतं आकाशानुगतानि सर्वधर्माणि। तानि न कामधातुस्थितानि न रूपधातुस्थितानि नारूपधातुस्थितानि न चतुर्महाभूतस्थितानि। एवमेव कुलपुत्राः सर्वधर्मा अनुगन्तव्याः। इदमर्थवशं विज्ञाय सर्वतथागताः सर्व सत्त्वानामाशयं विज्ञाय ततो धर्मं देशयन्ति।

एवमेव कुलपुत्रा आकाशधातुपदनिरुक्त्या ते तथागतसमया अनुगन्तव्याः। तद्यथा अपि नाम कुलपुत्राः काण्डं च मथनीयं च पुरुषहस्तव्यायामं च प्रतीत्यधूमः प्रादुर्भवति अग्निमभिवर्तयति सचाग्निर्न काण्डस्थितो न मथनीयस्थितो न पुरुषहस्तव्यायामस्थितः। एवमेव कुलपुत्राः सर्वतथागतवज्रसमया अनुगन्तव्या। गमनागमनाद्यैरिति। अथ ते सर्वे बोधिसत्त्वा अद्भुतप्राप्ता विस्मयोत्फुल्ललोचना इदं घोषमकार्षुः।

महाद्भुतेषु धर्मेषु आकाशसदृशेषु च।
निर्विकल्पेषु शुद्धेषु संवृतिस्तु प्रगीयते॥ २३ ॥

अब, निश्चय ही सर्वतथागत – समय वज्र केतु आदि प्रमुख महाबोधि सत्त्वगण आश्चर्यान्वित हो गए साथ ही अत्यन्त अद्भुत स्थिति को प्राप्त होकर इस प्रकार (आक्षेप पूर्ण) वाग्वज्र का घोष करने लगे – हे भगवन् यह क्या है? सर्वतथागतों के अधिपति आप त्रैधातुक व्यतिरिक्त – सर्वलोकधातु से भिन्न सर्वतथागत, सर्वबोधिसत्त्व परिषद् के बीच में अद्भुत वाक्यार्थ वज्रपद की भाषा बोलते हैं। [जो नहीं बोलना चाहिए था वही आपने बोला है क्या? क्योंकि यह शायद कुकृत्य का जनक भी हो सकता है] यह सुनने के बाद भगवान् सर्वतथागत ने उन असंख्य, एवं वर्णनातीत बुद्ध क्षेत्रस्थ सुमेरु पर्वत के परमाणु रज के समान सर्वतथागत समय वज्र केतु आदि प्रमुख महाबोधि

सत्त्वों से यों कहा – हे मेरे कुलपुत्र यह हीन संज्ञा, निन्दित संज्ञाओं का उत्पादन मत करो। इसमें कारण है। रागचर्या ही हे कुलपुत्रों क्योंकि बोधिसत्त्व चर्या है और अग्रचर्या भी है। जैसा कि मान लो हे मेरे पुत्रों आकाश जैसे सर्वत्र व्यापक है उसी प्रकार सभी धर्म आकाश के साथ संयुक्त हैं। वे न काम धातु में, न रूप धातु में, न अरूप धातु में, और न ही चतुर्महाभूतों में स्थित हैं। ऐसे ही हे मेरे कुल पुत्रों सभी धर्मों को जानना चाहिए। इसे अर्थ के माध्यम से जान कर ही सर्वतथागतों ने सभी सत्त्वों का आशय जानकर वे उसके बाद धर्म की देशना करते हैं ।

इसी प्रकार हे सब कुल पुत्रों! आकाश धातु पद के विवेचन = निर्वचन से – न्याय से ही तथागत के समय को जानना चाहिए। जैसा कि मेरे कुल पुत्रों! अरणि का मन्थन होता है। उसमें दो अरणि होते हैं। मन्थन करने वाले का हाथ होता है – उससे व्यायाम भी होता है। उसके आधार पर धुआँ निकलता है, उसके बाद अग्नि भी प्रकट होता है। वह अग्नि उस अरणि में भी नहीं है और न ही उस मन्थन में न पुरुष के हस्त व्यायाम में कहीं रहता है। ऐसे ही हे मेरे पुत्रों सर्वतथागत के वज्रसमय को जानना चाहिए। जैसे आगमन और गमन में होता ही रहता है। अब वे सब बोधि सत्त्व गण आश्चर्य चकित हो गए। अद्भुत अनुभव करने लगे। विस्मय से बड़े बड़े आँख वाले होकर यह – घोषणा करने लगे – अत्यन्त विराट् अद्भुत धर्म है। आकाश सदृश विशाल या व्यापक यह धर्म है। उसी निर्विकल्प, शुद्ध में संवृत्ति सत्त्व का गान मात्र किया जाता है ।

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे परमार्थाद्वयतत्त्वार्थसमयपटलः नवमोऽध्यायः ।

नवम पटल पूर्ण हुआ।

दशमपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः पुनः समाजमागत्य भगवन्तं सर्वतथागताधिपतिं महासमयवज्रतत्त्वाभिसम्बोधिकायवाक्चित्तगुह्यं तथागतं नमस्यैवमाहुः।

भाषस्व भगवन् तत्त्वं मन्त्रसारसमुच्चयम्।
कायवाक्चित्तगुह्याख्यं महासिद्धिनयोत्तमम् ॥ इति । १ ॥

अब भगवान् सर्वतथागत ने फिर से समाज में आकर सर्वतथागताधिपति, महासमय वज्र – सत्त्वाभि–सम्बोधि काय वाक् चित्त गुह्य रूप भगवान् तथागत को नमस्कार करके यों कहा – हे भगवन्! मन्त्रों का सार समुच्चय रूप तत्त्व, जो काय–वाक् चित्त गुह्य के रूप में अत्यन्त प्रसिद्ध है और महासिद्धि तथा उत्तम नय है कृपया आप बतायें।

अथ वज्रधरो राजा सर्वक्लेशान्तकृत् प्रभुः ।
दीप्तवर्णो विशालाक्ष इदं वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

इस प्रकार प्रार्थना के बाद भगवान् वज्रधर राजा, सर्वक्लेशों के नाशक, दीप्तवर्ण, विशाल आँखों वाले प्रभु ने यह वचन कहा।

कायवाक्चित्तवज्राणां कायवाक्चित्तभावनम् ।
निर्विकल्प निरालम्बसमता न क्वचित् स्थितम् ॥ ३ ॥

काय, वाक् और चित्त वज्रधारियों के लिए काय, वाक् और चित्त का ज्ञान ही महत्त्वपूर्ण है। और यह काय, यह वाणी, यह चित्त इस प्रकार का भेद न होने से वे निर्विकल्प हैं ओर वे सब अन्योन्याश्रित न होने से निरालम्ब भी हैं।

अथ भगवान् स्वभावशुद्धस्तथागतः पारमितामन्त्रनयवज्रं नाम समाधिं समापन्नः तांश्च सर्वतथागतानेवं आह। अस्ति भगवन्तः सर्वतथागताः अक्षोभ्यप्रमुखाः सर्वतथागता अनेकविद्याकोटिनियुतशतसहस्त्रैः सर्वार्थक्रियानाटकं दर्शयन्ति। दशदिग्लोकधातुपर्यवसानेषु सर्वलोकधातुषु

पञ्चकामगुणैः क्रीडन्ति रमन्ते परिवारयन्ति। न च ते मन्त्रचर्याभियुक्तमवलोकयन्ति। तत्कस्माद्धेतोः? निष्पन्नो बतायं तथागतमन्त्रचर्यानयधर्मतत्त्वे । तत्र तेषां महासत्पुरुषाणं व्यवलोकनार्थमिदं सर्वतथागतकायवाक्चित्तमन्त्ररहस्यं मन्त्रहृदयसंचोदनं नाम महापरमगुह्यं सर्वतथागतकायवाक्चित्तसमयालम्बनं सर्ववज्रधरकायवाक्चित्तसमयालम्बनं सर्वधर्मधरकायवाक्चित्तसमयालम्बनं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो वाक्पथनिरुक्त्या इदं मन्त्रसमुच्चयमुदाजहार।

॥ हूँ ओं आः स्वाहा ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वबुद्धाः सहौरसाः ।
कम्पिता मूर्च्छामापेदे वज्रसत्त्वमनुस्मरन् ॥ ४ ॥

अब इसके बाद स्वभाव से ही शुद्ध तथागत भगवान् ने पारमिता मन्त्रनय वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके उन तथागतों को इस प्रकार कहा। यह है कि, भगवान् सर्वतथागत अक्षोभ्य प्रमुख सर्वतथागत अनेक विद्याओं से युक्त, यहाँ तक कि कोटि-कोटि नियुत सहस्र प्रकारों से सभी प्राणियों के कल्याणार्थ नाटक दिखाते हैं - नटों के तरह काम करते हैं। दशों दिशाओं में सभी लोकधातुओं में पाँच कामगुणों के साथ आनन्दित होते हैं औरों को भी आनन्दित करते हैं। किन्तु उस अवसर पर मन्त्र चर्याओं से युक्त कृत्य को नहीं देखते हैं। ऐसा क्यों? क्योंकि वे जानते हैं कि यह तथागत मन्त्रचर्या नय धर्म तत्त्व निष्पन्न हो चुका है। वहाँ उन महान् सत्पुरुषों को दिखाने के लिए यह सर्वतथागत - काय - वाक् चित्त मन्त्र रहस्य को मन्त्र हृदय संचोदन नामक महान् परमगुह्य सर्वतथागत काय-वाक् चित्त समालम्बन, सर्ववज्रधर कायवाक् चित्त समयालम्बन भी, साथ ही सर्वधर्मधर का काय-वाक् चित्त समयालम्बन अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से वचन के मार्ग से निष्पन्न होते हुए यह मन्त्र समुच्चय बाहर निकल आया - हूँ आँ आः स्वाहा। अब इनके इतना बोलने मात्र से ही उस अवसर पर उपस्थित सभी तथागत अपने पुत्रों सहित कम्पन को प्राप्त हो गए और वज्र सत्त्व का स्मरण करते हुए मूर्च्छित भी हो गए।

[सर्व बुद्ध = अक्षोभ्य आदि। पुत्र सहित = बोधिगण सहित]

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिरिमं समयमुदाजहार।
आकाशधातुमध्यस्थं भावयेद् बुद्धमण्डलम्।
हुँकारं तत्र मध्यस्थं स्वबिम्बेन प्रकल्पयेत् ॥ ५ ॥

इसके बाद तथागतों के अधिपति भगवान् वज्रपाणि ने यह वचन कहा - आकाश धातु के मध्य में स्थित बुद्ध मण्डल का ध्यान करें। उसके बीच में स्थित हुँकार को अपने विम्ब में कल्पना करें।

वज्ररश्मिमहादीप्तं विस्फुरन्तं विचिन्तयेत् ।
बुद्धानां कायवाक्चित्तं हृतं तेन विभावयेत् ॥ ६ ॥

उस पर अत्यन्त उद्दीप्त, जलते हुए वज्ररश्मि का चिन्तन करें। उसी ने बुद्धों का काय, वाक् और चित्तों का अपहरण किया है ऐसा चिन्तन करें।

[वज्र - पञ्चतथागत। बुद्ध = वैरोचनादि अपहरण = आकृष्ट करना]

स भवेत्तत्क्षणादेव कायवाक्चित्तवज्रधृक् ।
वज्रसत्त्वो महाराजः सर्वाग्रः परमेश्वरः ॥ ७ ॥

जब वह इस प्रकार ध्यान करेगा उसी समय वह काय, वाक् और चित्त रूप गुह्य धारक हो जायेगा। वही वज्र सत्त्व होगा, वही महाराज, सर्वाग्र और परमेश्वर भी हो जायेगा।

स्वमण्डलं स्वमन्त्रेण निष्पादनविधिर्भवेत् ।
इदन्तत् सर्वबुद्धानां सारं वज्रसमुच्चयम् ॥ ८ ॥

यही वह विधि है जिसे अपने ही मण्डल को मन्त्रों से निष्पादन कर सकता है। यही सभी बुद्धों का वज्र समुच्चय रूप सार है।

स्वमन्त्रपुरुषं ध्यात्वा चतुःस्थानेषु रूपतः ।
त्रिमुखाकारयोगेन त्रिवर्णेन विभावयेत् ॥ ९ ॥

उसके बाद अपने मन्त्र पुरुष का ध्यान करके स्वरूप से ही चार स्थानों में त्रिमुखाकार रूप योग द्वारा और तीनों वर्णों से ध्यान करें।

इत्याह भगवान् खवज्रसमयः। तत्रेदं परमं वज्ररहस्यम् ।
हृदयमध्यगतं सूक्ष्मं मण्डलानां विभावनम् ।
तस्य मध्यगतं चिन्तेदक्षरं परमं पदम् ॥ १० ॥

भगवान् खवज्रसमय ने यही कहा। वही परम वज्र रहस्य है। हृदय के मध्य में स्थित मण्डलों में अत्यन्त सूक्ष्म अक्षर तत्त्व है, वही परम पद भी है उसी का चिन्तन करना चाहिए।

भगवान

पञ्चशूलं महावज्रं भावयेत् योगवित् सदा ।

चिन्तयेत् त्रीणि वज्राणि वज्राङ्कुशप्रभेदतः ॥ ११ ॥

योग जानने वाले को पञ्चशूलात्मक महावज्र का ध्यान करना चाहिए। और वज्रांकुश के भेद से युक्त तीन वज्रों का ध्यान करें।

हृदयं ताडयेत्तेन देवताद्यं प्रचोदयेत्।

इदं तत्सर्ववज्राणां बुद्धबिम्बप्रसाधनम् ॥ १२ ॥

उससे हृदय का ताडन = आहत करना चाहिए। देवताओं को भी प्रेरित करें। यही वह सभी सर्ववज्रों का साध्य बुद्ध विम्ब है।

[ताडन करना = संचालन करना]

चक्रपद्मकराभ्यां तु वज्राङ्कुशविभावनम् ।

चोदनं हृदये प्रोक्तमिदं नाटकसम्भवम् ॥ १३ ॥

चक्र पद्मरूप हाथों से वज्रांकुश का संचालन = अवलम्बन करना चाहिए। उनकी प्रेरणा ही हृदय है यही सम्भव नाटक भी है।

सप्ताहं यावत्कुर्वीत इदं वज्रनयोत्तमम् ।

सिद्धयते कायवाक्चित्तरहस्यं ज्ञानवज्रिणाम् ॥ १४ ॥

यह वज्र योग एक सप्ताह तक किया जाना चाहिए। इससे ज्ञानवज्रियों का काय, वाक्, और चित्तों का रहस्य सिद्ध होता है।

व्यवलोकयन्ति वरदा भीताः सन्त्रस्तमानसाः ।

ददन्ति विपुलां सिद्धिं मनःसन्तोषणप्रियाम् ॥ १५ ॥

इस अवस्था को संत्रस्त्र मानस अर्थात् डरते हुए तथागत, जो वरदान देने के लिए उद्युक्त रहते हैं वे देखते है - उन साधकों को जो सिद्धि प्राप्त करते हैं और मन को सन्तोष देनें वाले विभिन्न एवं विशिष्ट सिद्धि प्रदान करते हैं।

बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च मन्त्रचर्याग्रसाधकाः ।
अतिक्रामेद्यदि मोहात्तदन्तं तस्य जीवितम् ॥ १६ ॥

यदि बुद्ध, बोधिसत्त्व और मन्त्रचर्या के साधना में लगे हुए अग्रसाधक यदि मोह से अहङ्कार भाव में आ जाते हैं और मैं ही सर्वश्रेष्ठ हूँ ऐसी भावना होती है तो उनका जीवन तत्काल ही नष्ट हो जाता है।

अथ वज्रधरो राजा त्रिलोकाग्रानुशासकः ।
त्रिलोकवरवज्राग्रमिदं घोषमकार्षीत् ॥ १७ ॥
यावन्तो मन्त्रपुरुषास्त्रिवज्रज्ञानपूरिताः ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वभावविकल्पनम् ॥ १८ ॥

इसके बाद वज्रधर, राजा, तीनों लोकों के शासकों में अग्र भगवान् ने त्रिलोकवरवज्रग्ररूप यह घोषणा किया। जितने भी मन्त्र पुरुष हैं, स्त्री समूह है, जो वज्रज्ञान से प्रपूरित हैं, दोनों इन्द्रियों (स्त्री पुरुष) के प्रयोग द्वारा सर्वभाविकल्पनरूप समाधि में प्रविष्ट होते हैं। यही वह सर्व बुद्धों का मन्त्र समय साधन कहा गया है।

इदन्तत् सर्वबुद्धानां मन्त्रसमयसाधनम् ।
विश्वेश्वरीप्रविष्टेषु वज्रसंयोगभावना ।
रक्तां रक्तेक्षणां वीक्ष्येत् इदं समयमण्डलम् ॥ १९ ॥

विद्येश्वरी नामक देवियों के प्रविष्ट स्थानों में वज्र संयोग भावना द्वारा रक्त आँखों वाली रक्त देवी का ध्यान करना चाहिए यही समय मण्डल है।

[विद्येश्वरी = प्रज्ञापारमिता। उनका प्रविष्ट होना = स्कन्धादि में निराभास होना। रक्ता = आसक्त। समय = महावज्रधर:]

अथ वज्रधरो राजा सर्वताथागतात्मजः ।
सर्वाभिषेकबुद्धाग्र इदं वचनमब्रवीत् ॥ २० ॥

इसके बाद सर्वतथागतात्मज, राजा, भगवान् वज्रधर ने सर्व अभिषेकाग्रबुद्धों के समक्ष यह वचन कहा।

लोकधातुषु सर्वेषु यावत्यो योषितः स्मृताः ।
महामुद्राप्रयोगेण सर्वास्ता उपभुञ्जयेत् ॥ २१ ॥

समस्त लोकधातुओं में जितनी भी स्त्रियाँ हैं महामुद्रा के प्रयोग द्वारा उन सभी का उपभोग करना चाहिए।

भगवान

स्फरेद्बुद्धपदं तत्र असंख्या कोटिवज्रिणाम् ।
इत्याह भगवान् बोधिसमयः ।
अनेन प्राप्नुयाद्बोधिं त्रिवज्राकाशसन्निभाम् ।
स भवेद् वज्रसत्त्वाग्रो बोधिचित्तजिनोदधिः ॥ २२ ॥

उसके माध्यम से बुद्ध पद का वहाँ प्रकाश करना ही चाहिए उससे असंख्य कोटि वज्रियों का कल्याण होगा यही बोधिसमय है ऐसा भगवान् ने कहा।

[स्त्रियाँ = रूपवज्रादि ही हैं। महामुद्रा = दो प्रकार की है – मन्त्रमूर्ति, ज्ञानमूर्ति।]

इस विधि से त्रिवज्राकाश से अभिन्न बोधि की प्राप्ति करनी चाहिए। वह, इसे प्राप्त करके बोधिसत्त्वों में अग्रगण्य, बोधिचित्तजिनों में समुद्र के तरह ही होगा।

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वतथागतहृदयसञ्चोदनो नाम पटलः दशमोऽध्यायः ॥

दशम पटल पूर्ण हुआ।

एकादशपटलः

अथ भगवान् कायवाक्चित्तवज्रस्तथागतो वज्रपुरुषोत्तमं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वतथागतमन्त्रवज्रपुरुषोत्तमपटलमुदाजहार ।

त्रिवज्राक्षरमन्त्राग्रैर्महामुद्राविभावनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण सर्वबोधिसमावहम् ॥ १ ॥

अब इसके बाद काय, वाक् और चित्त वज्र रूप तथागत भगवान् ने वज्रपुरुषोत्तम नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इस सर्वतथागत – मन्त्रवज्रपुरुषोत्तम पटल का उद्गार – उदान किया। त्रिवज्र रूप मन्त्राक्षरों के द्वारा ही महामुद्रा की भावना करनी चाहिए। वह भी ज्ञानवज्र के द्वारा ही हो जो सर्वबोधि को समाहित किए हुए महामुद्रा है।

[त्रिवज्र = काय-वाक् चित्तवज्र। अक्षर = ओंकारादि। महामुद्रा - भू भुर्वः स्वः आदि के द्वारा मुद-हर्ष प्राप्त होता है इसीलिए महामुद्रा कता है]

ओं कारं ज्ञानहृदयं कायवज्रसमावहम् ।
आःकारं बोधिनैरात्म्यं वाक्यवज्रसमावहम्॥ २ ॥

ॐ कार ही हृदय ज्ञान है। वही काय वज्र संयुक्त भी है। फिर आः कार बोधि नैरात्म्य है जो वाक्य वज्र संयुक्त है।

हूँकारं कायवाक्चित्तं त्रिवज्राभेद्यमावहम् ।
इत्याह भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तमन्त्रपुरुषः ।
खवज्रमध्यगं चिन्तेन्मण्डलं सर्ववज्रगम् ।
भ्रुँकारं भावयेत्तत्र वज्रमेघस्फरावहम् ॥ ३ ॥
तत्रेदं ज्ञानवज्रहृदयम् ॥ ॥ भ्रुँ ॥

हूँ कार काय वाक् चित्त है त्रिवज्र अभेद्य संयुक्त है। सर्वतथागत काय वाक् चित्त मन्त्र पुरुष भगवान् ने ऐसा कहा है। खवज्र = आकाश वज्र के बीच में स्थित सर्ववज्र में व्याप्त मण्डल का चिन्तन करें। उसी में भ्रुँ कार की भावना भी करनी चाहिए, वही वज्र मेघ प्रकाश का वाहक भी है। और यही

ज्ञानवज्र हृदय है – भ्रुँ।

वज्रमण्डलमध्यस्थं ओंकारं तु प्रभावयेत् ।
स्वच्छमण्डलमध्यस्थं आः कारं तु विचिन्तयेत् ॥ ४ ॥
धर्म्ममण्डलमध्यस्थहूँकारस्य विभावना ।
भ्रुँकारमालयं ध्यात्वा त्रिवज्रोत्पत्तिभावना ॥ ५ ॥

वज्रमण्डल के मध्य में स्थित ओं कार की भावना करनीं चाहिए। स्वच्छ आकाश मण्डल में अवस्थित आः कार की चिन्तना करे। धर्म मण्डल के मध्य में विराजित हूँ कार की भावना करे। भ्रुँकार रूपी आलय का ध्यान करना चाहिए जो त्रिवज्र की उत्पत्ति स्थिति है – वही भावना भी है।

इत्याह भगवान् गुह्यसमयः ।
हृदयं त्र्यध्वबुद्धेभ्यः कायवाक्चित्तरञ्जनम् ।
ओंकारं बुद्धकायाग्र्यं आःकारं वाक्पथं तथा ॥ ६ ॥
हूँकारं चित्तज्ञानौधं इदं बोधिनयोत्तमम् ।
इदं तत्सर्वबुद्धानां बुद्धबोधिप्रसाधकम् ॥ ७ ॥
निर्मितं ज्ञानवज्रेण बुद्धहेतुफलोदयम् ।
एते वै बुद्धपुरुषा मन्त्रविद्येति कीर्तिताः ॥ ८ ॥

यह हृदय त्रिअध्व में स्थित बुद्धों से काय वाक् चित्त का रञ्जन है। ऊँ कार बुद्धों का अग्र शरीर है। 'आः' यह बुद्धों की वाणी मार्ग है। हूँ कार चित्त ज्ञान का समुद्र है। और यही उत्तम बोधि 'नय' भी है। यही सब सर्वतथागतों का बुद्ध-ज्ञान फल के प्रसाधक भी है। ज्ञान वज्र ने बुद्ध हेतु फलों का उदय का निर्माण किया है। वे ही सब बुद्ध पुरुषों का मन्त्रविद्या के नाम से विख्यात हैं।

निष्पादनादिसमयैस्त्रिवज्राभेद्यभावनैः ।
सर्वतथागतसमयतत्त्वज्ञानवज्राधिष्ठानहेतुर्नाम समाधिः ॥
विविक्तेषु च रम्येषु इदं योगं समारभेत् ।
सिध्यते कायवाक्चित्तं पक्षैकेन न संशयः ॥ ९ ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् स्वच्छमण्डलमुत्तमम् ।
निष्पाद्यस्वमन्त्रसमयं ओंकारं हृदये न्यसेत् ॥ १० ॥

पञ्चरश्मिमहामेघान् वैरोचनाग्रभावनैः ।
अनेन कायं बुद्धस्य वज्रवैरोचनोदधिः ॥ ११ ॥
सिद्धयते पक्षमात्रेण बुद्धकायसमप्रभः ।
त्रिवज्रकल्पं तिष्ठेयुः सेवयन् पञ्चज्ञानिनाम् ॥ १२ ॥

निष्पादन, समय के द्वारा और त्रिवज्र अभेद्य भावना के द्वारा भी होता है। यही सर्वतथागत समय तत्त्व का ज्ञान वज्राधिष्ठान हेतु नामक समाधि है। रमणीय एवं एकान्त स्थान में यह योग करना चाहिए। निरन्तर एक पक्ष तक अभ्यास करने से काय-वाक् और चित्त की सिद्धि होती है इसमें सन्देह नहीं है। आकाश मण्डल के मध्य में अवस्थित उत्तम स्वच्छ मण्डल की भावना करनी चाहिए। अपने योग से ही मन्त्र शरीर की उत्पत्ति करने के बाद ऊँ कार को हृदय में रखना चाहिए। वैरोचन के प्रभावयुक्त और उनके किरणों के माध्यम से पञ्चरश्मि मेघों को वहीं पर हृदय में अवतीर्ण कराना है फिर अनेक बुद्धों के कायों को और वज्र वैरोचन रूपी समुद्र को भी वहीं स्थापित करना चाहिए। इससे एक ही पक्ष में बुद्ध काय के समान काय की सिद्धि होती है। साथ ही इस सिद्धि के द्वारा तीन वज्रकल्प तक पञ्च ज्ञानियों के निकटवास करने का अवसर उपलब्ध होगा।

इत्याह भगवान् कायवज्रगुह्यः ।
सर्वतथागतकायरश्मिव्यूहो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् धर्ममण्डलमुत्तमम् ।
निष्पाद्य स्वमन्त्रपुरुषमाःकारं वाक्पथे न्यसेत् ॥ १३ ॥

भगवान् कायवज्रगुह्य ने यही कहा - सर्वतथागत काय रश्मिव्यूह नामक समाधि यही है। आकाश मण्डल में स्थित उत्तम धर्ममण्डल का चिन्तन करना चाहिए और अपने मन्त्र पुरुष के समान आकार का निष्पादन करके 'आः' कार को वाक्पथ में प्रतिष्ठित करें।

पञ्चवर्णमहावज्रं लोकेश्वराग्रभावनैः ।
निष्पाद्य समयज्ञानवाक्समयप्रपञ्चकम् ॥ १४ ॥

लोकेश्वरात्मक अग्रभावनाओं के द्वारा पञ्चवर्ण महावज्र का निष्कासन करके समय ज्ञान वाक् और समय प्रपञ्च की भावना करनी चाहिए।

धर्मवाक्यसमारूढो धर्मवज्रसमो भवेत् ।
त्रिवज्रकल्पं तिष्ठेयुः सेवयन् पञ्चज्ञानिनाम् ॥ १५ ॥

इस योग के अभयास के द्वारा योगी धर्मवाक्य में समारूढ होकर धर्मवज्र के समान होकर पञ्चज्ञानियों की सेवापूर्वक तीन वज्रकल्प तक वहाँ रहेंगे।

इत्याह भगवान् वाग्वज्रगुह्यः ।
सर्वतथागतवाग्वज्रसमयसम्भवो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् वज्रमण्डलमुत्तमम् ।
निष्पाद्य स्वमन्त्रपुरुषं हूँकारं चित्तसंस्थितम् ॥ १६ ॥
महासमयतत्त्वं वै पञ्चवर्णं विभावयेत् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण सर्ववज्रजिनालयम् ॥ १७ ॥
वज्रचित्तसमः शास्ता स भवेद्ज्ञानगुणोदधिः ।
त्रिवज्रकल्पं तिष्ठेयुः सेवयन् पञ्चज्ञानिनाम् ॥ १८ ॥

भगवान् वाग्वज्र गुह्य ने ऐसा कहा। सर्वतथागत वाग्वज्र समय सम्भव नामक समाधि यही है। आकाश के मध्य में स्थित उत्तम वज्र मण्डल का ध्यान करे और उससे अपने चित्त में अवस्थित हुँकार रूप मन्त्रपुरुष का निष्पादन करके महासमय सत्त्व जो पञ्चवर्ण के रूप में है उसकी भावना करे और ज्ञानवज्र के साथ ज्ञानवज्र जिनालय की भी भावना करनी चाहिए। इससे वह साधक योगी वज्रचित्त के समान, शास्ता और ज्ञानगुण का समुद्र ही होगा साथ ही त्रिवज्र कल्प तक पञ्च ज्ञानियों की सेवा करते हुए वहाँ अवस्थित होगा।

इत्याह भगवान् वज्रचित्तगुह्यः ।
सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रो नाम समाधिः ॥
महावज्रं समाधाय ज्ञानमण्डलमध्यतः ।
खँकारं सर्वकार्येषु खवज्रज्ञानसमोभवेत् ॥ १९ ॥ ॥ खँ ॥

भगवान् वज्रचित्त गुह्य ने यह कहा। सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र नामक यह समाधि है। ज्ञानमण्डल के मध्य से महावज्र के समाधि में अवस्थित होकर 'खं' कार का ध्यान एवं न्यास करने से वह योगी सभी कर्मों

में खवज्र ज्ञान के समान होगा।

बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च पूज्यमानो मुहुर्मुहुः ।
तिष्ठेत् त्रिकल्पसमयं बुद्धैरपि न दृश्यते ॥ २० ॥

वह बुद्ध और बोधि सत्त्वों के द्वारा बारम्बार पूजित होगा साथ ही तीन कल्प तक उसी आनन्द की अवस्था में रहेगा बुद्धों के द्वारा भी अदृश्य ही रहेगा ।

इत्याह भगवान् खवज्रसमयः ।
कायवाक्चित्तवज्रान्तर्ज्वालसम्भवव्यूहमाली नाम समाधिः ।
ध्यात्वा स्वमन्त्रपुरुषं वज्रमण्डलमध्यतः ।
हृदये हूँकारवज्राख्यं कृत्वा रश्मिविभावनम् ॥ २१ ॥ ॥ हूँ ॥

भगवान् खवज्र समय ने यह कहा। काय-वाक् चित्त वज्र ज्वालाओं से सम्भव व्यूह माला नामक यही समाधि है ॥ वज्र मण्डल के मध्य में स्वमन्त्रपुरुष का ध्यान करके हृदय में 'हूँ' कार वज्र को रखकर रश्मियों का चिन्तन करना चाहिए। वह है - हूँ ॥

मञ्जुश्रीसमयसम्भोगं कायवाक्चित्तवज्रिणः ।
सभवेद् बोधिसत्त्वात्मा दशभूमिप्रतिष्ठितः ॥ २२ ॥

काय, वाक् एवं चित्त वज्र के मञ्जुश्री समय सम्भोग का ध्यान करने से वह साधक योगी बोधिसत्त्वों का आत्मा होगा और दशभूमियों में प्रतिष्ठित भी।

बोधिसत्त्वज्ञानसमयचन्द्रवज्रो नाम समाधिः ॥
खधातुमध्यगं ध्यात्वा थ्लीं कारं ज्वालसुप्रभम् ।
परमास्त्रो वज्रकायेन वज्रकायसमो भवेत् ॥ २३ ॥ ॥ थ्लीं ॥

यही बोधिसत्त्व ज्ञान समय चन्द्र वज्र नामक समाधि है। ख धातु के बीच में स्थित ज्वालाओं से उज्जवल थ्लीं कार का परमास्त्र वज्रकाय से ध्यान करके वह वज्र काय के समान होगा ॥ थ्लीं ॥

खवज्रसमयव्यूहालयो नाम समाधिः ॥
बुद्धाभिज्ञाग्रसमयैः पञ्चाभिज्ञसमो भवेत् ।
इदन्तत् सर्वबुद्धानां बुद्धाभिज्ञाग्रसाधनम् ॥ २४ ॥

यही खवज्र समयव्यूहालय नामक समाधि है। बुद्ध अभिज्ञ अग्रसमयों के द्वारा साधना करने से योगी पञ्चअभिज्ञ के समान होगा। यही वह सब बुद्धों

का बुद्धाभिज्ञाग्र साधन भी है।

[खवज्र समय = महावज्रधर। मुद्रा = महामुद्रा। आलयस्थान - वह है - क्षितिगर्भ का]

खधातुमध्यगं चिन्तेत् वज्रमण्डलमुत्तमम् ।
वज्रसत्त्वं प्रभावित्वा ज्ञानाकारं प्रभावयेत् ॥ २५ ॥ ॥ ओं ॥

आकाश धातु के मध्य में उत्तम वज्र मण्डल का ध्यान करना चाहिए। क्योंकि वज्र सत्त्व के समाधि में जानकर ज्ञानाकार का ध्यान करें। ॥ ओं॥

त्रिवज्रसमयध्यानेन त्रिवज्राक्षोभ्यसमो भवेदित्याह भगवानक्षोभ्यवज्रः ।
अक्षोभ्यसमकायेन वाक्चित्ताग्रधृक् सदा।
लोकधातुषु सर्वेषु पूज्यतेऽक्षोभ्यवज्रिणः॥ २६ ॥

त्रिवज्रसमय ध्यान के द्वारा त्रिवज्राक्षोभ्य समान ही वह होगा ऐसा भगवान् अक्षोभ्य ने कहा है। अक्षोभ्य समकाय द्वारा वाक् चित्ताग्रधृक् ही हमेशा होगा। वे सभी लोकधातुओं में अक्षोभ्य वज्री के द्वारा भी वह पूजित होगा हीं।

अक्षोभ्यसमयकायाभिसम्बोधिवज्रो नाम समाधिः ॥
खधातुमध्यगतं चिन्तेत् बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।
आकाशवज्रं प्रभावित्वा त्रामाकारं प्रभावयेत् ॥ २७ ॥ ॥ त्रॉं ॥

यही अक्षोभ्य समय-कायाभिसम्बोधिवज्र नामक समाधि है। आकाश धातु में अवस्थित उत्तम बुद्ध मण्डल का चिन्तन करे। उसमें रहकर आकाश वज्र को भावित करने के बाद त्रॉं इस आकार का ध्यान करें। ॥ त्रॉं ॥

त्रिवज्रसमयध्यानेन त्रिवज्रकेतुसमो भवेदित्याह भगवान् रत्नकेतुवज्रः ।
कायवाक्चित्तवज्रेण रत्नकेतुसमप्रभः ।
स भवेद्बोधिनैरात्म्यज्ञानवज्र समावहः॥ २८ ॥

त्रिवज्र समय ध्यान के द्वारा त्रिवज्रकेतु के समान होगा ऐसा भगवान् रत्नकेतु वज्र ने कहा। काय, वाक् और चित्त वज्र के द्वारा वह रत्नकेतु के समान ही होगा। इतना ही नहीं, वह तो बोधि नैरात्म्य ज्ञान वज्र के समान भी होगा।

रत्नकेतु समयसम्भोगवज्रो नाम समाधिः ॥

खधातुमध्यगतं चिन्तेत् बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।

लोकेश्वरं प्रभावित्वा धर्मोंकारं विभावयेत् ॥ २६ ॥ ॥ ओं ॥

रत्नकेतु समय सम्भोग वज्र नामक समाधि यही है। आकाश धातु के मध्य में उत्तम बुद्ध मण्डल का चिन्तन करे। उसमें लोकेश्वर की भावना के बाद धर्म रूप ॐ कार का ध्यान करें। ॥ ॐ ॥

त्रिवज्रसमयध्यानेन त्रिवज्रामित समो भवेदित्याह भगवानमितवज्रः ।

कायवाक्चित्तवज्रेण अमितायुः समप्रभः ।

स भवेत्सर्वसत्त्वानां महायानपथोदयः॥ ३० ॥

त्रिवज्र समय ध्यान के द्वारा त्रिवज्र शक्ति के समान होगा ऐसा भगवान् अमितवज्र के कहा। काय, वाक् और चित्त वज्र के द्वारा वह अमितायु के समान होगा साथ ही सभी प्राणियों का महायान पथ का उदय स्वरूप भी होगा।

अमितवज्रप्रभावश्रीर्नाम समाधिः ॥

खधातुमध्यगतं चिन्तेत् बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।

वज्रोत्पलं प्रभावित्वा समयौंकारं प्रभावयेत् ॥ ३१ ॥ ॥ ओं ॥

यही अमित वज्र प्रभाव श्री नामक समाधि है। रत्नधातु मध्य में स्थित उत्तम बुद्ध मण्डल का चिन्तन करे। उस अवसर में वज्रोत्पल का ध्यान करके फिर समय ओंकार का ध्यान करना चाहिए। ॥ ओं ॥

त्रिवज्रसमयध्यानेन त्रिवज्रामोघसमो भवेदित्याह भगवानमोघवज्रः ।

कायवाक्चित्तवज्रेण वज्रामोघसमप्रभः ।

स भवेद् ज्ञानोदधिः श्रीमान् सर्वसत्त्वार्थसम्भवः ॥ ३२ ॥

त्रिवज्र समय ध्यान के द्वारा त्रिवज्र अमोघ के समान होगा ऐसा भगवान् अमोघ वज्र ने कहा। काय-वाक् चित्त वज्र के द्वारा वज्रामोघसम प्रभाव युक्त होगा। वह ज्ञान के समुद्र के समान, श्रीमान् सर्वसत्त्वार्थ सम्भव होगा।

अमोघसमयरश्मिज्ञानाग्रसम्भवो नाम समाधिः ॥
खधातुमध्यगतं चिन्तेत् बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।
वैरोचनवज्रं प्रभावित्वा त्रिरोंकारं प्रभावयेत् ॥ ओं ओं ओं ॥

अमोघ समय रश्मि ज्ञानाग्र सम्भव नामक समाधि यही है। आकाश धातु के मध्य में स्थित उत्तम बुद्ध मण्डल का ध्यान करे। उसके बाद वैरोचन का ध्यान करके तीन ओं कार की भावना करे। ओं । ओं। ओं

त्रिवज्रसमयध्यानेन वैरोचनवज्रसमो भवेदित्याह भगवान् वैरोचनवज्रः ।
कायवाक्चित्तवज्रेण वैरोचनसमप्रभः ।
स भवेज्ज्ञानसम्बोधिस्त्रिकायाभेद्यसाधकः ॥ ३४ ॥

त्रिवज्र समय ध्यान के द्वारा वैरोचन वज्र के समान वह होगा ऐसा भगवान् वैरोचन ने कहा। काय, वाक् और चित्त वज्र के द्वारा वैरोचन समान प्रभाव वाला वह साधक होगा और वह ज्ञान सम्बोधि, त्रिकाय अभेद्य साधक भी होगा।

कायवाक्चित्तालम्बनसम्बोधिवज्रो नाम समाधिः ॥
पर्वतेषु विविक्तेषु नदीप्रस्त्रवणेषु च ।
श्मशानादिष्वपि कार्यमिदं ध्यानसमुच्चयम् ॥ ३५ ॥

काय, वाक् और चित्तालम्बन सम्बोधि वज्र नामक समाधि यही है। भिन्न-भिन्न पर्वत के गुफाओं में, एकान्त वनों में, नदियों के किनारों में अथवा श्मशानादि स्थलों में भी इस उत्तम ध्यान को करना चाहिए।

अक्षोभ्यज्ञानवज्रादीन् ध्यात्वा खवज्रमध्यतः ।
पञ्चाभिज्ञप्रयोगेण स्थाने बुद्धाग्रभावना ॥ ३६ ॥

आकाश वज्र के मध्य से अक्षोभ्य ज्ञान वज्रादिकों का ध्यान करके पाँच अभिज्ञों के प्रयोग के द्वारा उस अवसर पर बुद्ध की अग्र भावना करना चाहिए

इत्याह भगवान् महावज्रसमयवज्राभिज्ञः ।
पञ्चशूलं महावज्रं पञ्चज्वालाविभूषितम् ।
पञ्चस्थानप्रयोगेण पञ्चाभिज्ञसमो भवेत् ॥ ३७ ॥

यही भगवान् महावज्र समय वज्राभिज्ञ है ऐसा कहा है। पाँच ज्वालाओं से विभूषित पञ्चशूलात्मक महावज्र का ध्यान और पञ्च स्थानो के प्रयोग द्वारा पञ्च

अभिज्ञ के समान होगा [पञ्चशूल = पञ्चेन्द्रिय। पञ्चज्वाला = उद्वाहादि पञ्चरश्मि। पञ्चस्थान = रूपशब्दादि पञ्च]

स्वमन्त्रं भावयेच्चक्रं स्फुलिङ्गगहनाकुलम् ।
पञ्चवज्रप्रयोगेण पञ्चाभिज्ञसमो भवेत् ॥ ३८ ॥

स्फुलिङ्गों से गहन रूप से व्याप्त मन्त्र स्वरूप चक्र की भावना करें और पञ्चवज्र के प्रयोग द्वारा पञ्चअभिज्ञों के समान ही होगा।

खवज्रमध्यगं चिन्तेत् बुद्धज्वालासमप्रभम् ।
ध्यात्वा बुद्धप्रवेशेन बुद्धाश्रयसमो भवेत् ॥ ३९ ॥

आकाश मध्य में स्थित बुद्ध ज्वाला समान प्रभाव वाले स्वरूप का ध्यान करके और बुद्ध क्षेत्र में प्रवेश द्वारा बुद्धाश्रय के समान ही वह साधक होगा।

बुद्धमण्डलमध्यस्थं काये वैरोचनं न्यसेत् ।
ओंकारं हृदये ध्यात्वा मन्त्रविज्ञानभावना ॥ ४० ॥
निरोधवज्रगतं चित्ते यदा तस्य प्रजायते ।
स भवेच्चिन्तामणिः श्रीमान् सर्वबुद्धाग्रसाधकः॥ ४१ ॥

अपने शरीर में ही बुद्ध मण्डल में स्थित वैरोचन का न्यास करे उसके बाद ॐ कार का हृदय में ध्यान करके मन्त्र विज्ञान की भावना भी करें। चित्त जब निरोधवज्र में स्थित होगा तभी वह चिन्तामणि के समान हो जाएगा, वही श्रीमान् सर्वबुद्धाग्रसाधक भी होगा।

बुद्धमण्डलमध्यस्थं वज्राक्षोभ्यं प्रभावयेत् ।
हूँकारं हृदये ध्यात्वा चित्तबिन्दुगतं न्यसेत् ॥ ४२ ॥

बुद्धमण्डल में स्थित वज्राक्षोभ्य की भावना करें। उसके बाद हृदय में हूँ का ध्यान करके चित्त के बिन्दु में न्यास करें।

बुद्धमण्डलमध्यस्थं अमिताभं प्रभावयेत् ।
आःकारं हृदये ध्यात्वा चित्त बिन्दु गतं न्यसेत् ॥ ४३ ॥

बुद्ध मण्डल में स्थित भगवान् अमिताभ का ध्यान करें। आः कार को हृदय में ध्यान करके चित्त के बिन्दु में न्यास करना चाहिए।

इदन्तत् समयाग्राग्र्यं त्रिवज्रा भेद्यभावनम् ।
निरोधसमयज्ञानं बुद्धसिद्धिसमावहम् ॥ ४४ ॥

यह सभी समय का अग्र स्वरूप है और त्रिवज्र अभेद्य स्वरूप भी है। निरोध समय का ज्ञान है जो बुद्ध सिद्धि के समान भी है।

खवज्रधातुमध्यस्थं भावयेत् स्वच्छमण्डलम् ।
ओंकारं कायवाक्चित्ते ध्यात्वा कल्पं स तिष्ठति ॥ ४५ ॥

खवज्र धातु में अवस्थित स्वच्छ मण्डल का ध्यान करें। और ॐ कार को काय, वाक् और चित्त में ध्यान करके वह कल्प तक रह सकता है।

खवज्रधातुमध्यस्थं भावयेद्धर्ममण्डलम् ।
आःकारं कायवाक्चित्ते ध्यात्वा कल्पं स तिष्ठति ॥ ४६ ॥

आकाश वज्र धातु में स्थित धर्म मण्डल की भावना करें। और काय, वाक् और चित्त में आः कार का ध्यान करें वह कल्प तक ठहर सकता है।

खवज्रधातुमध्यस्थं भावयेद्वज्रमण्डलम् ।
हूँकारं कायवाक्चित्ते ध्यात्वा कल्पं स तिष्ठति ॥ ४७ ॥

आकाश वज्र धातु में स्थित वज्र मण्डल का ध्यान करें। और काय, वाक्, चित्तों में हूँ कार का ध्यान करने के बाद वह पूर्ण कल्प तक रहता है।

इत्याह भगवान् त्रिवज्रज्ञानसमयः ।
यः प्रभूतमिमं योगं कायवाक्चित्तवज्रिणः ।
पठेद्वा चिन्तयेद्वापि सोऽपि वज्रधरो भवेत् ॥ ४८ ॥

भगवान् त्रिवज्र ज्ञान समय ने यही कहा। काय, वाक् और चित्त वज्री का यह योग, जो व्यक्ति बहुत बार, श्रद्धापूर्वक पढ़ता है या चिन्तन भी करता है वह भी वज्रधर ही होगा।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वतथागतमन्त्रसमयतत्त्ववज्रविद्यापुरुषोत्तपटल एकादशोऽध्यायः ॥

एकादश पटल पूर्ण हुआ।

द्वादशपटलः

अथ वज्रधरःशास्ता स्त्रष्टा ज्ञानाग्रसाधकः त्रिवज्रसमयतत्त्ववाक् वज्रमुदाजहार ।

खधातुसमभूतेषु निर्विकल्पस्वभाविषु ।
स्वभावशुद्धधर्मेषु नाटकोऽयं प्रभाव्यते ॥ १ ॥

अब कर्मपथ विशुद्धि की व्याख्या के बाद ज्ञानाग्र साधक स्त्रष्टा शास्ता भगवान् वज्रधर ने त्रिवज्र समय तत्त्व वाक् वज्र का उदान किया। आकाश धातु के समान भूतों में, निर्विकल्प स्वभाव आदियों में, और स्वभाव शुद्ध धर्मों में यह नाटक प्रभावित होता है ।

महाटवीप्रदेशेषु फलपुष्पाद्यलङ्कृते ।
पर्वते विजने साध्यं सर्वसिद्धिसमुच्चयम् ॥ २ ॥ ॥ मँ ॥

बड़े बड़े जङ्गलों में जहाँ फलफूल आदि से अलंकृत वृक्ष हो, और पर्वतों में, विजन क्षेत्रों में भी सर्वसिद्धि कारक इस मन्त्र का जाप करनी चाहिए। ॥ मँ ॥

कायवाक्चित्तवज्रेषु मञ्जुवज्रप्रभावना ।
स्फरणं कायवाक्चित्ते मञ्जुवज्रसमो भवेत् ॥ ३ ॥

काय, वाक् और चित्त वज्रों में मञ्जु वज्र की भावना की जाती है। उसका, काय, वाक् और चित्त में प्रकाशित करने से वज मञ्जु वज्र के समान होगा।

योजनशतविस्तारं प्रभया दीप्तवज्रया ।
आभासयति सिद्धात्मा सर्वालङ्कार भूषितः ॥ ४ ॥

उद्दीप्त तेज द्वारा और उसके प्रकाश से, सौ योजन तक सिद्धात्मा योगी सर्वालङ्कार भूषित होकर प्रकाशित करता है।

ब्रह्मरूद्रादयो देवा न पश्यन्ति कदाचन ।
मञ्जु श्रीवज्राग्रसमयान्तर्द्धानकरी नाम समाधिः ॥ ५ ॥

ब्रह्मा-रूद्र आदि देव भी उसे कभी भी देख नहीं सकते। यही मञ्जुश्री वज्राग्र समयान्तर्ध्यानकरी नामक समाधि है।

विण्मूत्रपञ्चसमयैस्त्रिवज्राभेद्यसम्भवैः ।
कृत्वा त्रिलोहसहितं मुखे प्रक्षिप्य भावयेत् ॥ ६ ॥

विष्ठा, मूत्र आदि पाँच पदार्थों से जो त्रिवज्र अभेद्य है, उनसे पूरित करके, और त्रिलोह सहित = आभास सहित करके मुख में डालकर भांवना करें।

अभेद्यं सर्वबुद्धानां चित्तं तत्र प्रभावयेत् ।
स भवेत्तत्क्षणादेव मञ्जुवज्रसमप्रभः ॥ ७ ॥

सर्व बुद्धों का अभेद्य चित्त को वहाँ पर भावित करें। उससे तत्क्षण ही वह मञ्जु वज्र के समान होगा।

स्वमन्त्रेण प्रभावित्वा चक्रं स्फुलिङ्गसुप्रभम् ।
आलयं सर्वबुद्धानां ध्यात्वा बुद्धसमो भवेत् ॥ ८ ॥
षट्त्रिंशत्सुमेरूणां यावन्तः परमाणवः।
भवन्ति तस्यानुचराः सर्ववज्रधरोपमाः ॥ ९ ॥

अपने मन्त्र के द्वारा स्फुलिङ्ग प्रज्वलित चक्र का ध्यान करके और सर्व बुद्धों के आलय का ध्यान करने पर वह बुद्ध के समान होगा।

३६ सुमेरु पर्वतों के जितने भी परमाणु हैं वे सब भी उसी योगी के अनुचर होंगे जो सर्ववज्रधर के समान हैं।

चक्रसमयो नाम समाधिः ॥

स्वमन्त्रेण महावज्रं ध्यात्वा मण्डलमध्यतः ।
आलयं सर्ववज्राणां चित्तवज्रसमो भवेत् ॥ १० ॥

यही चक्रसमय नामक समाधि है। मण्डल के मध्य से स्वमन्त्र के द्वारा महावज्र का ध्यान करके साथ ही सर्ववज्रों के आलय का भी ध्यान करके वह चित्त वज्र के समान होगा।

षट्त्रिंशत्सुमेरूणां यावन्तः परमाणवः ।
योषितस्तस्य तावन्त्यो भविष्यन्ति गुणालयाः ॥
त्रैधातुकमहावज्रो भवेद्रुद्रनमस्कृतः ॥ ११ ॥

३६ सुमेरु पर्वतों के जितने भी परमाणु होंगे उसके उतने ही स्त्रियाँ होगी जो गुणों की खान होंगी। वह त्रैधातुक महावज्र होगा जिसे रुद्रादि देवता भी नमस्कार करेंगे।

वज्रसमता नाम समाधिः ॥

पद्मं स्वमन्त्रवज्रेण ध्यात्वा अष्टदलं महत् ।

आलयं सर्वधर्माणां चिन्त्यधर्मसमो भवेत् ॥ १२ ॥

यही वह वज्र समता नामक समाधि है। अष्ट दलों से युक्त कमल को स्वमन्त्र वज्र के द्वारा ध्यान करके और सर्वधर्मों का आलय का साक्षात्कार द्वारा वह अचिन्त्य धर्म के समान होगा।

षट्त्रिंशत्सुमेरूणां यावन्तः परमाणवः ।

संस्थापयति शुद्धात्मा बुद्धपूजाग्रमण्डले ॥ १३ ॥

३६ सुमेरु पर्वतों के जितने परमाणु होंगे वह शुद्धात्मा योगी उतने वर्षों तक बुद्ध पूजा के अग्र मण्डल में रहता है।

पद्मसमता नाम समाधिः ॥

तिष्ठेत् त्रिकल्पसमयं सेवयन् पञ्चज्ञानिनाम् ।

दशदिक्सर्वबुद्धानां त्रिगुह्यं पर्य्युपासते ॥ १४ ॥

यही समता नामक समाधि है। पञ्च ज्ञानियों की सेवा से तीन कल्प तक उनके साथ रह सकता है। और दशों दिशाओं स्थित बुद्धों की सेवा और त्रिगुह्य की उपासना करता है।

स्वमन्त्रं भावयेत्खड्गं पञ्चरश्मिसमप्रभम् ।

पाणौ गृह्यविशालाक्षः वज्रविद्याधरो भवेत् ॥ १५ ॥

पञ्चरश्मियों के प्रभा से युक्त स्वमन्त्रों की भावना, जहाँ खड्ग हाथ में लिए हुए है, वह साक्षात् विशाल नेत्र वाला विद्याधर के समान होगा।

त्रैधातुकमहापूज्यो दैत्यब्रह्मेन्द्रनमस्कृतः ।

त्रिसाहस्त्रमहाशूरो भवेद्ब्रह्म नरोत्तमः ॥ १६ ॥

तीनों लोक धातुओं में पूजित, दैत्य-ब्रह्म-इन्द्र आदियों से नमस्कृत, त्रिसहस्त्रों में महासूर और नरों में उत्तम, ब्रह्मा ही होगा।

यदभिलषति चित्तेन कायवाक्चित्तवज्रिणः ।
ददाति तादृशीं सिद्धिं चित्तवज्रप्रभाविताम् ॥ १७ ॥

काय-वाक्-चित्त वज्र से जो कुछ चित्त के द्वारा वह चाहता है चित्त वज्रों से प्रभावित वैसी सिद्धि वह तत्काल ही पा जाता है।

सर्वखड्गोत्तमो नाम समाधिः॥

ओंकारगुटिकां ध्यात्वा चणकास्थिप्रमाणतः।
मध्ये स्वदेवताबिम्बं मुखे चिन्त्य विभावयेत् ॥ १८ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव बोधिसत्त्वसमप्रभः।
उदितादित्यसङ्काशो जाम्बूनदसमप्रभः ॥ १९ ॥

सर्वखड्गोत्तम नाम समाधि यही है । ऊँ कार का ध्यान करके और उसमें भी चने के आकार जैसा अपने देवता विम्ब के बीच में, वह भी अपने कूटस्थ में भावना करने से तत्काल ही बोधिसत्त्व के समान, उदय कालिक चन्द्र जैसा और स्वर्ण के छटा जैसी प्रभाव वाला वह हो जाएगा।

आःकारगुटिकां ध्यात्वा चणकास्थिप्रमाणतः ।
मध्ये स्वदेवताबिम्बं मुखे चिन्त्य विभावयेत् ॥ २० ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव बोधिचित्तसमप्रभः ।
उदितादित्यसङ्काशो जाम्बूनदसमप्रभः ॥ २१ ॥

चने के प्रमाण से आः कार का ध्यान करके उसके बीच में अपने मुख के उपर-भृकुटि में स्वदेवता विम्ब का ध्यान करें। उसी क्षण वह योगी बोधिचित्त के समान, उदयकालिक चन्द्रसूर्य सदृश और स्वर्ण जैसा तेजस्वी हो जाएगा।

हूँकारगुटिकां ध्यात्वा चणकास्थिप्रमाणतः ।
मध्ये स्वदेवताबिम्बं मुखे चिन्त्य विभावयेत् ॥ २२ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव वज्रकायसमप्रभः ।
उदितादित्यसङ्काशो जाम्बूनदसमप्रभः ॥ २३ ॥

उसी प्रकार चने के आकार जैसे हूँकार का ध्यान करके बीच में, अपने भृकुटि में स्वदेवता विम्ब का ध्यान करने से उसी क्षण वह योगी वज्रकाय समान और स्वर्ण एवं चन्द्र सूर्य के उदय कालिक तेज के समान होगा।

खधातुस्वच्छमध्यस्थं वैरोचनं प्रभावयेत् ।
हस्ते चक्रं प्रभावित्वा चक्रविद्याधरो भवेत् ॥ २४ ॥
महाचक्रकुलं ध्यात्वा इदं चक्राग्रसाधनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण चक्रकायाग्रयोगतः ॥ २५ ॥

आकाश धातु स्वच्छ मध्य में स्थित वैरोचन का ध्यान करें। और हाथ में चक्र का ध्यान करके वह चक्रधारी विद्याधर होगा। महाचक्र कुल का ध्यान करके और यह चक्राग्र साधन करना चाहिए – ज्ञानवज्र के द्वारा चक्रकायाग्र योग के द्वारा।

खधातुवज्रमध्यस्थं ज्ञानाक्षोभ्यं विभावयेत् ।
हस्ते वज्रं प्रभावित्वा वज्रविद्याधरो भवेत् ॥ २६ ॥

आकाश धातु वज्र में स्थित ज्ञानरूप अक्षोभ्य का ध्यान करना चाहिए। हाथ में वज्र की भावना करके वह योगी वज्र विद्याधर हो जाएगा।

महावज्रकुलं ध्यात्वा इदं वज्राग्रसाधनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण वज्रकायाग्रयोगतः ॥ २७ ॥

महावज्र कुल का ध्यान करके यह वज्राग्र साधना करनी चाहिए ज्ञानवज्र के द्वारा और वज्र का योग द्वारा भी।

खधातुरत्नमध्यस्थं रत्नवज्रं प्रभावयेत् ।
हस्ते रत्नं प्रभावित्वा रत्नविद्याधरो भवेत् ॥ २८ ॥
महारत्नकुलं ध्यात्वा इदं रत्नाग्रसाधनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण रत्नकायाग्रयोगतः ॥ २९ ॥

आकाश धातु में अवस्थित रत्नवज्र का ध्यान करें। उनके हाथ में रत्न है ऐसी भावना के द्वारा योगी रत्न विद्याधर के समान होता है। महारत्न कुल का ध्यान करने के बाद जो रत्नों के अग्र साधन हैं उनका ध्यान करना चाहिए। रत्नकाय के अग्रयाग से ज्ञानवज्र द्वारा यह ध्यान किया जाता है।

खधातुपद्ममध्यस्थं अमिताभं प्रभावयेत् ।
हस्ते पद्मं प्रभावित्वा पद्मविद्याधरो भवेत् ॥ ३० ॥
महापद्मकुलं ध्यात्वा इदं पद्माग्रसाधनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण धर्मकायप्रयोगतः॥ ३१ ॥

आकाश धातु के कमल के मध्य में अवस्थित भगवान् अमिताभ का ध्यान करें। उनके हाथों में पद्म है ऐसी भावना से वह साधक पद्मविद्याधर समान हो जाता है। महापद्मकुल का ध्यान करके जो यह पद्माग्र साधन है उसकी भावना करनी चाहिए जिससे वह धर्माग्रकाय और ज्ञानवज्र के समान हो जाता है।

खधातुसमयमध्यस्थं अमोघाग्रं प्रभावयेत् ।
हस्ते खड्गं प्रभावित्वा खड्गविद्याधरो भवेत् ॥ ३२ ॥
महासमयकुलं ध्यात्वा इदं समयाग्रसाधनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण कायसमययोगतः ॥ ३३ ॥

खधातु के समयमध्य में अवस्थित अमोघवज्र का ध्यान करें। उनके हाथों में खड्ग है ऐसी भावना से स्वयं साधक खड्ग विद्याधर हो जाता है। महासमय कुल का ध्यान करके इस समय अग्रसाधन का ध्यान करना चाहिए जिससे वह समासमय योग से ज्ञानवज्र के समान हो जाता है।

त्रिशूलज्ञानाङ्कुशादयः साध्या वज्रप्रभेदतः ।
सिध्यन्ति तस्य ध्यानेन कायवाक्चित्तसाधनैः ॥ ३४ ॥

वज्रों के भेद से त्रिशूल-ज्ञान-अंकुश आदि साध्य होते हैं इससे काय, वाक् और चित्त के साधना रूप ध्यान से वे सभी सिद्ध हो जाते हैं।

इत्याह भगवान् महासमयसिद्धिवज्रः ।
चतुष्पथैकवृक्षे वा एकलिङ्गे शिवालये ।
साधयेत् साधको नित्यं वज्राकर्षं विशेषतः॥ ३५ ॥
त्रियोगमन्त्रपुरुषं ध्यात्वा त्रियोगवज्रिणम् ।
अङ्कुशं कायवाक्चित्तं बुद्धानां ज्ञानबुद्धिनाम् ॥ ३६ ॥
वायव्यमण्डलाग्रस्थं बुद्धाकर्षणमुत्तमम् ।
दशदिक्समयसम्भूतं वज्रेणाकृष्य भुञ्जयेत् ॥ ३७ ॥

चौराहे में स्थित किसी एक वृक्ष के मूल में, एकान्त शिवालय में, विशेष करके साधक वज्र का आकर्षण साधना करें। त्रियोग मन्त्र पुरुष जो त्रियोगवज्री है उसका ध्यान करके फिर काय, वाक् और चित्त का ध्यान करके जो ज्ञान बुद्धों का अंकुश है साथ ही वायव्य मण्डल के अग्रस्थ जो उत्तम बुद्धों का आकर्षण है, वज्र के द्वारा आकृष्ट करके दशों दिशाओं के समय सम्भूति का भोजन करें।

खधातुसमयवज्राकर्षणम् ॥
वैरोचनं महाचक्रं ध्यात्वाङ्कुशं जिनालयम् ।
वज्रपद्मादिभिः कार्यं समयाकर्षणमुत्तमम् ॥ ३८ ॥

खधातु समय वज्र का यही आकर्षण है। वैरोचन नामक जो महाचक्र है जो अंकुश रूप जिनालय है उसे वज्रपद्मादि के द्वारा समयाकर्षण उत्तस्वरूप है उसका ध्यान करें ।

त्रैधातुकसमयाकर्षणम् ॥
सर्वाकारवरोपेतं बुद्धबिम्बं विभावयेत् ।
पाणौ च कायवाक्चित्तं अङ्कुशादीनि भावयेत् ॥ ३९ ॥

यही त्रैधातुक समयाकर्षण है। सभी आकारों में उच्च बुद्ध विम्ब का ध्यान करके और हाथ में काय, वाक् चित्त और अंकुश आदि की भावना करें

अनेन खलु योगेन स भवेत्परकर्मकृत् ।
सर्वाकारवरोपेतं कायवज्रं विभावयेत् ॥ ४० ॥

इसी योग के द्वारा वह परमकर्मकृत् हो जाता है। उसके बाद सर्वाकार वरयुक्त काय वज्र का ध्यान करें।

जिह्वावज्रप्रयोगेण ध्यात्वा वाग्वज्रसमो भवेत् ।
त्रिगुह्यसमयपूजाग्रीं पूजां पूज्य प्रभावयेत् ॥ ४१ ॥

जिह्वा वज्र योग पूर्वक ध्यान करके वह वाग्वज्र के समान हो जाता है। त्रिगुह्य के समय पूजा के अग्र भागी की पूजा से वह पूज्य हो जाता है। यह सब सभी सिद्धियों का गुह्य समुच्चय सार है। यही कहा भगवान् महागुह्य समय ने।

इदन्तत् सर्वसिद्धीनां सारं गुह्यसमुच्चयम् ।
इत्याह भगवान् महागुह्यसमयः ।
महामांससमयाग्रेण साधयेत् त्रिवज्रमुत्तमम् ।
विण्मूत्रसमाग्रेण भवेद्विद्याधरः प्रभुः ॥ ४२ ॥
हस्तिसमयमांसेन पञ्चाभिज्ञत्वमाप्नुयात् ।
अश्वसमयमांसेनान्तर्द्धानाधिपो भवेत् ॥ ४३ ॥
श्वानसमयमांसेन सर्वसिद्धिप्रसाधनम् ।
गोमांससमयाग्रेण वज्राकर्षणमुत्तमम् ॥ ४४ ॥
अलाभे सर्वमांसानां ध्यात्वा सत्त्वं विकल्पयेत् ।
अनेन वज्रयोगेन सर्वबुद्धैरधिष्ठ्यते ॥ ४५ ॥
सर्वाकारवरोपेतं कायवाक्चित्तवज्रिणम् ।
हृदये ज्ञानसमयं मुकुटे वज्राग्रधारिणम् ॥ ४६ ॥
प्रीणनं सर्वबुद्धानां इदं समयनयोत्तमम् ।
कर्तव्यं समयाग्रेण सर्वसिद्धिकरं परम् ॥ ४७ ॥

महामांसरूप समय के अग्रपूजा से उत्तम त्रिवज्र की साधना करें। और विष्ठा मूत्र समय आदि के द्वारा भावना करने से विद्याधर प्रभु के समान हो जाता है। हस्ति समय के द्वारा पञ्च अभिज्ञता प्राप्त करता है। घोड़े के मांस से वह अन्तर्ध्यान के लिए पूर्ण शक्तिशाली हो जाता है। कुत्ते के मांस द्वारा वह सभी सिद्धियों को पा जाता है। गोमांस के पूजा द्वारा उत्तम वज्राकर्षण प्राप्त करता है। यदि उपर्युक्त मांस यदि उपलब्ध न हों तो उनका ध्यान करके ही समर्पित करना चाहिए। इसी वज्र योग से सभी बुद्धों द्वारा रहा जाता है। सभी आकारों में परिणत काय, वाक् और चित्त वज्रधारी का जो ज्ञान समय है और वज्रों के अग्र धारक है, हृदय में उनका ध्यान करें। सभी बुद्धों की यही खुशी

है। यही समय नयों में उत्तम है। यह सर्व सिद्धि कर योग है उसे समयाग्र रूप में करना चाहिए। यही सर्वसमय ज्ञान वज्राहार नामक समाधि है।

सर्वसमयज्ञानवज्राहारो नाम समाधिः ॥

जिह्वा समयवज्राग्रे ध्यात्वा हूँकारवज्रिणम् ।
पञ्चामृतप्रयोगेण वज्रसत्त्वत्वमाप्नुयात् ॥ ४८ ॥
आःकारौंकारसमयमिदं वज्रनयोत्तमम् ।
अनेन खलु योगेन वज्रसत्त्वसमो भवेत् ॥ ४९ ॥

जिह्वा रूप समय के अग्रभाग में 'हूँ' कार रूप वज्री का ध्यान करने के बाद पञ्चामृत के प्रयोग द्वारा वज्रसत्त्व अवस्था प्राप्त करना चाहिए। 'आः' कार 'औं' कार रूप समय वज्र ही वज्र नयोंमें उत्तम है। इसी योग के द्वारा वज्रसत्त्व के समान हो जाता है।

समयवज्रामृतमालिनी नाम समाधिः ॥

त्रिवज्रसमयसिद्ध्यर्थं भवेत्त्रिकायवज्रिणः ।
दशदिक्सर्वबुद्धानां भवेच्चिन्तामणयोदधिः ॥ ५० ॥

यही समय वज्रामृत मालिनी नामक समाधि है। त्रिवज्ररूप समय सिद्धि प्राप्ति के लिए, त्रिकाय वज्री के स्वरूप में परिणत होना चाहिए। दशों दिशाओं के जितने भी बुद्ध हैं उनके चिन्तन करने से चिन्तामणि समुद्र के तरह ही हो जाता है।

आभासयति वज्रात्मा लोकधातुं समन्ततः ।
चक्रसमयसिद्ध्यन्ते बुद्धकायसमो भवेत् ॥ ५१ ॥

वह वज्रात्मा अपने प्रभाव से समस्त लोकधातुओं को चारों ओर से अवभासित करता है। उसके चक्र समय सिद्ध हो जाते हैं और वह बुद्धकाय के समान हो जाता है।

विचरेत् समन्ततः सिद्धो गङ्गावालुकसर्वतः ।
सर्वेषु समयाग्रेषु विद्याधरप्रभुर्भवेत् ॥ ५२ ॥

वह चारों ओर गङ्गा के बालुकाओं के तरह फैलकर सिद्धि विचरण करें। सभी समयाग्र भावों में विद्याधर रूप प्रभु होगा।

सर्वसमयसिद्ध्यग्रे कायवज्रप्रभावतः।
अन्तर्द्धानेषु सर्वेषु साहस्त्रैकावभासकः।
हरते सर्वसिद्धीनां भुङ्क्ते कन्यां सुराग्रजाम् ॥ ५३ ॥

सर्वसमय के अग्र सिद्धि के लिए, काय वज्र के प्रभाव से, सभी अन्तर्ध्यान अवस्थाओं में हजारों किरणों से परिपूरित करता है। सभी अन्यलोकों के सिद्धियों का हरण पूर्वक देवताओं में अग्रसुन्दरी कन्या का उपभोग करता है।

गङ्गावालुकसमान् बुद्धांस्त्रिवज्रालयसंस्थितान् ।
पश्यते चक्षुर्वज्रेण स्वहस्तैकं यथामलम् ॥ ५४ ॥

त्रिवज्रालयों में स्थित गङ्गावालुका के समान बुद्धों को वह चक्षुवज्र के द्वारा देखता है जैसे अपने हाथ में रखे हुए अमला को देखता है।

गङ्गावालुकसमैः क्षेत्रैः ये शब्दाः संप्रकीर्तिताः।
श्रृणोत्यभिज्ञावशतः श्रोत्रस्थमिव सर्वतः ॥ ५५ ॥

गङ्गा बालुका के समान क्षेत्रों में जितने भी 'शब्द' हैं वह उन सभी शब्दों को 'अभिज्ञा' रूप समाधि के द्वारा सुन सकता है जैसे कि कानों में ही वे हों।

गङ्गावालुकसमैः क्षेत्रैः कायवाक्चित्तलक्षणम् ।
स वेत्ति सर्वसत्त्वानां चित्ताख्यं नाटकोद्भवम् ॥ ५६ ॥

गङ्गा बालुका के समान क्षेत्रों में जितने भी काय, वाक् और चित्त के लक्षण हैं, सभी सत्त्वों के उन तीनों को वह जानता है जैसे की चित्त के नाम से प्रसिद्ध नाटकों से उद्भव हों।

गङ्गावालुकसमैः कल्पैः संसारस्थितिसम्भवम् ।
पूर्वनिवाससमयं दिनत्रयमिव स्मरेत् ॥ ५७ ॥

गङ्गा बालुका के समान कल्पों तक जो संसार की स्थिति की कल्पना की जाती है उसमें जो उसका निवास हुआ है उसे भी तीन दिन जैसा ही वह स्मरण कर सकता है ।

गङ्गावालुकसमैः कार्यैः बुद्धमेघाद्यलंकृतैः ।
गङ्गावालुकसमान् कल्पान् स्फरेद् दृढाग्रवज्रिणः ॥ ५८ ॥

गङ्गा के बालुका के समान जितने भी काम हैं उन सबको वह योगी बुद्ध मेघ रूपी अलङ्कार से अलङ्कृत होकर गङ्गा बालु समान कल्पों को, जो दृढ़-अग्र वज्रीका है उन्हें वह प्रकाशित करता है।

इत्याह भगवान् समयाभिज्ञः ।
वज्रचक्षुर्वज्रश्रोत्रं वज्रचित्तं वज्रपाणी वज्रऋद्धिश्चेति।
बुद्धाभिज्ञार्थसंसिद्धौ बुद्धकायसमो भवेत् ।
गङ्गावालुकसंख्यैश्च परिवारैः परीवृतः ।
विचरेत कायवाग्वज्रो लोकधातुं समन्ततः ॥ ५९ ॥

वज्र चक्षु, वज्र श्रोत्र, वज्रचित्त, वज्रपाणि, वज्रऋद्धि, आदि बुद्धाभिज्ञार्थ संसिद्धि होने पर वह योगी बुद्ध काय के समान हो जाता है। गङ्गा बालुका के समान असंख्य परिवारों से परिवृत वह योगी लोकधातु में चारों ओर काय वाग्वज्र के रूप में विचरण करता है।

सेवासमयसंयोगमुपसाधनसम्भवम् ।
साधनार्थसमयं च महासाधनचतुर्थकम् ॥ ६० ॥

सेवा-समय-संयोग को, जो उपाय साधन से उत्पन्न हुआ है और साधनार्थ समय साथ ही महासाधन समय चौथा है।

विज्ञाय वज्रभेदेन ततः कर्माणि साधयेत् ।
सेवासमाधिसंयोगं भावयेत् बोधिमुत्तमम् ॥ ६१ ॥

वज्रों के भेद द्वारा सारे समयों को जानकर ही कर्मों की साधना करनी चाहिए। सेवा समाधि संयोग, जो उत्तम बोधि है उसकी भावना करें।

उपसाधनसिद्ध्यग्रे वज्रायतनविचारणम् ।
साधने चोदनं प्रोक्तं मन्त्राधिपतिभावनम् ॥ ६२॥

उप साधनों के सिद्धि के अग्र अवस्था में वज्रायतन का विचार करना चाहिए। उस साधना में मन्त्राधिपति भावना को प्रेरित करना चाहिए।

महासाधनकालेषु बिम्बं स्वमन्त्रवज्रिणः ।
मुकुटेऽधिपतिं ध्यात्वा सिद्ध्यते ज्ञानवज्रिणः ॥ ६३ ॥

स्वमन्त्र वज्रिका जो विम्ब है उसे महासाधन काल में मुकुट में अधिपति का ध्यान करके ज्ञानवज्री का योग सिद्ध हो जाता है।

सेवाज्ञानामृते नैव कर्तव्यं सर्वतः सदा ।
एषो हि सर्वमन्त्राणां सर्वमन्त्रार्थसाधकः ॥ ६४ ॥

सेवा, ज्ञान रूप अमृत द्वारा हमेशा साधना करनी चाहिए। सभी मन्त्रों का सर्वमन्त्रार्थ साधक योग यही है।

महाटवीप्रदेशेषु विजनेषु महत्सु च ।
गिरिगह्वरकुलेषु सदा सिद्धिरवाप्यते ॥ ६५ ॥

बड़े जङ्गलों के स्थानों में, बड़े बड़े एकान्त मैदानों में, पर्वतों के गुफाओं में हमेशा सिद्धि होती है। यही भगवान् महावज्रसाधन ने कहा।

इत्याह भगवान् महासाधनवज्रः ।
अथ वज्रचतुष्केण सेवा कार्या दृढ़व्रतैः ।
त्रिवज्रकायमन्त्रेण भावयन् सिद्धिमश्नुते ॥ ६६ ॥

अब, इसके बाद चारों वज्रों के द्वारा दृढव्रती होकर सेवा करनी चाहिए। और त्रिकाय वज्र मन्त्र द्वारा भावना करते हुए सिद्धि प्राप्त होता है।

चतुःसन्ध्यप्रयोगेण पञ्चस्थानेषु बुद्धिमान् ।
ओंकारज्ञानवज्रेण ध्यात्वा सम्बरमाविशेत् ॥ ६७ ॥

चार सन्ध्या के प्रयोग द्वारा, पाँचों स्थानों में ओंकार वज्र के द्वारा बुद्धिमान् योगी ध्यान के द्वारा सम्बर में प्रविष्ट हो।

दिनादि सप्त पक्षं च मासमप्यब्दमेव च ।
उत्पाद्य वज्रसमयं लघु सिद्धिरवाप्यते ॥ ६८ ॥

सात दिन, एक पक्ष और एक महीना तक वज्र समय का उत्पादन करके अति शीघ्र सिद्धि प्राप्त करता है।

विस्तरेण मया प्रोक्तं दिनभेदप्रचोदतः ।
पक्षाभ्यन्तरतः सिद्धिरुक्ता गुह्याग्रसम्भवैः॥ ६९ ॥

मैंने विस्तारपूर्वक दिन, पक्ष, मास आदि भेद सहित पक्षाभ्यन्तर आदि बताया जिसमें गुह्याग्र से उत्पन्न सिद्धि प्राप्ति का मार्ग भी है।

तत्रेदमुपसाधनसम्बरविषयम् ।
बुद्धकायधरः श्रीमान् त्रिवज्राभेद्यभावितः ।
अधिष्ठानपदं मेऽद्य करोतु कायवज्रिणः ॥ ७० ॥

यहीं पर वह उपसाधन सम्बर विषय है। श्रीमान् बुद्धकाय के धारक, त्रिवज्राभेद्यों से उपासित, ऐसे काय वज्र रूप मेरा आज अधिष्ठान पर की सृष्टि करें।

दशदिक्संस्थिता बुद्धास्त्रिवज्राभेद्यभाविताः।
अधिष्ठानपदं मेऽद्य कुर्वन्तु कायलक्षितम् ॥ ७१ ॥

दशों दिशाओं में अवस्थित बुद्ध आदि वज्र अभेद्यों से उपासित मेरा अधिष्ठान पद, जो कायों से लक्षित है आप निर्माण करें।

तत्रेदं साधनसम्बरविषयम् ॥
धर्मो वै वाक्पथः श्रीमान् त्रिवज्राभेद्यभावितः ।
अधिष्ठानपदं मेऽद्य करोतु वाक्यवज्रिणः ॥ ७२ ॥

वहाँ पर यही साधन सम्बर विषय भी है। वाग्वज्र रूप मेरा अधिष्ठान, आप धर्मरूप, वाक्पथ, त्रिवज्र अभेद्य भावित श्रीमान् निर्माण करें।

दशदिक्संस्थिता बुद्धास्त्रिवज्राभेद्यभाविताः।
अधिष्ठानपदं तस्य कुर्वन्तु वाक्पथोद्भवम् ॥ ७३ ॥

दशों दिशाओं में स्थित जो बुद्ध हैं वे भी त्रिवज्र अभेद्यों से सेवित हैं, वाक्पथों से निसृत अधिष्ठान पद उनके लिए सृजित करें।

तत्रेदं महासाधनसम्बरविषयम् ।
चित्तवज्रधरः श्रीमान् त्रिवज्राभेद्यभावितः ।
अधिष्ठानपदं मेऽद्य कुर्वन्तु चित्तवज्रिणः ॥ ७४ ॥

वहाँ यही महासाधन सम्बर विषय है। चित्तवज्र धारक, श्रीमान् , तीनों अभेद्य वज्रों से भावित आप श्रीमान् चित्तवज्री मेरे अधिष्ठान का निर्माण आप करें।

दशदिक्संस्थिता बुद्धाः त्रिवज्राभेद्यभाविताः ।
अधिष्ठानपदं मेऽद्य कुर्वन्तु चित्तसम्भवाः ॥ ७५ ॥

दशों दिशाओं में संस्थित, त्रिवज्रों के अभेद्य द्वारा सेवित आप चित्तों से उत्पन्न मेरे लिए अधिष्ठान का निर्माण करें।

बुद्धो वा वज्रधर्मो वा वज्रसत्त्वोऽपि वा यदि ।
अतिक्रमेद्यदि मोहात्मा स्फुटेयुर्नात्र संशयः ॥ ७६ ॥

इस पद को प्राप्त करके बुद्ध, वज्रधर्म, वज्रसत्त्व अथवा और कोई क्यों न हो यदि अज्ञान रूप मोह से अहंकार आदि के द्वारा इस सिद्धान्त का अतिक्रमण करता है तो वह तत्काल ही नष्ट हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे समयसाधनाग्रनिर्देशपटलो द्वादशोऽध्यायः ।

द्वादश पटल पूर्ण हुआ।

त्रयोदशपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागता ज्ञानवज्राग्रचारिणः सर्वसत्त्वार्थसम्भूता बोधिसत्त्वाश्च धीमन्तः प्रणिपत्य महाशास्तारं मुनिं सत्त्वार्थवज्रिणं पूजासमयतत्त्वज्ञं वज्रघोषमुदीरयन् ।

अहो बुद्धनयं दिव्यमहो बोधिनयोत्तमम् ।
अहो धर्मनयं शान्तमहो मन्त्रनयं दृढ़म् ॥ १ ॥

अब इसके बाद, सर्वतथागत ज्ञानवज्राग्रचारी, सर्वसत्त्वार्थ, सम्भूत, धीमान् भगवान् के नाम से प्रसिद्ध बोधिसत्त्वों ने महाशास्ता, सत्त्वार्थ वज्रधारी पूजा समय के ज्ञाता की पूजा करके कर्म प्रसार हेतु प्रार्थना रूप (प्रशंसात्मक) निवेदन किया। अहो यह बुद्धनय! दिव्य है!! यह बोधिनय भी परम उत्तम है!! यह धर्मनय भी परं शान्त है!! यह मन्त्रनय दृढ है!! सब कुछ आश्चर्यमय है।

अनुत्पन्नेषु धर्मेषु स्वभावातिशयेषु च ।
निर्विकल्पेषु धर्मेषु ज्ञानोत्पादः प्रगीयते ॥ २ ॥

सर्वधर्मों के अनुत्पन्न होने पर, स्वाभावरहित होने पर, और समग्र धर्मों के निर्विकल्प होने पर ही ज्ञान का उत्पादन होता है, ऐसा कहा जाता है।

भाषस्व भगवन् रम्यं सर्वधर्म समुच्चयम् ।
वज्रजापं महाज्ञानं त्रिकायाभेद्यमण्डलम् ॥ ३ ॥

हे भगवन् रमणी सर्वधर्मों का समुच्चय स्वरूप, महाज्ञान, त्रिकायाभेद्यमण्डलात्मक जप के विषय में कृपया बतायें ।

प्राप्यन्ते बुद्धज्ञानानि त्रिवज्राभेद्यभावनैः ।
जपन् वज्रप्रयोगेण सर्वबुद्धैरधिष्ठ्यते ॥ ४ ॥

त्रिवज्राभेद्य भावना के द्वारा बुद्ध के ज्ञान उपलब्ध होते हैं, और वज्र के प्रयोग से जपते हुए समग्र बुद्धों द्वारा अधिष्ठित किया जाता है।

कुलानां सर्वमन्त्राणां कायवाक्चित्तलक्षणम् ।
मन्त्रजापं प्रघोषाथ वज्रजापमुदाहरन् ॥ ५ ॥

सभी कुल और मन्त्रों के जो काय, वाक् और चित्तों के लक्षण हैं, वज्रजापों को उदाहृत करते हुए मन्त्र जाप क्या है आप कृपया बतायें ।

बुद्धाश्च त्र्यध्वसम्भूताः कायवाक्चित्तवज्रिणः ।
संप्राप्ता ज्ञानमतुलं वज्रमन्त्रप्रभावनैः ॥ इति ॥ ६ ॥

त्रिअध्व में अवस्थित बुद्ध, और काय वाक् चित्त वज्र को प्राप्त हुए जो भी हैं वे सब वज्रमन्त्रों के प्रभावों द्वारा उत्तम ज्ञान को प्राप्त हुए हैं।

अथ वज्रधरः शास्ता खवज्रज्ञानसम्भवः ।
कर्ता स्त्रष्टा वराग्राग्र्यो वज्रजापमुदाहरत् ॥ ७ ॥

इस प्रार्थना के बाद वज्रधर, शास्ता, खवज्रज्ञान से समुत्पन्न, कर्ता, वरों में श्रेष्ठ भगवान् ने मन्त्र जाप के विषय में यों कहा।

सर्वमन्त्रार्थजापेषु त्रिवज्राभेद्यलक्षणम् ।
त्रिभेदे वज्रपर्य्यन्तो न्यासोऽयं त्रिवज्रमच्यते ॥ ८ ॥

सभी मन्त्रार्थों के जपों में त्रिवज्रभेद्यलक्षण निहित है। त्रिभेद में वज्रपर्यन्त यह जो न्यास है वही त्रिवज्र कहा जाता है।

इत्याह च ।

त्रिविधं स्फुरणं कार्यं कायवाक्चित्तसन्निधौ ।
अनेन जापवज्रेण वज्रचित्तसमो भवेत् ॥ ९ ॥

तीन प्रकार का स्फुरण होना चाहिए काय, वाक् और चित्त के सन्निधि में, इस जाप मन्त्र से वह साधक वज्र चित्त के समान होता है।

बुद्धानां कायवाक्चित्तं ध्यात्वा पूजाप्रकल्पनम् ।
कर्तव्यं ज्ञानवज्रेण इदं बोधिसमावहम् ॥ १० ॥

बुद्धों का काय, वाक् और चित्तों का ध्यान करके पूजा की कल्पना करनी चाहिए। यह सब ज्ञानवज्र को करना चाहिए। यही बोधि की समानता है।

अथवा स्फुरणं कार्यं त्रिभेदेन प्रति प्रति।
कायवाक्चित्तनैरात्म्यं ज्ञानचित्तेन संस्फरेत् ॥ ११ ॥

अथवा स्फुरण करना चाहिए त्रिभेद के द्वारा और ज्ञानचित्त के द्वारा काय-वाक् चित्त के नैरात्म्य की भावना करनी चाहिए, प्रकाशित करना चाहिए ।

उच्चारयन् स्फरेद्वज्रं समाप्तौ संहारमादिशेत् ।
इदन्तत् सर्वबुद्धानां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् ॥ १२ ॥

मन्त्र का उच्चारण करते हुए वज्र का प्रकाशन करना चाहिए। समाप्ति में संवर का आदेश करना चाहिए। यह सब सभी बुद्ध जो ज्ञान से जिनके आँख खुले हुए हैं।

कायवज्राभिसम्बोधिं भावाभावविचारणम् ।
बुद्धकाय इति प्रोक्तः कायजापः स उच्यते ॥ १३ ॥

काय वज्र की अभिसम्बोधि, भावाभाव का विचार-यही बुद्धकाय कहा गया है और काय जाप भी वही कहा जाता है।

वाक्यसमयसम्बोधिः शब्दाशब्दविचारणम् ।
वाग्वज्र इति प्रोक्तो वाग्जापः स उच्यते ॥ १४ ॥

वाक्य समय सम्बोधि, शब्द और अशब्द की विचारणा ही वाग्वज्र कहा गया है वही वाग्जाप भी कहा जाता है।

चित्तसमयसम्बोधिः स्थितिवज्रविचारणम् ।
वज्रचित्तमिति प्रोक्तं चित्तजापः स उच्यते ॥ १५ ॥

चित्त समय की सम्बोधि, स्थिति वज्र का विचार ही वज्र चित्त कहा गया है और वही चित्त जाप भी है।

अथानुगमजापेन निःस्वभावेन चारुणा ।
विचारणं त्र्यध्वबुद्धेभ्यो रत्नजापः स उच्यते ॥ १६ ॥

अब अर्थ के ज्ञानानुसार सुन्दर निःस्वार्थ द्वारा विचारणा तीन अध्वजपों से रत्नजाप कहा गया है।

स्फरणं कायमेघेन बुद्धक्षेत्रात् समन्ततः ।
गमनागमनवज्रार्थममोघजापः स उच्यते ॥ १७ ॥

काय मेघ के द्वारा बुद्ध क्षेत्रों में चारों और प्रकाशित करना और वज्र के लिए गमन और आगमन ही अमोघ जाप कहा गया है।

शृणोति मन्त्राक्षरपदं स्ववज्रैर्घुष्टमण्डलम् ।
क्रोधसमयज्ञानेन क्रोधजापः स उच्यते ॥ १८ ॥

स्ववज्रों से शब्द युक्त मण्डल जो मन्त्राक्षर पद है जो व्यक्ति उसको सुनता है, क्रोध समय के ज्ञान से वही क्रोध जाप कहा गया है।

कामार्थं विह्वलीभूतान् सर्वत्राणहितैषिणः ।
सत्त्वान् मोहपदे स्थाप्य मोहजाप इति स्मृतः ॥ १९ ॥

कामशान्ति के लिए अत्यन्त आतुर हुए सर्व त्राणहितैषि प्राणियों को मोहपद में स्थापित करके ही मोहजाप कहा गया है।

रागवज्रोद्भवं वाचं कायवाक्चित्तसंस्थिताम् ।
सत्त्वान् रागपदे स्थाप्य रागजाप इति स्मृतः ॥ २० ॥

रागवज्र से उद्भव जो वाणी है, वही काय वाक् और चित्त में भी अवस्थित है। इसीलिए प्राणियों को रागपद में स्थापित करना ही राग जाप ऐसा समझा गया है।

द्वेषवज्रोद्भवं चित्तं कायवाक्चित्तसंस्थितम् ।
सत्त्वान् द्वेषालये स्थाप्य द्वेषजापः स उच्यते ॥ २१ ॥

द्वेषवज्र से उद्भव जो चित्त है वही काय वाक् और चित्त में स्थित है, इसीलिए प्राणियों को द्वेषालय में स्थापित करना ही द्वेषजाप कहा गया है।

त्रिवज्रसमयं तत्त्वं मध्यमं समयवज्रिणम् ।
तदेव सर्ववज्राणां जापो नपुंसक उच्यते ॥ २२ ॥

त्रिवज्रसमय रूप जो तत्त्व है वह मध्यम और समयवज्र भी है, वही सभी वज्रियों का नपुंसक जाप कहा गया है।

वज्राधिपतयः सर्वे रागतत्त्वार्थचिन्तकाः ।
कुर्वन्ति रागजां बोधिं सर्वसत्त्वहितैषिणीम् ॥ २३ ॥

सभी वज्रों की अधिपति राग तत्त्वार्थ चिन्तक हैं। वे ही राग से उत्पन्न बोधि हैं जो सभी प्राणियों के हितैषी हैं ।

लोचनाद्या महाविद्या नित्यं कामार्थतत्पराः ।
सिध्यन्ति कामभोगैस्तु सेव्यमानैर्यथेच्छतः ॥ २४ ॥

लोचन आदि महाविद्या में निरन्तर काम के लिए तत्पर रहती हैं। काम भोगों के द्वारा सेवा करने पर साधकों के सारे मनोरथ सिद्ध होते हैं।

मोहसमयसम्भूता विद्याराजानो वज्रिणः ।
नपुंसकपदे सिद्धाः ददन्ति सिद्धिमुत्तमाम् ॥ २५ ॥
क्रोधा द्वेषालये जाता नित्यं मारणतत्पराः ।
सिद्धयन्ति मारणार्थेन सेव्यमानैर्यथेच्छतः ॥ २६ ॥

मोह समय से समुत्पन्न विद्याराजा वज्री हैं, वे नपुंसक पद में सिद्ध हैं और उत्तम सिद्धि देते भी हैं। क्रोध द्वेषालय में उत्पन्न हुए हैं, और नित्य ही मारण के लिए तत्पर भी हैं। वे सब मारण प्रयोग से सिद्ध होते हैं अपने इच्छा से सेवा करने से ही वे सिद्ध होते हैं।

इत्याह भगवान् महापुरुषसमयः ।
हृदि मध्यगतं चक्रं भावयेत् ज्ञानवज्रिणाम् ।
स्वच्छमण्डलमध्यस्थं चक्रमन्त्रार्थभावना ॥ २७ ॥
हृदि मध्यगतं वज्रं भावयेत् ज्ञानवज्रिणः ।
वज्रमण्डलमध्यस्थं वज्रमन्त्रार्थभावना ॥ २८ ॥

ज्ञानवज्रियों के चक्र जो हृदय के बीच में अवस्थित है, उसकी भावना करनी चाहिए। स्वच्छ मण्डल के मध्य में चक्रमन्त्रार्थ की भावना करना है। हृदय में स्थित वज्र का ध्यान करना चाहिए जो ज्ञानवज्र का वज्र है। वज्रमण्डल के मध्य में वज्रमन्त्रार्थ भावना करनी है।

हृदि मध्यगतं रत्नं भावयेद्रत्नज्ञानिनः।
रत्नमण्डलमध्यस्थं रत्नमन्त्रार्थभावना ॥ २९ ॥

रत्नज्ञानी का जो रत्न है उसे हृदय के मध्य में भावना करें, रत्नमण्डल के मध्य में उसकी चिन्ता ही रत्नमन्त्रार्थ-भावना है।

हृदि मध्यगतं पद्मं भावयेत् पद्मज्ञानिनः।
धर्ममण्डलमध्यस्थं पद्ममन्त्रार्थभावना ॥ ३० ॥

पद्म ज्ञानी का पद्म हृदय के मध्य में ध्यान करें। धर्ममण्डल के मध्य में स्थित पद्ममन्त्रार्थ की भावना करनी चाहिए।

हृदि मध्यगतं खड्गं भावयेत् खड्गज्ञानिनः ।
समयमण्डलमध्यस्थं खड्गमन्त्रार्थभावना ॥ ३१ ॥

हृदय के मध्य में स्थित खड्गज्ञानी के खड् की भावना करनी चाहिए। समय मण्डल के मध्य में स्थित खड्ग मन्त्रार्थ भावना भी वही है।

सर्वमण्डलपार्श्वेषु सर्वबुद्धान्निवेशयेत्।
पञ्चरश्मिप्रभेदेन स्फारयन् बोधिमाप्नुते ॥ ३२ ॥

सभी मण्डलों के पार्श्व भागों में सभी बुद्धों को निविष्ट करना चाहिए। पञ्चरश्मियों के भेदपूर्वक प्रकाशित करने से बोधि प्राप्त होती है।

स्फुरणं सर्वमन्त्राणां द्विधा भेदेन कीर्तितम् ।
त्रिकायवज्रभेदेन संहारस्फरणं भवेत् ॥ ३३ ॥

सभी मन्त्रों का स्फुरण = प्रकाश दो भेद से होते हैं। त्रिकायवज्र के भेद से संहारस्फुरण होता है।

कायस्वभावं कायेन चित्तं चित्तस्वभावतः।
वाचं वाचस्वभावेन पूज्य पूजामवाप्नुयात् ॥ ३४ ॥

शरीर के द्वारा कायस्वभाव का, चित्त को चित्त के स्वभाव से, वाणी को वाणी के स्वभाव से पूजा करके ही पूजा का फल प्राप्त करना चाहिए।

महामण्डलचक्रेण पञ्चवज्रविभावना ।
मध्ये त्वधिपतिं ध्यात्वा स्वबिम्बं त्रिकायवज्रिणम् ॥ ३५ ॥

महामण्डल चक्र के द्वारा पञ्चवज्रों की भावना करनी चाहिए और बीच में अधिपति का ध्यान करके त्रिकायवज्रों के विम्ब का ध्यान करना चाहिए।

बिम्बस्वमन्त्रवज्रस्य मण्डलानां चतुष्टयम् ।
चतुर्वर्णेन संकल्प्य हृदि मन्त्रार्थभावना ॥ ३६ ॥

स्ववज्र मण्डल का विम्ब जो चारों मण्डल के विम्ब हैं, चार वर्णों के द्वारा हृदय में संकल्प करके मन्त्रार्थ भावना करनी चाहिए।

वज्रचतुष्टयं कर्म करोति ध्यानवज्रिणः ।
एषो हि सर्वमन्त्राणां रहस्यं परमशाश्वतम् ॥ ३७ ॥

ध्यान वज्री का वज्रचतुष्टय मन्त्र का जो योगी जाप करना है वही उनके रहस्य का ज्ञाता होता है और यही परम शाश्वत सर्वमन्त्रों का परम रहस्य भी है।

शान्तिके लोचनाकारं पौष्टिके पद्मवज्रिणम् ।
वश्ये वैरोचनपदं वज्रक्रोधोऽभिचारके ॥ ३८ ॥
इदन्तत् सर्वमन्त्राणं गुह्यं त्रिकायसम्भवम् ।
निर्मितं ज्ञानवज्रेण क्रियानाटकलक्षितम् ॥ ३९ ॥

शान्तिकर्मों में लोचना, पौष्टिक कर्मों में पद्मवज्री, वश्यकर्मों में वैरोचन पद और अभिचार कर्मों में वज्रक्रोध की आराधना करनी चाहिए। यह सब सभी मन्त्रों का गुह्य है जो त्रिकाय से समुद्गत हुआ है और क्रिया रूप नाटक से लक्षित तथा ज्ञानवज्र के द्वारा निर्मित है ।

अभक्तिवादिनः सत्त्वा निन्दकाचार्यवज्रिणे ।
अन्येषामपि दुष्टानामिदं कार्यं प्रचोदनम् ॥ ४० ॥

जो प्राणी भक्तिहीन हैं, और आचार्य वज्रधर की निन्दा करते हैं वे, तथा दुष्टों के प्रतारण के लिए भी किया जाता है। यही भगवान् महाज्ञान चक्रवज्र ने कहा है ।

इत्याह भगवान् महाज्ञानचक्रवज्रः ॥
त्रैधातुकस्थितान् सर्वान् बुद्धकाये विभावयेत् ।
संपुटोद्घाटितान् कृत्वा ततः कर्मप्रसाधनम् ॥ ४१ ॥

त्रैधातुक क्षेत्रों में अवस्थित सभी सत्त्वों को बुद्ध के काय में भावना करनी चाहिए। उसके बाद समग्र संपुटों का उद्घाटन करके फिर कर्म का प्रारंभ करना चाहिए।

खधातुमध्यगं वज्रं पञ्चशूलं चतुर्मुखम् ।
सर्वाकारवरोपेतं वज्रसत्त्वं विभावयेत् ॥ ४२ ॥
त्राध्वसमयसम्भूतं बुद्धचक्रं विभावयेत् ।
दक्षपाणाविदं कार्यं बुद्धचक्रं महाबलम् ॥ ४३ ॥

आकाश धातु में अवस्थित चार मुख और पञ्चशूलों से युक्त सर्वाकार से युक्त वज्र सत्त्व का ध्यान करना चाहिए । त्रिअध्व समय से उत्पन्न बुद्ध चक्र का ध्यान करना चाहिए। यह दक्षिण हाथ में होना चाहिए। यही महाबली बुद्ध चक्र भी है।

सत्त्वान् दशदिक् संभूतान् बुद्धकायप्रभेदतः ।
संहृत्य पिण्डयोगेन स्वकाये तान् प्रवेशयेत् ॥ ४४ ॥

बुद्ध के शरीर के भेद से दशों दिशाओं में अवस्थित प्राणियों को एकत्रित करके पिण्ड योग द्वारा अपने शरीर में उन्हें प्रवेश करायें।

स्फुरणन्तु पुनः कार्यं बुद्धानां ज्ञानवज्रिणाम् ।
क्रुद्धान् क्रोधाकुलान् ध्यात्वा विकटोत्कटभीषणान् ॥ ४५ ॥

फिर ज्ञानवज्री बुद्धों का प्रकाशन कराना चाहिए। विकट-उत्कट-भीषण, क्रोधकुलों को जो अतिशय क्रुद्ध हैं उनका ध्यान करना चाहिए ।

नानाप्रहरणहस्ताग्रान् मारणार्थाग्र्यचिन्तकान् ।
घातयन्तो महादुष्टान् वज्रसत्त्वमपि स्वयम् ॥ ४६ ॥
बुद्धास्त्रिकायवरदाः त्रिवज्रालयमण्डले ।
ददाति सिद्धिं मोहात्मा म्रियते नात्र संशयः ॥
दिनानि सप्तेदं कार्यं बुद्धस्यापि न सिध्यति ॥ ४७ ॥

इसके बाद नाना शस्त्रों से प्रहार में संलग्न, मारणप्रयोगों के चिन्तन में अग्रगण्य, महान् दुष्टों को घात करते हुए स्वयं वज्र सत्त्व का भी ध्यान करने से स्वयं ही बुद्ध जो त्रिकाय रूप वरदान दाता हैं वे ही त्रिवज्रालय मण्डल में सिद्धि देते हैं। जो इसमें मोह में फँस जाते हैं वे मर जाते हैं इसमें सन्देह नहीं है । सात दिन तक यह कार्य करने से सिद्धि होती है और मोह के कारण तो यह बुद्ध के लिए भी सिद्ध होगा नहीं है। यही वज्र समय ज्ञान चक्र नामक समाधि है।

वज्रसमयाज्ञाचक्रो नाम समाधिः ॥
खधातुमध्यगं चक्रं वज्रज्वालाविभूषितम् ।
सर्वाकारवरोपेतं वैरोचनं प्रभावयेत् ॥ ४८ ॥

आकाश धातु में स्थित वज्रज्वालाविभूषित चक्र को सर्वआकारों से युक्त भगवान् वैरोचन का ध्यान करना चाहिए।

त्र्यध्वसमयसम्भूतान् वज्रसत्त्वान् महायशान् ।
वज्रं स्फुलिङ्गगहनं पाणौ तस्य विभावयेत् ॥ ४९ ॥

तीन अध्वरूप समय से उद्‌भुत वज्रसत्त्वरूप महाशयों को, जो वज्र स्फुलिङ्गरूप गहनता को हाथ में धारण करते हैं उन्हें भावना करें।

सत्त्वान् दशदिक्संभूतान् वज्रकायप्रभेदतः ।
संहृत्य रश्मियोगेन स्वकाये तान् प्रवेशयेत् ॥ ५० ॥

दशों दिशाओं में अवस्थित प्राणियों को वज्र, काय के भेद से संहार-एकत्रित करके – रश्मियों के सहयोग से अपने शरीर में उन्हें प्रविष्ट कराना चाहिए।

स्फुरणं सर्ववज्राणं कार्यं ज्ञानाग्रबुद्धिना ।
श्रृण्वन्तु सर्वबुद्धात्मा कायवाक्‌चित्तयोगिनः ॥ ५१ ॥

सभी वज्रों को ज्ञान रूपी अग्र बुद्धि से प्रकाशित करना चाहिए और इस योग को सभी बुद्ध पुत्र जो काय, वाक् और चित्त के योग में संलग्न हैं वे सब सुनें ।

अहं वज्रधरः श्रीमान् आज्ञाचक्रप्रभेदतः ।
वज्रेणादीप्तवपुषा स्फारयामि त्रिकायजान् ॥
लंघयेद्यदि समयं विशीर्यते न संशयः ॥ ५२ ॥

मैं वज्रधर, श्रीमान् आज्ञाचक्र के भेद से, वज्र से अदीप्त शरीर युक्त होकर त्रिकायों से उत्पन्न सत्त्वों को प्रकाशित करता हूँ। यदि वे इस समय का उल्लंघन करते हैं तो निश्चय ही वे समाप्त हो जायेंगे।

चक्रसमयाज्ञावज्रो नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेद्‌बुद्धमण्डलवज्रिणम् ।
यमान्तकं महाचक्रं खवज्राख्यं प्रकल्पयेत् ॥ ५३ ॥

आकाश के मध्य में स्थित बुद्ध मण्डल के वज्री का चिन्तन करें और यमान्तक, महाचक्र जो खवज्र के नाम से विख्यात हैं उनका ध्यान करें।

बुद्धांश्च त्र्यध्वसम्भूतान् प्रविष्टांस्त्रिकायमण्डले ।
पुनः संस्फारयेद्‌बुद्धान् यमान्तकाकारसन्निभान् ॥ ५४ ॥

तीनों अध्वों से समुत्पन्न एवं त्रिकाय मण्डल में प्रविष्ट बुद्धों को जो यमान्तक और अकार से युक्त हैं, को प्रकाशित करना चाहिए।

सत्त्वांश्च त्र्यध्वसम्भूतान् रिपूणां दुष्टचेतसाम् ।
घातितान् भावयेत् क्रुद्ध इदं वज्राज्ञामण्डलम् ॥ ५५ ॥

तीनों अध्वों से युक्त एवं उत्पन्न प्राणियों के रक्षार्थ दुष्ट चित्त युक्त शत्रुओं को, जो घातित हैं का चिन्तन करें जो वज्रज्ञान मण्डल है उसी का ध्यान करना चाहिए। यही सर्वसमय सम्भव यमान्त का अन्य त्रिकाय-आज्ञावज्र नामक समाधि है।

सर्वसमयसम्भवयमान्तकस्मान्य त्रिकायाज्ञावज्रो नाम समाधिः ॥

कायवाक्चित्तवज्रैस्तु स्वमन्त्रार्थगुणेन वा ।
अथवा (पौष्य) समये आज्ञाचक्रप्रवर्तनम् ॥ ५६ ॥

काय, वाक् चित्त वज्रों से अथवा अपने मन्त्रों के अर्थों से, अथवा पौष्य नक्षत्र से युक्त समय में आज्ञाचक्र का प्रवर्तन करना चाहिए।

रक्षार्थं सर्वमन्त्राणां कार्यं ज्ञानाग्रवज्रिणाम् ।
इदं तत् सर्वबुद्धानां बोधिरक्षार्थमुच्यते ॥ ५७ ॥

सभी ज्ञानाग्रवज्रियों के सभी मन्त्रों के रक्षार्थ यह सब करना चाहिए। यही सभी बुद्धों का बोधिरक्षा के लिए यह सब किया जाता है।

इत्याह भगवान् बोधिचित्तः ।
खवज्रमध्यगं धर्मं वैरोचनाग्रसम्भवम् ।
ध्यात्वा त्रिकायवज्राग्रं आसनन्तु प्रकल्पयेत् ॥ ५८ ॥

यही कहा भगवान् बोधिचित्त ने। आकाशवज्र के मध्य में स्थित वैरोचन के अग्रसम्भव धर्म का ध्यान करके त्रिकायवज्र के अग्रस्वरूप के लिए आसनों की कल्पना करनी चाहिए।

खधातुं सर्वबुद्धैस्तु परिपूर्णं विभावयेत् ।
मन्त्राक्षरपदं ज्ञानं चित्ताकारं प्रकल्पयेत् ॥ ५९ ॥

समग्र खधातु में स्थित सभी बुद्धों को पूर्ण रूप से ध्यान करके मन्त्राक्षरपदों से चित्ताकार रूप ज्ञान की कल्पना करें।

पुनस्तु संस्फरेद्बुद्धान् चित्तवज्रप्रभावितान् ।
चित्तवज्रमिति कृत्वा त्रिकाये तान् प्रवेशयेत् ॥ ६० ॥

फिर से चित्तवज्र से प्रभावित बुद्धों को प्रकाशित करना चाहिए और चित्तवज्रों का ध्यान के बाद त्रिकायों में उन्हें प्रविष्ट करायें।

इत्याह भगवान् खवज्रसमयः ॥
वज्रमन्त्ररत्नप्रद्योतकरो नाम समाधिः ॥
सर्वाकारवरोपेतं वज्रसत्त्वं विभावयेत् ।
बुद्धांस्तु क्रमशः स्थाप्य जलस्योपरि चंक्रमेत् ॥
समयोदकप्रयोगेण मूर्ध्नि पादविभावनम् ॥ ६१ ॥

यही कहा भगवान् खवज्र समय ने। वज्रमन्त्ररत्नप्रद्योतकर नामक समाधि यही है। सभी आकारों से युक्त वज्रसत्त्वों की भावना करनी चाहिए। उसके बाद क्रमशः बुद्धों को स्थापित करके जल के ऊपर चङ्क्रमण करना चाहिए। और समय रूप जल का प्रयोग क़रके शिर में चरणों का ध्यान करना चाहिए।

इत्याह भगवान् स्वभावशुद्धः ॥
वज्रोदधिपदाक्रान्तो नाम समाधिः ॥
माहेन्द्रमण्डलं ध्यात्वा मध्ये क्रोधकुलं न्यसेत् ।
कर्मवज्रपदाक्रान्तं मूर्ध्नि तस्य विभावयेत् ॥
इत्याह च ॥
सर्वतीर्थप्रवादिस्तम्भनवज्रो नाम समाधिः ॥ ६२ ॥

भगवान् स्वभाव शुद्ध ने यही कहा है। वज्रोदधि-पदाक्रान्त नामक समाधि यही है। महेन्द्र के मण्डल का ध्यान करने के बाद उसके बीच में क्रोध कुल को स्थापित करें और कर्म वज्र पदों से आक्रान्त शिर का ध्यान करें। यह भी कहा है। यही सर्वतीर्थ प्रवादिस्तम्भन वज्र नामक समाधि है।

क्रोधाकारं त्रिवज्राग्रान् पीतकिंजल्कसन्निभान् ।
गिरिराज इव सर्वान् ध्यात्वा मूर्ध्नि प्रभावयेत् ॥
बुद्धसैन्यमपि स्तम्भे म्रियते नात्र संशयः ॥ ६३ ॥

क्रोध आकारों से युक्त त्रिवज्रिओं को जो पीले केशरों से युक्त हों महापर्वत के तरह ही सभी का ध्यान करके उनके शिरोभाग का ध्यान करे। उस स्तम्भन क्रिया में यहाँ तक की बुद्ध के सैनिक भी ठहर नहीं सकते।

इत्याह भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तसम्भवः ॥
सर्वसैन्यस्तम्भनो नाम समाधिः ॥
रिपुसन्त्रासनसमये इदं ध्यानं प्रकल्पयेत् ।
अतिक्रमेद्यदि बुद्धः स्फुटते नात्र संशयः ॥ ६४ ॥

यह कहा भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्त संभव ने। यही सर्वसैन्य स्तम्भन नामक समाधि है । शत्रुओं को सन्त्रसित करने के लिए यह ध्यान करना चाहिए। यदि इसका अतिक्रमण स्वयं बुद्ध भी करें तो वे भी नहीं टिक सकते।

इत्याह भगवान् त्रिवज्रसमयः ।
हूँकारकीलकं ध्यात्वा पञ्च शूलप्रमाणतः ।
वज्रकीलं कृतं तेन हृदये तद्विभावयेत् ॥
बुद्धसैन्यमपि क्रुद्धं नाशं गच्छेन्न संशयः ॥ ६५ ॥

यही भगवान् त्रिवज्रसमय ने कहा। हूँ कार का ध्यान करके पञ्चशूल प्रमाणों से जिसने वज्रकील का निर्माण किया उसका अपने हृदय में उसका ध्यान करें। उस अवस्था में क्रुद्ध बुद्ध सैन्य भी समाप्त हो जाता है।

रिपुमहापहारो नाम समाधिः ॥
नगरे वाऽप्यथवा ग्रामे विषये वा प्रयोजयेत् ।
अनेन नित्यं भवेच्छान्तिः सर्वरोगविवर्जिता ॥ ६६ ॥

रिपुमहापहार नामक समाधि यही है। नगर में अथवा ग्राम में इस योग का प्रयोग करना चाहिए। इसी के प्रयोग से नित्य शान्ति होती है और सर्वरोगों से रहित भी होता है।

अन्तरिक्षगतं वज्रं पञ्चशूलं प्रभावयेत् ।
कल्पोद्दाहमिव ध्यात्वा पुनः संहारमादिशेत् ॥ ६७ ॥

अन्तरिक्ष में स्थित वज्र, पञ्चशूल का ध्यान करे। समग्र कल्पसमय तक के तेज का ध्यान करके संहार क्रिया का आदेश करना चाहिए।

स्फुरणं च पुनः कार्यं रत्नचिन्तामणिप्रभैः ।
भावयेद्धर्ममेघान्वै अभिषेकं समादिशेत् ॥ ६८ ॥

फिर, विशिष्ट चिन्तामणि आदि रत्नों से वहाँ पर फिर से प्रकाशित करना

चाहिए। धर्ममेघादि के द्वारा चिन्तन-ध्यान करके अभिषेक का आदेश करना चाहिए।

अनेन ध्यानवज्रेण दुष्पूरोऽपि प्रपूर्यते ।
स भवेच्चिन्तामणिः श्रीमान् दानवज्रप्रसाधकः ॥
बुद्धमेघैर्महाधर्मैर्वज्रसत्त्वैश्च तत् स्फुरेत् ॥ ६९ ॥

इस ध्यान वज्र के द्वारा दुष्पूरक भी पूरित हो जाता है। वह चिन्तामणि स्वरूप, श्रीमान्, दान वज्र साधक हो जाता है। इसीलिए बुद्ध मेघरूपी महाधर्मों से, वज्रसत्त्वों से भी उन्हें प्रकाशित करना चाहिए।

त्रिकल्पासंख्येयस्थानं सर्वबुद्धैरधिष्ठ्यते ।
इदं तत् सर्वबुद्धानां कायगुह्यमनाविलम् ॥ ७० ॥

त्रिकल्पों के असंख्यक स्थानों में स्थित, जो सर्वबुद्धों से अधिष्ठित यही कायगुह्य अत्यन्त परिशुद्ध यही सर्वबुद्धों का स्वरूप है।

सर्वसत्त्वरोगापनयनवज्रसम्भवो नाम समाधिः॥
ध्यानवज्रेण समादानं यत्र स्थाने समाचरेत् ।
अनेन ध्यानयोगेन तिष्ठन् बुद्धैरधिष्ठ्यते ॥ ७१ ॥
ध्वजामृतमहाराजं वज्रकीलं प्रभावयेत् ।
निखनेद्दशदिक्चक्रं स्फुलिङ्गज्वालसन्निभम् ॥ ७२ ॥

यही सर्वसत्त्व रोगापनयन वज्रसम्भव नामक समाधि है। ध्यान वज्र के द्वारा जहाँ पर आदर पूर्वक दान दिया जाता है, वहीं पर इस समाधि योग द्वारा अधिष्ठित होकर रहे और ध्वजाओं से युक्त अमृत महाराज, जो वज्रकील हैं उनका ध्यान करना चाहिए। उनका स्वरूप - जलती हुई आग के तरह है और दशों दिशाओं में फैला हुआ होता है।

इत्याह च ॥

जगद्विजयशान्तिवज्रो नाम समाधिः ॥

खधातुमध्यगं चिन्तच्छान्तिमण्डलमुत्तमम् ।
बिम्बंवैरोचनं ध्यात्वा हृदयेऽथ प्रविन्यसेत् ॥ ७३ ॥
खधातुं लोचनाग्रैश्च परिपूर्णं विभावयेत् ।
संहृत्य रश्मिपिण्डेन आरम्भस्य निपातने ॥ ७४ ॥
रोमकूपाग्रविवरैर्बुद्धमेघान् स्फरेद्व्रती ।
अभिषेकं तदा तस्य बुद्धमेघा ददन्ति हि ॥
अनेन वज्रसमयः श्रीमान् भवति तत्क्षणात् ॥ ७५ ॥

यही कहा है। जगद्विजयशान्तिवज्र नामक समाधि यही है। आकाश धातु में स्थित अतिशान्त मण्डल का ध्यान करना चाहिए, उसमें वैरोचन जो विम्ब के रूप में है उनका ध्यान करते हुए उन्हें हृदय में धारण करना चाहिए। समग्र आकाश धातु को लोचनाओं के द्वारा परिपूर्ण है ऐसी भावना करनी चाहिए। समग्र रश्मिपिण्डों से उन्हें अपनी ओर आकर्षिक करके क्रमशः रोमकूपों के छिद्रों में बुद्ध के मण्डल को प्रकाशित करे। उसके बाद बुद्धमेघ उन्हें अभिषेक प्रदान करते हैं। इस वज्रसमय के द्वारा वह योगी तत्काल ही श्रीमान् हो जाता है।

बुद्धसमयमेघव्यूहो नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेन्माहेन्द्रमण्डलं शुभम् ।
बिम्बं धर्मपरं ध्यात्वा हृदये वाऽथ विन्यसेत् ॥ ७६ ॥

यही बुद्धसमयमेघव्यूह नामक समाधि है। आकाश क्षेत्र में फैले हुए माहेन्द्र मण्डल का ध्यान करें और धर्मरूप विम्ब को हृदय में धारण करना चाहिए या उसे वहीं समाविष्ट करें।

खधातुभवनं रम्यं पाण्डराख्यैः प्रपूरयेत् ।
संहरेद्रश्मिपिण्डेन रत्नचिन्तामणिप्रभम् ॥ ७७ ॥
कायवाक्चित्तनिलयेऽर्थिने तच्च निवेदयेत् ।
रोमकूपाग्रविवरे रत्नमेघान् स्फरेद्व्रती ॥ ७८ ॥
भावयेद्धर्ममेघान्वै अभिषेकं समादिशेत् ।
अनेन ध्यानवज्रेण दुष्पूरोऽपि प्रपूर्यते ।
स भवेच्चिन्तामणिः श्रीमान् दानवज्रप्रसाधकः ॥ ७९ ॥

खधातुरूप रमणीय भवन को पाण्डरा आदि देवियों से प्रपूरित करना चाहिए। और रश्मिपिण्डों के द्वारा जो चिन्तामणि जैसे रत्नों के स्वरूप के हैं – जो काय, वाक् और चित्त को चाहते हैं उन्हें अर्पित करना चाहिए। उसके बाद रोमकूपों के अग्रस्थानों पर रत्नमेघों को स्थापित या भावित करना चाहिए। धर्ममेघों के द्वारा अभिषेक ग्रहण करना चाहिए। इस ध्यानवज्र के द्वारा असम्भव भी संभव हो जाता है। वह चिन्तामणि सदृश एवं दानवज्र प्रसाधक श्रीमान् हो जाता है।

धर्मसमयमेघव्यूहो नाम समाधिः॥
खधातुमध्यगं चिन्तेद्वज्रचन्द्रार्कमण्डलम् ।
बिम्बंखवज्रधर्माग्रमर्थिनो हृदि विन्यसेत् ॥ ८० ॥
बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च पूरिपूर्णं खमण्डलम् ।
पञ्चरश्मिप्रयोगेण तेजस्तत्र निपातयेत् ॥ ८१ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव सर्वबुद्धमनोज्ञकः ।
मञ्जुश्रीतुल्यसङ्काशः स भवेत्परकर्मकृत् ॥ ८२ ॥
ददाति च प्रहृष्टात्मा अभिषेकं महोत्सुकः ।
वशमानयति जनान् सर्वान् दर्शनेनैव चोदितान् ॥ ८३ ॥

यही धर्म समयमेघ व्यूह नामक समाधि है। वज्र, चन्द्र एवं सूर्य मण्डल, जो आकाशधातु में व्याप्त है उसका चिन्तन करना चाहिए। वज्रधर्माग्र अर्थी के हृदय में उस विम्ब को स्थापित करें। बुद्ध – बोधिसत्त्वों से यह सारा आकाशमण्डल व्याप्त है ऐसी भावना के साथ पञ्चरश्मियों के द्वारा वहाँ पर तेज का आधान करना चाहिए। उसी समय वह योगी सभी बुद्धों का प्रिय, मञ्जुश्री के समान शक्ति

सम्पन्न और दूसरों के काम करने में समर्थ हो जाता है। खुश होकर उत्सुकता पूर्वक सभी बुद्ध-तथागत उसे अभिषिक्त करते हैं और खुद वह दृष्टिमात्र से सत्त्वों को अपने वश में करने में समर्थ हो जाता है।

रत्नसमयमेघव्यूहो नाम समाधिः ॥

खवज्रं राक्षसैः क्रूरैश्चण्डैः क्रोधसुदारुणैः ।
श्रृगालैर्विविधैः काकैर्गृध्रैः श्वानैः प्रभावयेत् ॥ ८४ ॥
आग्नेयमण्डलस्थं तु भावयेद् रिपवः सदा ।
अपकारी सर्वबुद्धानां ध्यात्वा योगं प्रयोजयेत् ॥ ८५ ॥
अन्त्रमज्जारुधिराद्यं सर्वाकृष्टं प्रभावयेत् ।
नानाप्रहरणधरैराक्रान्तो म्रियते रिपुः ॥ ८६ ॥
बुद्धो वज्रधरो वापि यद्यनेन प्रभाव्यते ।
पक्षाभ्यन्तरपूर्णेन म्रियते नात्र संशयः ॥ ८७ ॥

रत्न समय मेघव्यूह नामक समाधि यही है। आकाशवज्र में स्थित क्रोध से युक्त, क्रूर, तीव्र, राक्षस, विविध श्रृगालों और काक, गिद्ध और कुत्तों के भावों से वहाँ पर अवस्थित वज्री का ध्यान करें। आग्नेय मण्डल में स्थित रिपुओं का ध्यान करें, वह अपकारी योगी सभी बुद्धों का ध्यान करके योग में अवस्थित होना चाहिए। अँतडी, मज्जा, रक्त से युक्त मण्डल का ध्यान करके इस प्रकार किए जाने वाले प्रहार से शत्रु मर जाता है। बुद्ध और वज्रधर भी इससे भावित होते हैं। एक पक्ष तक पूर्ण रूप से ध्यान करने से शत्रु पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है।

वज्रमेघसमयव्यूहो नाम समाधिः ॥

त्रिमुखं वैरोचनं चिन्तच्छरत्काण्डसमप्रभम् ।
सितकृष्णमहारक्तं जटामुकुटमण्डितम् ॥ ८८ ॥

यही वज्र मेघसमयव्यूह नामक समाधि है। रत्नकाण्ड से समुत्पन्न, तीन मुखों से सुशोभित वैरोचन तथागत का ध्यान करें। वे सफेद, काला और अति लाल रंगों से भरित जटामण्डल धारण किए हुए हैं।

त्रिमुखं वज्रिणं चिन्तेत्कृष्णरक्तसिताननम् ।
जटामुकुटधरं दीप्तं लोकधातुसमाकुलम् ॥ ८९ ॥

लोक धातुओं से व्याप्त, अति चमकीला जटामुकुट धारण किए हुए, काला, लाल और सफेद मुखमण्डलों से युक्त त्रिमुख वज्री का ध्यान करना चाहिए।

त्रिमुखं रागिणं चिन्तेद्रक्तकृष्णसिताननम् ।
जटामुकुटसंभोगं भावयन् सिध्यते ध्रुवम् ॥ ९० ॥

रक्त, कृष्ण और सफेद तीन मुखों से युक्त, जटामुकुट सुशोभित, रागी का ध्यान करने से तत्काल ही योगी सिद्ध हो जाता है।

चक्रं वज्रं महापद्मं सव्यपाणौ विभावयेत् ।
षड्भुजान् भावयेद्वज्रान्नानाप्रहरणधरान् शुभान् ॥ ९१ ॥

चक्र, वज्र, महापद्मों को अपने बायें हाथ में धारण करने वाले तथागत का ध्यान करना चाहिए। साथ ही ६ हाथों से वज्रधारण करने वाले, अनेक अस्त्रों से सुसज्जित शुभ स्वरूप का ध्यान करना चाहिए।

लोचनां त्रिमुखां चिन्तेत् सर्वसत्त्वहितैषिणीम् ।
सितकृष्णमहारक्तां चारुरूपां विभावयेत् ॥ ९२ ॥

सफेद, कृष्ण और रक्त तीन मुखों से युक्त, अति सुन्दरी सर्वसत्त्वों की हितैषिणी, लोचना का ध्यान करें।

खवज्रनेत्रीं महारात्रीं त्रिमुखां भावयेत्सदा ।
कृष्णरक्तसिताकारां चारुरूपां विभावयेत् ॥ ९३ ॥

आकाश वज्र-नेत्र वाली, तीन मुखों से सुशोभित, कृष्ण, रक्त और सफेद आकारवाली, सुन्दर रूपवाली महारानी का ध्यान करें।

वाग्वज्रीं च महाराज्ञीं त्रिमुखां भावयेत्सदा ।
रक्तसितकृष्णाकारां चारुवर्णां विभावयेत् ॥ ९४ ॥

तीन मुखों से युक्त रक्त, कृष्ण और श्वेतवर्णयुक्त, सुन्दरी, महारानी वाग्वज्री का ध्यान करना चाहिए।

वज्रोत्पलधरां विद्यां त्रिमुखां कान्तिसुप्रभाम् ।
पीतकृष्णसिताकारां भावयन् ज्ञानमाप्नुयात् ॥ ९५ ॥

वज्र और उत्पल धारण करने वाली, तीन मुखों वाली, सुन्दर कान्ति से युक्त, पीत, कृष्ण और सफेद वर्णों वाली विद्या का ध्यान करके ज्ञान पाया जाता है।

यमान्तकं महाक्रोधं त्रिमुखं क्रुद्धसुप्रभम् ।
भयस्यापि भयं तीक्ष्णं कृष्णवर्णं विभावयेत् ॥ ९६ ॥

महाक्रोध स्वरूप, यमान्तक, तीन मुख वाले, क्रुद्ध स्वरूप युक्त, भय के भी भय, जो कृष्ण वर्ण युक्त हैं उन्हें तीव्ररूप में ध्यान करना चाहिए।

अपराजितं महाक्रोधमट्टाट्टहासनादिनम् ।
त्रिमुखं स्फुलिङ्गगहनं विस्फुरन्तं विचिन्तयेत् ॥ ९७ ॥

महाक्रोधरूपी अट्टहास से गुञ्जित, अपराजित, स्फुलिङ्गों से समृद्ध, त्रिमुखवाले यमान्तक का ध्यान करना चाहिए।

हयग्रीवं महाक्रोधं कल्पोद्दाहमिवोद्भवम् ।
त्रिमुखं दुष्टपदाक्रान्तं भावयेद्योगतः सदा ॥ ९८ ॥

कल्पों को ही दहन करने वाले के समान तेज युक्त, महाक्रोधरूप, त्रिमुखों से युक्त, दुष्टपदाक्रान्त भगवान् हयग्रीव का योग के द्वारा ध्यान करना चाहिए।

वज्रामृतं महाक्रोधं स्फुलिङ्गाकुलचेतसम् ।
दीप्तवज्रनिभं क्रूरं भयस्यापि भयप्रदम् ॥ ९९ ॥

महाक्रोधरूप, वज्रामृतस्वरूप, विस्फुलिङ्गों से युक्त चित्तवान् तीव्रज्वालायुक्त वज्र से सुशोभित, भय को भी भयदायक क्रूर यमान्तक का ध्यान करना चाहिए।

टक्किराजं महाक्रोधं त्रिमुखं त्रिभयप्रदम् ।
चतुर्भुजं भयस्याग्रं टक्किराजं प्रभावयेत्॥ १०० ॥

तीन प्रकार के भयदाता, महाक्रोधरूप, तीनमुखवाले, टक्किराज, चतुर्भुज, भय के अग्रस्वरूप टक्किराज का ध्यान करें।

महाबलं महावज्रं त्रैलोक्यार्थार्थधारिणम् ।
नाशकं सर्वदुष्टानां त्रिमुखं भावयेत्सदा ॥ १०१ ॥

त्रैलोक्य का ही अर्थ = सम्पत्ति धारण करने वाले सर्वदुष्टों के नाशक, तीन मुखवाले, महावज्ररूप महाबल का सदा ध्यान करना चाहिए।

नीलदण्डं महाक्रोधं त्रैलोक्यस्य भयप्रदम् ।
त्रिमुखं त्रिवज्रसम्भूतं तीक्ष्णज्वालं प्रभावयेत् ॥ १०२ ॥

महाक्रोधरूप, नीलदण्ड धारक, त्रैलोक्य को भयभीत करने वाले, त्रिवज्रसम्भूत, त्रिमुखी तीक्ष्ण ज्वाला का ध्यान करना चाहिए।

वज्राचलं महाक्रोधं केकरं वज्रसंभवम् ।
खड्गपाशधरं सौम्यं त्रिमुखं भावयेद्व्रती॥ १०३ ॥

वज्र जैसा अचल, महाक्रोधरूप, वज्रसम्भव, खड्ग एवं पाशधारक, त्रिमुखी सौम्य स्वभावयुक्त वज्राचल का योगी को ध्यान करना चाहिए।

एकाक्षरं महोष्णीषं विस्फुरन्तं समन्ततः ।
त्रिमुखं वज्रिणं दीप्तं भावयेद् ध्यानमण्डले ॥ १०४ ॥

महोष्णीष (पगडी) से युक्त चारों ओर तेजप्रकाशपुञ्ज से घिरे हुए, दीप्तस्वरूप, तीनमुखवाले वज्रधारी का ध्यानमण्डल में भावना करनी चाहिए।

सुम्भं ज्ञानाग्रधरं क्रूरं भयोदधिसमप्रभम् ।
त्रिमुखं ज्वालार्चिवपुषं भावयेद् ध्यानसुप्रभम् ॥ १०५ ॥

अग्रज्ञान के धारक, भय के समुद्र जैसे ज्वालामय शरीर युक्त, अत्यन्त उज्जवल, त्रिमुखी सुम्भ का ध्यान करना चाहिए।

तेजोराशिजयोष्णीषं ये चान्ये मन्त्रवज्रिणः ।
एभिः समयसम्भोगैर्भावनीयाः प्रति प्रति॥ १०६ ॥

तेजराशि रूप बड़े पगडी से ढके हुए और जो भी मन्त्र वज्री हैं इन सभी को समय सम्भोगरूप भावना से ध्यान करना चाहिए।

अमितानि समाधीनि मन्त्राणां समुदाहृताः ।
एकैकस्य तु क्रोधस्य बहुत्वे तु विशिष्यते ॥ १०७ ॥

अनन्त समाधियाँ मन्त्रों के कहे गए हैं। और एक एक क्रोधरूप देवता के भी अनेक भेद रूप समाधि और उनके देवता भी भिन्न होने से उन सभी में विशिष्टता देखी जाती है।

खधातुमध्यगं चिन्तेत् स्वच्छमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा वैरोचनं प्रभावयेत् ॥ १०८ ॥

आकाश धातु में अवस्थित उत्तम, उत्तम स्वच्छमण्डल में बुद्ध के बिम्ब का ध्यान करके भगवान् वैरोचन का ध्यान करें।

स्वच्छं चन्द्रनिभं शान्तं नानारश्मिसमप्रभम् ।
आदर्शमिव संभृतं त्रैधातुकस्य मण्डलम् ॥ १०९ ॥

अनेक रश्मियों से देदीप्यमान, अति स्वच्छ चन्द्ररश्मियों के तरह, अति शान्त, आदर्श ज्ञान के तरह ही त्रैधातुक मण्डल है।

सर्वालङ्काररचितं ध्यात्वा बोधिं स पश्यति।
अनेन बुद्धमाहात्म्यं सर्वसत्त्ववशङ्करम् ॥ ११० ॥
प्राप्यते जन्मनीहैव ध्यानवज्रप्रभावनैः।
वैरोचनसमयसंभवचारुवज्रो नाम समाधिः॥ १११ ॥

ऐसे सर्वअलंकारों से युक्त मण्डल का ध्यान करने पर वह योगी बुद्ध तत्त्व का साक्षात्कार करने में समर्थ हो जाता है। इसी बुद्धमहात्म्य के द्वारा सभी प्राणियों को वह वश में कर सकता है। ध्यान वज्रों के महाप्रभावों के कारण इसी जन्म में वह बुद्धत्व लाभ कर सकता है। वैरोचन समय संभव चारुवज्र नामक समाधि यही है।

खधातुमध्यगं चिन्तेद्वज्रमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं विभावित्वा वज्रसत्त्वं विभावयेत् ॥ ११२ ॥
स्वच्छकायनिभं क्रुद्धं नानाज्वालसमप्रभम् ।
सर्वाकारवरोपेतं सर्वालङ्कारभूषितम् ॥ ११३ ॥
ध्यात्वा ज्ञानपदं शान्तं लघुवज्रत्वमाप्नुयात् ।

अनेन वज्रमाहात्म्यं सर्वसत्त्ववशंकरम् ॥ ११४ ॥
प्राप्यते जन्मनीहैव ध्यानवज्रप्रयोगतः ।
सर्ववज्रसमयसंभवचारुवज्रो नाम समाधिः ॥ ११५ ॥

आकाश धातु के बीच में उत्तम वज्रमण्डल की भावना करनी चाहिए, उसके बाद बुद्धबिम्ब का ध्यान करके वज्रसत्त्व का ध्यान करे। अति स्वच्छ शरीर धारी, अनेक ज्वालाओं से विभूषित, अनन्त आकारों से युक्त, सर्व अलंकारों से अलंकृत, क्रुद्ध, किन्तु अति शान्त ज्ञान पद का ध्यान करने के बाद शीघ्रता से वज्रत्व प्राप्त करता है। यही वज्रमहात्म्य है जिससे सभी प्राणी वश में होते हैं। ध्यान वज्र के प्रयोग से इसी जन्म में सर्ववज्र समय संभव चारु वज्र नामक समाधि प्राप्त होता है ।

खवज्रमध्यगं चिन्तेद्धर्ममण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा धर्मसत्त्वं विचिन्तयेत् ॥ ११६ ॥
स्वच्छकायधरं सौम्यं सर्वालङ्कारभूषितम् ।
रश्मिमेघमहावज्रं विस्फुरन्तं प्रभावयेत् ॥ ११७ ॥
अनेन धर्ममाहात्म्यं त्रिकायाभेद्यसम्भवम् ।
प्राप्यते जन्मनीहैव ज्ञानोदधिविभूषणम् ॥ ११८ ॥

आकाश वज्र में उत्तम धर्ममण्डल का चिन्तन करें। उसी में बुद्धबिम्ब का ध्यान करके धर्म सत्त्वों की भावना करनी चाहिए। सुन्दर शरीर धारी, सर्व अलंकारों से विभूषित, अति सौम्य रश्मि मेघ महावज्र स्वरूप विस्फुलिङ्ग की भावना करनी चाहिए। इसी से धर्म महात्म्य, जो त्रिकाय-अभेद्य सम्भव की प्राप्ति होती है इसी जन्म में जो ज्ञान रूपी समुद्र से विभूषित हैं।

धर्मसत्त्वसमयसंभवचारुवज्रो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेच्चक्रमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा लोचनाग्रीं विभावयेत् ॥ ११९ ॥
चारुवक्त्रां विशालाक्षीं नानाभरणभूषिताम् ।
सर्वलक्षणसम्पूर्णां त्रिकायाग्रधारिणीम् ॥ १२० ॥
पाणौ प्रभावयेच्चक्रं त्रैधातुकवशङ्करम् ।
सर्वसिद्धिकरं ज्ञानं चक्रं चिन्तामणिप्रदम् ॥ १२१ ॥

धर्म सत्त्व समय संभव चारु वज्र नामक यही समाधि है। आकाश के मध्य में अवस्थित उत्तम चक्रमण्डल का चिन्तन करना चाहिए। उसके बाद बुद्धबिम्ब का ध्यान करके फिर लोचना का ध्यान करना चाहिए। सुन्दर मुखमण्डलवाली, विशाल नेत्रवाली, अनेक आभूषणों से सुशोभित, समग्र लक्षणों से युक्त, त्रिकाय के अग्र में अवस्थित लोचना के ध्यान के बाद – त्रैधातुक को ही वश में करने वाले चक्र का हाथ में ध्यान करना चाहिये। वह समग्र सिद्धि का कर्ता है और वह ज्ञान रूपी चक्र चिन्तामणि को भी देने वाला है।

लोचनासमयाज्ञानहस्ताग्रवती नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेच्चन्द्रमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा खवज्रांग्रीं प्रभावयेत् ॥ १२२ ॥
चारुवक्त्रां विशालाक्षीं नीलोत्पलसमप्रभाम् ।
सर्वलक्षणसम्पूर्णां खमायाग्रीं विभावयेत् ॥ १२३ ॥
पाणौ नीलोत्पलं चक्रं त्रैधातुकनमस्कृतम् ।
बुद्धबोधिकरं दिव्यं रहस्यं सिद्धिवज्रिणाम् ॥ १२४ ॥

यही लोचना समाज्ञान हस्ताग्रवती नामक समाधि है। आकाश वज्र में स्थित उत्तम चन्द्रमण्डल का चिन्तन करना चाहिए। बुद्धबिम्ब की भावना करके आकाश वज्रांगी का ध्यान करें। सुन्दर मुखमण्डलवाली, विशाल नेत्रवाली, नील कमल के समान प्रभावाली, समग्र लक्षणों से युक्त आकाशमायागी की भावना करें। सिद्धिवज्रियों के हाथ में नील कमल, चक्र जो सर्वलोकों से नमस्कृत है, जो बुद्धबोधिप्रदाता है वही दिव्य एवं रहस्यपूर्ण है।

खभानुरश्मिमेघवज्राह्लादनवती नाम समाधिः ।
खवज्रमध्यगं चिन्तेद्धर्ममण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा धर्मवज्रीं प्रभावयेत् ॥ १२५ ॥

यही खभानुरश्मिमेघवज्राल्हादनवती नामक समाधि है। आकाश वज्र के मध्य में उत्तम धर्ममण्डल का चिन्तन करना चाहिए। उसके बाद बुद्धबिम्ब की भावना के बाद धर्मवज्री का ध्यान करें।

चारुवक्त्रां विशालाक्षीं पद्मरागेन्द्रसन्निभाम् ।
मायाजालाग्रसंभूतां रागरक्तवरप्रियाम् ॥ १२६ ॥

सुन्दर मुखमण्डलवाली, विशाल नेत्रयुक्त, कमल के समान स्वरूप धारण करने वाली, मायाजालाग्रसंभूत, रागरक्तप्रिय लगने वाली, समग्र लक्षणों से पूर्ण, समग्र अलंकारों से युक्त देवी का ध्यान करना चाहिए।

सर्वलक्षणसम्पूर्णां सर्वालङ्कारभूषिताम् ।
पाणौ रक्तोत्पलं दिव्यं सर्वबुद्धप्रभावितम् ॥ १२७ ॥

हाथ में रक्त कमल धारण करने वाले, समग्र बुद्धों से प्रभावित धर्मज्ञान के खान, समयग्री का गुह्य एवं द्रव्य ज्ञान वही है।

धर्मज्ञानाकरं दिव्यं गुह्यं समयवज्रिणाम् ।
धर्मसमयतत्त्वाभिसम्बोधिदर्शनवज्रो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सिद्धिमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा ताराग्रीं तु प्रभावयेत् ॥ १२८ ॥

यही धर्म मय तत्त्वाभिसम्बोधि दर्शन वज्र नामक समाधि है । आकाश मण्डल में उत्तम सिद्धिमण्ड की भावना करने के बाद बुद्धबिम्ब का ध्यान करना चाहिए फिर अग्रवती तारा की भावना करें।

चारुवक्त्रां विशालाक्षीं नानाभरणभूषिताम् ।
पीतवर्णनिभां ध्यात्वा स्त्रीशाठ्यमदनोत्सुकाम् ॥ १२९ ॥
पाणौ प्रभावयेत् व्यक्तमुत्पलं पीतसन्निभम् ।
वज्रसमाधिसम्भूतं सर्वसत्त्वनमस्कृतम् ॥ १३० ॥

सुन्दरमुखमण्डलयुक्त, विशाल नेत्रों से सुसज्जित, अनेक-आभूषणों से

सुसज्जित, पीतवर्णयुक्त, स्त्रीशठतारूप काम में उत्सुक, देवी का ध्यान करने के बाद हाथ में फुले हुए कमल जो पीत वर्ण का हो, और वज्र समाधि से समुत्पन्न, सभी प्राणियों से नमस्कृत भगवती तारा का ध्यान करें।

समयताराग्रवती नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा यमान्तकाग्रं विभावयेत् ॥ १३१ ॥
स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं संक्रुद्धं भवमण्डलम् ॥
रक्ताक्षं दंष्ट्राविकटं खड्गपाणिं विभावयेत् ॥ १३२ ॥
मुकुटे वैरोचनपदं ध्यात्वा तुष्यन्ति वज्रिणः ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो ज्ञानवज्रिणाम् ॥ १३३ ॥

यही समय ताराग्रवती नामक समाधि है। आकाशवज्र के मध्य में अवस्थित उत्तम सूर्यमण्डल का ध्यान करें और वहीं पर बुद्धबिम्ब की भावना करने के बाद यमान्तक-अग्रस्वरूप का ध्यान करना चाहिए। स्फुलिङ्गों से दैदीप्यमान संक्रुद्ध, भावमण्डल, लाल आँखों से युक्त, बड़े दाँतों से युक्त, भगवान् खड्गपाणि का चिन्तन करें। मुकुट में भगवान् वैरोचन का ध्यान करके वज्री सुख होते हैं। यही सभी ज्ञानवज्रों का, जो क्रोधरूप हैं, उनका समय-सिद्धान्त या अवस्था है।

यमान्तकस्फुरणावभासव्यूहो नाम समाधिः॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वाऽपराजिताख्यं प्रभावयेत् ॥ १३४ ॥

यही यमान्तक स्फुरण खमासव्यूह नामक समाधि है। आकाश मण्डल में स्थित उत्तम सूर्य मण्डल में ध्यान करना चाहिए। और बुद्धमण्डल की भावना करके अपराजिता का भी ध्यान करें।

स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं सर्प मण्डितमेखलम् ।
विकरालं विकटवक्त्रं सितवर्णं प्रभावयेत् ॥ १३५ ॥
मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्यन्ति वज्रिणः।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो ज्ञानवज्रिणाम् ॥ १३६ ॥
अपराजितवज्रव्यूहो नाम समाधिः॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।

अग्नि ज्वालाओं जैसे तेज से उद्दीप्त, सर्पों से सुसज्जित मेखला धारण करने वाले, विकराल, विकरालवक्त्रवाले, सफेद स्वरूप युक्त भगवान् का ध्यान करे। मुकुट में अक्षोभ्य भगवान् का ध्यान करके वज्रधारी खुश होते हैं। यही सभी वज्रधारिओं का सिद्धान्त समय है।

बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा हयग्रीवं प्रभावयेत् ॥ १३७ ॥
स्फुलिङ्गगहनं क्रुद्धं विस्फुरन्तं समन्ततः ।
सर्वदुष्टपदाक्रान्तं रक्तवर्णं विभावयेत् ॥ १३८ ॥
मुकुटेऽमितसम्बुद्धं ध्यात्वा तुष्यन्ति वज्रिणः ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो ज्ञानवज्रिणाम् ॥ १३९ ॥

यही अपराजित वज्रव्यूह नामक समाधि है। आकाश मण्डल में उत्तम सूर्यमण्डलात्मक तेज का ध्यान करना चाहिए। उसी पर बुद्धबिम्ब का ध्यान करके भगवान् हयग्रीव का ध्यान करे। स्फुलिङ्ग दहन जैसे तेज से युक्त, चारों ओर तेज प्रकाश व्याप्त, सभी दुष्टों का पैरों तले दबाने वाले रक्तवर्णयुक्त तथागत का ध्यान करे। मुकुट में अमिताभ बुद्ध का ध्यान करने से सभी वज्री संतुष्ट होते हैं। यही सर्वक्रोध ज्ञानवज्रों का समय है।

हयग्रीवोत्पत्ति -सम्भवव्यूहो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा वज्रामृतं प्रभावयेत् ॥ १४० ॥
स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं वज्रमेघसमाकुलम् ।
क्रुद्धं सरोषणं कृष्णं तीक्ष्णदंष्ट्रं प्रभावयेत् ॥ १४१ ॥

मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्यति क्रोधधृक् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १४२ ॥

यही हयग्रीवोत्पत्ति सम्भवव्यूह नामक समाधि है। आकाश मण्डल में व्याप्त उत्तम सूर्य तेज का ध्यान करें। उसी पर बुद्धबिम्ब का ध्यान करके वज्रामृत की भावना करनी चाहिए। स्फुलिङ्ग दहन स्वभाव युक्त, दीप्त, वज्रमेघों से व्याप्त, अतिक्रुद्ध, रोष से युक्त, बड़े दाँतों द्रँस्ट्राओं से युक्त, कृष्ण स्वरूप वज्री का ध्यान करे। मुकुट में अक्षोभ्य समय का ध्यान करने से क्रोधकृत नामक वज्री संतुष्ट होते हैं। यही सर्वक्रोध वज्रों का दुरतिक्रम समय कहलाता है।

अमृतसमयसम्भववज्रो नाम समाधिः ॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत्सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं विभावित्वा टक्किसत्त्वं प्रभावयेत् ॥ १४३ ॥
क्रूरं विकृतकेशाग्रं भयस्यापि भयङ्करम् ।
सर्वालङ्कारसम्पूर्णं भावयेद्वज्रसुप्रभम् ॥ १४४ ॥

यही अमृत समय सम्भव वज्र नामक समाधि है। आकाशमण्डल में स्थित उत्तमसूर्य मण्डल में भावना करनी चाहिए। उस पर फिर बुद्धबिम्ब का चिन्तन करके भगवान् टक्किराज का ध्यान करें। अति क्रूर, विकृत केशाग्र भागों से युक्त, भय का भी भय देने वाले, समग्र अलंकारों से युक्त, ऐसे वज्र संप्रभु का ध्यान करें।

मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः॥ १४५ ॥

मुकुट में अक्षोभ्य समय का ध्यान करके, जो तुष्टिदाता हैं, योगी शीघ्र सिद्धि को पा जाता है। यही सर्वक्रोधात्मक वज्रों का समय है जो दुरतिक्रमात्मक है।

ध्यानवज्रसम्बोधिरतिर्नाम समाधिः॥
खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा महाबलं प्रभावयेत् ॥ १४६ ॥
स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं त्रिवज्रालयमण्डलम् ।
क्रूरं पाशधरं क्रुद्धं भावयेद्बलवज्रिणम् ॥ १४७ ॥

मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १४८ ॥

यही ध्यान वज्रसम्बोधिरति नामक समाधि है। आकाश धातु में स्थित उत्तम सूर्य मण्डल का ध्यान करे। उसी में तथागत बिम्ब का ध्यान करने के बाद महाबल की भावना करनी चाहिए। स्फुलिङ्ग जैसे तेज युक्त, त्रिवज्रालयमण्डल, अतिक्रूर, पाशधर, क्रुद्ध वज्री का ध्यान करे। मुकुट में अक्षोभ्य समय का ध्यान करके, जो तुष्टिदायक हैं सिद्धि प्राप्त होगा। यही सर्वक्रोध का दुरतिक्रम समय कहा गया है।

त्रिबलवज्रो नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत् सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा नीलवज्रं प्रभावयेत् ॥ १४९ ॥
कृष्णारूपधरं तीक्ष्णं कृष्णोदधिविवर्धनम् ।
स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं भावयेद्दण्डवज्रिणम् ॥ १५० ॥
मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १५१ ॥

यही त्रिबलवज्र नामक समाधि है। खवज्र में स्थित उत्तम सूर्य मण्डल का ध्यान करने के बाद बुद्धबिम्ब की भावना करके नीलवज्र का ध्यान करें। कृष्ण रूपधर, तीक्ष्ण, काले समुद्र को बढ़ावा देने के समान वर्ण वाले, स्फुलिङ्ग तेजो से युक्त वज्री का ध्यान करें। मुकुट में अक्षोभ्य समय का ध्यान करके तुष्टि प्राप्त होती है। यही सर्वक्रोधों का दुरतिक्रम समय है।

वज्रदण्डसमयाग्रवती नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत्सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा अचलाग्रं विभावयेत् ॥ १५२ ॥
केकरं विकृतं क्रुद्धं पाशखड्गधराकुलम् ।
स्फुलिङ्गगहनं दीप्तं भावयेदचलवज्रिणम् ॥ १५३ ॥
मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १५४ ॥

यही वज्रदण्डसमयाग्रवती नामक समाधि है। आकाशवज्र में अवस्थित उत्तमसूर्य मण्डल का चिन्तन करके बुद्धबिम्ब का ध्यान करके अचलाग्र का

ध्यान करें। अतिविकृत, क्रुद्ध, पाशा, खड्ग धारक, स्फुलिङ्गों के तेज जैसा सुदीप्त स्वरूप, ऐसे केकर अचल वज्री का ध्यान करना चाहिए। मुकुट में दृष्टि प्रदाता अक्षोभ्य वज्र का ध्यान करके सर्वसिद्धि प्राप्त होती है। यही सर्वक्रोधात्मक वज्री का दुरतिक्रम समय है।

खवज्रधातुसमयपदाक्रान्तो नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत्सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं प्रभावित्वा विद्याचक्रं विभावयेत् ॥ १५५ ॥
सर्वलक्षणसम्पूर्णं चक्रज्वालापरिवृतम् ।
उष्णीषचक्रसमयं विस्फुरन्तं प्रभावयेत् ॥ १५६ ॥
मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्वात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १५७ ॥

यही खवज्रधातु समय पदाक्रान्त नामक समाधि है। आकाश मण्डल में अवस्थित उत्तम सूर्य मण्डल का ध्यान करके बुद्धबिम्ब की भावना करने के बाद फिर विद्याचक्र का ध्यान करें। समग्रलक्षणों से युक्त, चक्रज्वालाओं से परिव्याप्त, विस्फुरित, उष्णीय समय चक्र का ध्यान करें। तुष्टि प्रदाता अक्षोभ्य समय का मुकुट में ध्यान करना चाहिए। यही सर्वक्रोधात्मक दुरतिक्रम समय कहलाता है।

उष्णीषविद्याचलचक्रो नाम समाधिः ॥

खवज्रमध्यगं चिन्तेत्सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धबिम्बं विभावित्वा वज्रसुम्भं प्रभावयेत् ॥ १५८ ॥

यही उष्णीय विद्या चल चक्र नामक समाधि है। आकाश मण्डल में परिव्याप्त उत्तम सूर्यमण्डल का ध्यान करने के बाद बुद्धबिम्ब का ध्यान करें, फिर वज्रसुम्भकी भावना करनी चाहिए ।

तीक्ष्णज्वालार्चिर्वपुषं स्फुरन्तं मेघवज्रिणम् ।
वज्रहस्तं महाज्वालं भावयन् सिद्धिमाप्नुयात् ॥ १५९ ॥
मुकुटेऽक्षोभ्यसमयं ध्यात्वा तुष्टिप्रवर्धनम् ।
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ॥ १६० ॥

तीक्ष्ण ज्वाला के तेजों से पूरित शरीर, चारों ओर फैली हुए तेज राशि, वज्रहस्त, महाज्वालारूप मेघवज्री का ध्यान करके सिद्धि होती है। मुकुट में अक्षोभ्य समय को ध्यान करने से संतुष्टि प्राप्त होती है। यही सर्वक्रोधों का दुरतिक्रम समय कहलाता है।

वज्रसमयशुम्भवज्रो नाम समाधिः ॥

निरोधक्रोधचक्रेण बुद्धचक्रनिषेविणा ।

समाधिवज्रज्ञानानि सिध्यन्ते वज्रमण्डलात् ॥ १६१ ॥

यही वज्रसमय सुम्भ नामक समाधि है। निरोध क्रोधचक्र के द्वारा और बुद्ध चक्र के सेवन से, वज्र मण्डल में समाधिवज्र ज्ञान सिद्ध होते हैं।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे समयव्यूहतत्त्वार्थभावनासम्बोधिपटलस्त्रयोदशोऽध्यायः ।

त्रयोदश पटल पूर्ण हुआ।

चतुर्दशपटलः

अथ भगवान् सर्वतथागतसमयाधिपतिर्महावज्रधरः शान्तिसमयाग्रंनाम समाधिं समापद्येमां सर्वतथागतभार्यां कायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं रु रु स्फुरू ज्वल तिष्ठ सिद्धलोचने सर्वार्थसाधनि स्वाहा ॥

अथास्यां गीतमात्रायां सर्वसम्पन्मनीषिणः ।
तुष्टा हर्षं समापेदे बुद्धवज्रमनुस्मरन् ॥ १ ॥
बुद्धानां शान्तिजननी सर्वकर्मप्रसाधिनी ।
मृतसञ्जीवनी प्रोक्ता वज्रसमयचादनी ॥ २ ॥

अब, भगवान् सर्वतथागत समयाधिपति महावज्रधर ने शान्तिसमयाग्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इस सर्वतथागतभार्या को काय, वाक् और चित्त वज्रों से (बाहर) उत्पन्न किया। यह भार्या है – ॐ रु रु स्फुरु ज्वल तिष्ठ सिद्धलोचने सर्वार्थसाधिनी स्वाहा। इस मन्त्ररूप भार्या के गान मात्र से सभी विशिष्ट मनीषी गण अत्यन्त खुश हुए और बुद्धवज्र का स्मरण करते हुए हर्ष को प्राप्त हुए। सभी तथागतों को शान्ति देने वाली, सभी कर्मों की प्रेरिका, मृतकों को जीवन देने वाली यही वज्र समय प्रेरिका शक्ति कही गई है।

[यहाँ अक्षोभ्य आदि सर्वतथागत हैं। समय देवियाँ हैं। उनका अधिपति वज्रधर हैं। शान्ति ज्वरा आदि का शमन है। भार्या = धारणी है। वज्रसमय = वैरोचन हैं।]

इत्याह च ॥

अथ भगवांस्त्रिकायसमयक्रोधवज्रः भावाभावसमयवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां सर्ववज्रधराग्रमहिर्षी स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं शङ्करे शान्तिकरे घुट्ट घुट्ट घुट्टनि घातय घातय घुट्टनि स्वाहा॥

अथास्यां गीतमात्रायां त्रिवज्राभेद्यवज्रिणः ।
उत्फुल्लचारुनयना वज्रचित्तमनुस्मरन् ॥ ३ ॥
रक्षावज्रप्रयोगेषु नित्यं कर्मप्रसाधनी ।
महावज्रभयार्तानां नित्यं बलकरी स्मृता ॥ ४ ॥

इसके बाद त्रिकाय समय क्रोध वज्र भगवान् ने भावाभावसमय वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके यह सर्ववज्रधराग्रमहिषी को अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से प्रकट किया। अब इसके गान मात्र से त्रिवज्र-अभेद्य वज्रिओं को प्रसन्नता हुई और वे सब अपने बड़े बड़े नेत्र युक्त होकर वज्र चित्त का स्मरण करते हुए शान्त हुए। रक्षावज्रों के प्रयोगों में, नित्यकर्म के साधनात्मक यही मन्त्र महावज्रों से दुःखियों का नित्य ही बलदायक माना गया है।

[यहाँ भगवान् = महावज्रधर हैं। त्रिकाय = त्रैधातुका अग्रमहिषी = धारणियों में श्रेष्ठ धारणी। त्रिवज्र = सर्वसत्त्व।]

अथ भगवान् महारागसमयावलोकनं नाम समाधिं समापद्येमां धर्मकायाग्रभार्यां स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं कटे विकटे कटङ्कटे करोटवीर्ये स्वाहा ॥

अथास्यां गीतमात्रायां वज्रधर्माग्रधारिणः ।
तुष्टा ध्यानं समापेदे वज्रधर्ममनुस्मरन् ॥ ५ ॥
धर्मपुष्टिं बलं नित्यं महाकोशवती सदा ।
करोति जापमात्रेण वाग्वज्रस्य वचो यथा ॥ ६ ॥

इसके बाद भगवान् ने महारागसमयावलोकन नामक समाधि में प्रवेश करके यह धर्मकायाग्रभार्या को अपने काय-वाक् चित्त वज्रों से प्रकट किया। ॐ कटे विकटे करङ्कटे करोटवीर्ये स्वाहा। इस मन्त्र के गानमात्र से वज्रधर्मों के अग्रधारक अत्यन्त तुष्ट होकर वज्रधर्म का अनुस्मरण करते हुए ध्यान में निमग्न हुए। इस मन्त्र के जाप मात्र से जैसा कि वाग्वज्र ने कहा है - धर्म की

पुष्टि होती है नित्य बल प्राप्त होता है हमेशा ज्ञान-ध्यान की अवस्था की सृष्टि भी होती है।

[यहाँ भगवान् = वज्रधर हैं। महाराग समय = अमिताभ। अग्रभार्या - धारणी। धर्म = दानादि। पुष्टि = शरीर पुष्टि]

अथ भगवान् समन्तसम्भववज्रं नाम समाधिं समापद्येमां समयसत्त्वाग्रभार्यां स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं तारे तुत्तारे तुरे स्वाहा ॥

अथास्यां गीतमात्रायां सर्वबुद्धा महात्मजाः ।
हर्षिता ज्ञानमापेदे वज्रकायमनुस्मरन् ॥ ७ ॥
बुद्धवज्रमहासैन्यं सत्त्वधातुं समन्ततः ।
करोति दासवत् सर्वं निश्चेष्टं वशकृत् क्षणात् ॥ ८ ॥
इत्याह च ।

इसके बाद भगवान् ने समन्तसम्भववज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर समय सत्त्वाग्रभार्या नामक धारणी को अपने काय, वाक् और चित्त वज्रों से उत्पन्न किया। ॐ तारे तुत्तारे तुरे स्वाहा। अब इसके ज्ञान मात्र से सभी बुद्ध महात्मा लोग वज्रकाय का स्मरण करते हुए हर्षित होकर ज्ञान की अवस्था को प्राप्त हो गए। यह महासमय चारों ओर से सत्त्वधातुओं को बुद्ध वज्रमहासैन्य से युक्त करता है, और सभी कर्म दास के तरह ही करता है, क्षणमात्र में ही सभी को निश्चेष्ट होकर वश में करता है। ऐसा भी कहा है।

[यहाँ भगवान् = वज्रधर हैं। समन्त समय = अमोघसिद्धि हैं। अग्रभार्या = धारणी। तारा = दुःख के समुद्र से तारने के कारण ही तारा है। बुद्ध = प्रधानपुरुष]

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतो विमलरश्मिमेघव्यूहवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं वज्रयमान्तकमहाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम्। ओं ख ख खाहि खाहि सर्वदुष्टदमक असिमुसलपरशुपाशहस्त चतुर्मुख चतुर्भुभ षट्चरण

आगच्छागच्छ सर्वदुष्टप्राणहारिणे महाविघ्नान्तक विकृतानन सर्वभूतभयङ्कर अट्टाट्टहासनादिने व्याघ्रचर्मनिवसने कुरु कुरु सर्वकर्माणि छिन्द छिन्द सर्वमन्त्रान् भिन्दं भिन्दं परमुद्राणाकर्षय आकर्षय सर्वभूतान् निर्मथ निर्मथ सर्वदुष्टान् प्रवेशय प्रवेशय मण्डलमध्ये वैवस्वतजीवितान्तकर कुरु कुरु मम कार्यं दह दह पच पच मा विलम्ब विलम्ब समयमनुस्मर हूँ हूँ फट् फट् स्फोटय स्फोटय सर्वाशापरिपूरक सर्वान् नाशय रिपून् कर कर हे हे भगवन् किं चिरायसि मम सर्वार्थान् साधय साधय स्वाहा ।

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वे बुद्धा महायशाः ।
भीताः संत्रस्तमनसो वज्रचित्तमनुस्मरन् ॥ ९ ॥
कपालं निर्व्रणं प्राप्य चारुरूपं मनीषिणम् ।
पादाक्रान्तगतं कृत्वा मन्त्रमेनमनुस्मरन् ॥ १० ॥
लोचनां मामकीं चापि महावज्रकुलोच्चयाम् ।
द्वित्रीन् वारान् समुच्चार्य ध्रुवमाकृष्यते क्षणात् ॥ ११ ॥
इत्याह च भगवान् बोधिचित्तवज्रः ।

इसके बाद सर्वतथागत काय, वाक् चित्त वज्र तथागत भगवान् ने विमल रश्मि मेघव्यूह वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर वज्रयमान्तक महाक्रोध को अपने काय, वाक् चित्त वज्रों से उत्पन्न किया। [यहाँ विमल रश्मि = भगवान् वैरोचन हैं। वज्रयमान्तक = मन्त्रात्मक वज्रक्रोध] नमः समन्त कायवाक्चित्त वज्रों को। ॐ ख ख खा हि खा हि सर्वदुष्टदमक ----------------- साधय साधय स्वाहा। यही महामन्त्र है। इस उपर्युक्त मन्त्र के उच्चारण मात्र से सभी बुद्ध महाशय वज्रचित्त का अनुस्मरण करते हुए संत्रस्त और भयभीत हो गए। अत्यन्त विद्वान्, सुन्दर, वज्ररति कपाल को प्राप्त करके पैर से आक्रान्त करके इस मन्त्र का अनुस्मरण करना चाहिए। मामकी, लोचना जो महावज्रकुलोद्भव हैं दो या तीन बार नाम लेने मात्र से उसी क्षण जिसे चाहे उसे आकर्षित किया जा सकता है। यही कहा बोधिचित्तवज्र नामक भगवान् ने।

[यहाँ पर बुद्ध = शुक्र आदि जो कपाल हैं। वज्रचित्त का स्मरण करके उनके शरण में गए है। लोचना = ब्राह्मणकन्या। मामकी = क्षत्रियकन्या। महावज्रा = राजामात्य। चित्तवज्र = महावज्रधर]

अथ भगवान् वैरोचनवज्रस्तथागतः समयरश्मिघनाग्रं नाम समाधिं समापद्येमममृतसमयवज्रक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । नमो वज्रक्रोधाय महादंष्ट्रोत्कटभैरवाय असिमुसलपरशुपाशगृहीतहस्ताय ओं अमृतकुण्डलि ख ख खाहि खाहि तिष्ठ तिष्ठ बन्ध बन्ध हन हन दह दह गर्ज गर्ज विस्फोटय विस्फोटय सर्वविघ्नविनायकान् महागणपतिजीवितान्तकराय स्वाहा ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वे बुद्धा महायशाः ।
मूर्च्छिता भयमापेदे वज्रकायमनुस्मरन् ॥ १२ ॥
सर्वमन्त्रप्रयोगेषु वज्रोच्चाटनकर्मणि ।
उच्चाटयति विधिना बुद्धसैन्यमपि स्वयम् ॥ १३ ॥

इसके बाद भगवान् वैरोचन तथागत ने समयरश्मिघनाग्र नामक समाधि में प्रवेश करके अपने काय, वाक् और चित्तवज्र के द्वारा अमृत समय वज्र क्रोध को उत्पन्न किया। नमः समन्तकायवाक्चित्त वज्रियों को। नमो वज्रक्रोधाय मह ---------- महागणपति जी वितान्तकराय स्वाहा। यही महामन्त्र है। इस मन्त्र के बोलने मात्र से सभी महाशय बुद्ध भयभीत होकर वज्रकाय का स्मरण करते हुए मूर्च्छित हो गए। इन मन्त्रों के प्रयोग में और वज्रोच्चाटन कर्म में विधिपूर्व जो उच्चाटन का प्रयोग करता है उससे यहाँ तक कि बुद्ध के सैनिक भी उखड़ जाते हैं।

[यहाँ महावज्रधर समय = अमोघसिद्धि। वज्रकाय = अमोघसिद्धि]

अथ भगवान् रत्नकेतुस्तथागतो बुद्धरश्मिवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं वज्रापराजितमहाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं हूँ जिनरिटि हे हूँ हूँ फट् फट् स्वाहा ॥

अथास्मिन् गीत मात्रे तु सर्वे बुद्धा महायशाः ।
भीताः सन्त्रस्तमनसो बोधिचित्तमनुस्मरन् ॥ १४ ॥
राक्षसव्यालक्रूरेषु महाभयसमाकुले ।
करोति विधिवत्कर्म वज्रचित्तमनुस्मरन् ॥ १५ ॥

इसके बाद भगवान् रत्नकेतु तथागत ने बुद्धरश्मि वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके अपने काय, वाक् और चित्तवज्रों से वज्र-अपराजित महाक्रोध को उत्पन्न किया। ॐ नमः समन्त कायवाक्चित्त वज्राया। ॐ हूँ जिन रिटि हे हूँ हूँ फट् स्वाहा। यही महामन्त्र है। इस मन्त्र के गायन मात्र से ही सभी बुद्ध महाशय भयभीत हो गए बोधिचित्त का स्मरण करते हुए व्याकुल हो गए। भयङ्कर राक्षस एवं सर्पों के डरावने स्थानों में वज्र चित्त का स्मरण करते हुए विधिपूर्वक कर्म किये जाते हैं।

अथ भगवानमितायुस्तथागतोऽमितसम्भववज्रं नाम समाधिं समापद्येमं पद्मसम्भववज्रक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम्। ओं हूँ हूँ तरुल विरुल सर्वविषघातक ज्वलितविस्फुलिङ्गाट्टाट्टहास केसरिसटाटोपटङ्कारवज्रखुरनिर्घातनचलितवसुधातल निश्वासमारुतो त्क्षिप्तधरणीधरं भीषणाट्टाट्टहास अपरिमितबलपराक्रम आर्यगणभीतभूतगणाध्युषित बुद्ध बुद्ध हयग्रीव खाद खाद परमन्त्रान् छिन्द छिन्द सिद्धिं मे दिश आवेशय सर्वज्वरपिपासादीन् सर्वग्रहेष्वप्रतिहतो भव वज्रदंष्ट्र किं चिरायसि इमं सर्व दुष्टग्रहं दुष्टसङ्घं वा धुन धुन विधुन विधुन मथ मथ मट मट घातय घातय बन्ध बन्ध बुद्धधर्मसङ्घानुज्ञातकर्म कुरु शीघ्रम्। हयग्रीवाय फट् वज्रगात्राय फट् वज्रनेत्राय फट् वज्रदंष्ट्राय फट् वज्रखुराय फट् परमन्त्रविनाशाय फट् त्रैलोक्यभयङ्कराय फट् सर्वकर्मेष्वप्रतिहताय फट्

वज्रकुलसन्त्रासनाय फट् हूँ हूँ हूँ फट् फट् फट् स्वाहा ॥

अथास्मिन् विनिःसृतमात्रे धर्मवज्रा महाग्रजाः ।
भीताः संमूर्च्छमापेदे ज्ञानराजमनुस्मरन् ॥ १६ ॥
खधातुं विषसम्पूर्णं वज्रहालाहलप्रभम् ।
करोति निर्विषं सर्वं क्रोधराजप्रचोदनैः ॥ १७ ॥
इत्याह च ।

अब फिर भगवान् अमितायु तथागत ने अमित सम्भव वज्र नामक समाधि में प्रवेश करके अपने काय, वाक् एवं चित्त वज्रों से पद्म सम्भव वज्र क्रोध को उत्पन्न किया। नमः समन्त काय वाक् चित्त वज्राणाम्। ऊँ हूँ हूँ हूँ तरुल ------------ हूँ हूँ हूँ फट् फट् फट् स्वाहा। इस प्रकार महामन्त्र के निकलने मात्र से महाग्रज, धर्मवज्र ज्ञानराज का स्मरण करते हुए भयभीत हुए एवं मूर्च्छित हो गए। समग्र आकाशधातु विष से पूर्ण और वज्रहालाहालपूर्ण भी हो तो इस मन्त्र के द्वारा क्रोधराजाओं के प्रेरणा से विषरहित बनाता है।

[अमित = अमिताभः। उससे उत्पन्न हयग्रीव]

अथ भगवान् अमोघसिद्धिस्तथागतः अमोघसमय सम्भवकेतुवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं नीलवज्र दण्डक्रोधराजं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम्। ओं एह्येहि भगवन् नीलवज्रदण्ड तुरु तुरु हुलु हुलु हाहा गुलु गुलु गुलापय क्रम क्रम भगवन् वायुवेगेन भूतान् शीघ्रं दह दह दर दर वह वह पच पच मथ मथ पातय पातय मट्ट मट्ट मट्टापय मट्टापय सर्वकर्माणि छिन्द छिन्द भक्ष भक्ष मेदमांसरुधिरमत्स्यमेदमज्जाप्रिय एह्येहि भगवन् सर्वविघ्नानि सर्वमन्त्राणि सर्वमूलकर्माणि सर्वमूलग्रहान् हन हन भञ्ज भञ्ज मर्द मर्द इदं मे कार्यं साधय हूँ नीलाय नीलवज्रदण्डाय तुरु तुरु विघ्नविनायकनाशकाय हुरु हुरु दीप्तचण्डाय सर्वशत्रूणां हृदयानि पीडय छिन्द छिन्द विद्यानां छेदक हूँ विद्यानां शिष्टान् स्मर स्मर समयं वज्रधरवचनं कर्माणि निकृन्तय हूँ हूँ हन हन दह दह कुरु कुरु तुरु तुरु हुरु फट् फट् हूँ हूँ हूँ भक्षापय कृतान्ताय देवऋषिविद्रापकाय हन हन वज्रदण्डाय स्वाहा ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वदुष्टाग्रसम्भवाः ।
भीताः सन्त्रस्तमनसो वज्रसत्त्वमनुस्मरन् ॥ १८ ॥
जपेनाष्टशतेनायं क्रोधराजो महायशः ।
घातकः सर्वदुष्टानां विधिचक्र प्रयोजनैः ॥ १६ ॥
इत्याह च ।

इसके बाद भगवान् अमोघसिद्धि तथागत ने अमोघ समय सम्भव केतु वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर यह नीलवज्र दण्ड क्रोधराज को अपने काय, वाक् एवं चित्त वज्रों से उत्पन्न किया। नमः समन्त काय वाक् चित्त वज्राणाम्। ऊँ ए हि ए हि ------- हन हन वज्रदण्डाय स्वाहा। इस मन्त्र के उच्चारण करते ही सर्वदुष्टाग्र सम्भव बुद्ध भयभीत हो गए और वज्रसत्त्व का स्मरण करते हुए अत्यन्त त्रस्त हो गए। इस महामन्त्र के १०८ जप करने मात्र से भगवान् क्रोधराज महाशय स्वयं ही विधिचक्र के प्रयोजन द्वारा सर्वदुष्टों का नाश करते हैं ऐसा ही कहा है।

[अवन्ध्यसिद्धि देने के कारण अमोघसिद्धि कहलाते हैं]

अथ भगवान् अक्षोभ्यवज्रस्तथागतः समन्तमेघश्रियं नाम समाधिं समापद्येमं महाबलवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं हूँ हूँ हूँ फट् फट् फट् ओं ऊग्रशूलपाणि हूँ हूँ हूँ फट् फट् फट् ओं ज्योतिर्निर्णाद हूँ हूँ हूँ ओं फट् फट् फट् ओं महाबलाय स्वाहा।

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वे नागा महाबलाः ।
भीताः सन्त्रस्तमनसः त्रिकायवज्रमनुस्मरन् ॥ २० ॥
जापमात्रप्रयोगेण सर्वकर्माणि साधयेत् ।
अनावृष्टिसमये च पातयेद्वारिमण्डलम् ॥ २१ ॥

इसके बाद भगवान् तथागत अक्षोभ्य वज्र ने समन्तमेघश्री नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय, वाक् चित्त वज्रों से महाबल वज्र को उत्पन्न किया। नमः समन्त कायवाक्चित्त वज्राणाम्। ओं हूँ हूँ हूँ ---------- महाबलाय स्वाहा। इस मन्त्र के उच्चारण मात्र से सभी महान् बलशाली नाग भयभीत हो गए और त्रिकाय वज्र का स्मरण करने लगे जो सन्त्रस्त थे। इस महामन्त्र के जापमात्र से सभी काम पूर्ण हो जाते हैं। और अनावृष्टि की स्थिति में इस मन्त्र से भयंकर वर्षा होती है ।

अथ भगवान् समन्तनिर्घातवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं सर्वतथागतटक्किराजमहाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं टक्कि हूँ जः ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वबुद्धा महात्मजाः ।
भीताः समयमापेदे त्रिवज्रकायमनुस्मरन् ॥ २२ ॥
लिङ्गं दक्षिणपादेन वज्रसत्त्वप्रयोगतः ।
त्रिवज्रमन्त्रचक्रेण सर्वसत्त्वाकर्षणं भवेत् ॥ २३ ॥

अब इसके बाद भगवान् ने समन्तनिर्घात वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय, वाक् और चित्त वज्रों से सर्वतथागत टक्किराज महाक्रोध को उत्पन्न किया। नमः समन्तकायवाक् चित्त वज्राणाम्। ऊँ टक्कि हूँ जः। अब इनके इस मन्त्र के उच्चारण करने मात्र से सभी बुद्ध–महात्मा त्रिवज्र काय का स्मरण करते हुए भयभीत होकर समय में प्रविष्ट हो गए। दक्षिण पाद रूप चिन्ह के द्वारा और वज्रसत्त्व के प्रयोग से, साथ ही त्रिवज्रमन्त्रचक्र से भी समग्र वज्रसत्त्वों का आकर्षण किया जाता है।

अथ भगवान् ज्ञानमालाम्बुवज्रं नाम समाधिं समापद्येममचलवज्रचण्डसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं अचलकारण हूँ हूँ मोट्ट मोट्ट सट्ट सट्ट ह ह मोह मोह सह सह हन हन दह दह तट्ट तट्ट तिष्ठ आविश आविश महामत्तपालक धुन धुन तिणि तिणि किणि किणि खाद खाद विघ्नान् मारय मारय दुष्टान् भक्ष भक्ष सर्वान् कुरु कुरु किरि किरि महाविषमवज्र स्फोटय स्फोटय हूँ हूँ हूँ नृबलितरंग नर्तक आँ आँ हाँ हाँ अचलचेत स्फोटय स्फोटय ओं असमन्तिक त्राद् महाबल सातय समयं मँ त्राँ हाँ माँ शुध्यतु वज्री तुष्यतु वज्री नमोऽस्त्वप्रतिबलेभ्यः ज्वालय त्राद् असह नमः स्वाहा ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वे देवाः सकिङ्कराः ।
मूर्च्छितास्त्रस्तमनसो मन्त्र कायमनुस्मरन् ॥ २४ ॥
अनेन क्रोधमन्त्रेण महादेवादयः सुराः ।
भीताः सम्पुटकायेन आकृष्यन्ति महर्धिकाः ॥ २५ ॥

इसके बाद भगवान् ने ज्ञानमालाम्बुजवज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर यह अचल वज्र चण्डसमय को अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से उत्पन्न किया। नमः समन्त काय-वाक् चित्त वज्राणाम्। ॐ अचल कारण हूँ हूँ मोह -------- ज्वालय त्राट् असह नमः स्वाहा।

इस महामन्त्र के उच्चारण मात्र से अपने किङ्करों सहित सभी देवता मूर्च्छित हो गए और मन्त्र काय का स्मरण करने लगे। इस क्रोध मन्त्र से महादेव आदि देवता डरकर हाथ जोड़ कर, भले ही बलवान् क्यों न हों आकृष्ट हो जाते हैं।

अथ भगवान् समयविजृम्भितवज्रं नाम समाधिं समापद्येमं सर्ववज्रधरसमयं सुम्भ महाक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

ओं नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं सुम्भ निसुम्भ हूँ गृण्ह गृण्ह हूँ गृण्हापय गृण्हापय हूँ आनय हो भगवन् विद्याराज हूँ फट् ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वकन्या महर्धिकाः ।
मुक्तकेशा विवस्त्राङ्गा वज्रसत्त्वमनुस्मरन् ॥ २६ ॥
वज्रसत्त्वपदाक्रान्तं सर्वतथागताधिपम् ।
वज्राङ्कुशपाशेन वज्रकन्याकर्षणं परम् ॥ २७ ॥

अब भगवान् ने समय विजृम्भित वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर यह सर्ववज्रधर समय सुम्भ महाक्रोध को अपने काय-वाक्-चित्तवज्रों से उत्पादन किया। ॐ नमः समन्त काय वाक् चित्त वज्राणाम्। ॐ सुम्भ निसुम्भ हूँ गृह्ण गृह्ण हूँ गृह्णापय गृह्णापय हूँ आनय हो भगवन् विद्याराज हूँ फट् ॥ इस मन्त्र के उच्चारण करते ही विशिष्ट ऋद्धियों से सुसज्जित सभी कन्यायें वज्रसत्त्व का स्मरण करते हुए मुक्त केश और नग्न हो गए। वज्रसत्त्व पदों से आक्रान्त, सर्वतथागतों के अधिप, वज्राङ्कुश पाशों से सर्ववज्र कन्याओं का पूर्णरूप से आकर्षण किया जाता है।

अथ भगवान् महासमयतत्त्वोत्पत्तिवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं महासमयवज्रगुह्यवाक्समयतत्त्वपदं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास

बुद्धवज्रत्रिकायेषु वज्रसत्त्वविभावना ।
पाशवज्राङ्कुशधरैर्बुद्धाकर्षणमुत्तमम् ॥ २८ ॥

अब इसके बाद भगवान् ने महासमय तत्त्व उत्पत्ति वज्र नामक समाधि में

प्रवेश करके महासमय वज्र गुह्यवाक् समय तत्त्वपद को स्वकाय वाक्चित्त वज्रों से उत्पन्न किया। बुद्ध वज्रात्मक त्रिकायों में वज्रसत्त्वों की भावना के द्वारा पाश वज्रांकुश धारकों के माध्यम से उत्तम बुद्धाकर्षण होता है।

बुद्धवाक्काययोगेन महाचक्रप्रयोगतः ।
वज्रसत्त्वो महाराजो ध्रुवमाकृष्यते सदा ॥ २६ ॥

महाचक्र के प्रयोग पूर्वक बुद्ध-काय-वाक् योग से निश्चय ही हमेशा वज्रसत्त्व महाराज आकर्षित किए जाते हैं।

चक्रपद्ममहावज्रैः त्रिवज्राभेद्यभावनैः ।
वज्राङ्कुशप्रभेदेन सर्वमन्त्राकर्षणं ध्रुवम् ॥ ३० ॥

चक्रपद्ममहाव्रज - त्रिवज्रामेघ भावना और वज्राङ्कुश प्रभेद से निश्चय ही सर्वमन्त्रों का आकर्षण होता है।

स्वमन्त्रपुरुषं ध्यात्वा सर्ववज्रमयं शिवम् ।
कन्यां तु मानुषीं श्रेष्ठां हृद्वज्राङ्कुश योगतः ॥ ३१ ॥
वातमण्डलसंयोगे ध्रुवमाकृष्यते सदा ।
वैरोचनमहाबिम्बं भावयेच्चन्द्रमण्डलम् ॥ ३२ ॥

स्वमन्त्रपुरुष का ध्यान करके और सर्वमन्त्रमय, जो शिवरूप है साथ ही मानवीय श्रेष्ठ कन्या का हृदयअंकुश वज्रयोग से ध्यान करके आकर्षित किया जाता है। वातमण्डल के संयोग में हमेशा निश्चित ही आकृष्ट किया जाता है। वातमण्डल के संयोग में हमेशा निश्चित ही आकृष्ट किया जाता है। उसके बाद चन्द्रमण्डल में वैरोचन महाबिम्ब की भावना करें।

शचीं तत्र स्थितां चिन्तेद्वज्रामृतप्रयोगतः ।
पञ्चाशवारानुच्चार्य ध्रुवमाकृष्यते सदा ॥ ३३ ॥

वज्रामृत प्रयोग से वहाँ पर शची का चिन्तन करके पञ्चाश वारों का उच्चारण करके, निश्चय भी अभिलषित पदार्थ का आकर्षण किया जाता है।

वज्राङ्कुशमहाबिम्बं तीक्ष्णज्वालासमप्रभम् ।
वज्रमण्डलकं ध्यात्वा खकन्याकर्षणमुत्तमम् ॥ ३४ ॥

वज्राङ्कुश महाबिम्ब, जो तीक्ष्ण जवाला के तेज जैसा तेज धारण करते हैं ऐसे

वज्रमण्डल का ध्यान करके उत्तम आकाश कन्या को आकर्षण किया जा सकता है।

स्वक्रोधवज्रसमयं वज्रपातालवासिनम् ।
शूलवज्राङ्कुशपाशैर्दैत्यकन्याकर्षणमुत्तमम् ॥ ३५ ॥

स्वक्रोधवज्र समय को, जो वज्रपाताल के वासी हैं, शूल, वज्र, अंकुश और पाशों के द्वारा दैत्यों के उत्तम कन्याओं का आकर्षण किया जाता है।

गौरिकां खटिकां वापि वज्राङ्कुशयोगतः ।
चन्द्रोपरागसमये मुखे प्रक्षिप्य साधयेत् ॥ ३६ ॥

वज्र अङ्कुश के प्रयोग द्वारा चन्द्रोपराग के समय में गौरी या खटिका को मुख में प्रक्षिप्त करके सिद्ध करना चाहिए।

ब्रह्मेन्द्ररुद्रदेवानां यस्य नाम समालिखेत् ।
आगच्छन्ति भयवस्ताः वाक्यवज्रवचो यथा ॥ ३७ ॥

ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र आदि जिस देवता का नाम उच्चारण किया जाता है वे सब भयभीत होकर वहीं पर आ जाते हैं।

सर्वाकारवरोपेतं मञ्जुवज्रं विभावयेत्।
यमान्तकं महाक्रोधं वज्राङ्कुशं विचिन्तयेत् ॥ ३८ ॥

सर्वाकार से युक्त महाक्रोध, वज्राङ्कुश का चिन्तन करना चाहिए। उसके बाद यमान्तक, महाक्रोध, वज्राङ्कुश का चिन्तन करना चाहिए।

कल्पोद्दाहमहाचक्रं ध्यात्वा यक्षींस्तु साधयेत् ।
इत्याह च ॥
मुद्राभेदेन सर्वेषां मन्त्रभेदेन सर्वथा ।
आकर्षणपदंप्रोक्तं न चेन्नाशमवाप्नुयात्॥ ३९ ॥

कल्पोहाट महाचक्र का ध्यान करके यक्षिणी की सिद्धि की जाती है। ऐसा कहा भी है। सभी का मुद्रा और मन्त्रों के भेद से, हमेशा, आकर्षण के लिए पद कहा गया है अन्यथा नाश होता है।

वज्रसत्त्वो महाराजश्चोदनीयो मुहुर्मुहुः ।
स एव सर्वमन्त्राणां राजा परमशाश्वतः ॥ ४० ॥

वज्रसत्त्व, महाराज को बारम्बार प्रेरित करना चाहिए। वे ही सभी मन्त्रों

का राजा हैं और परम शाश्वत भी हैं।

अथ भगवान् समन्तविजृम्भितज्ञानवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां वज्रैकजटां नाम महासर्पापराजितवाग्वज्राग्रीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास। ओं शूलिनि स्वाहा।

अथास्यां भाषितमात्रायां नागकन्या महर्धिकाः ।
दह्यमाना विवस्त्राङ्गा बुद्धबोधिमनुस्मरन् ॥ ४१ ॥
अनया मन्त्रविद्यया सर्वे आकृष्यन्ति पन्नगाः ।
नागकन्यां विशालाक्षीं समाकृष्योपभुंजयेत् ॥ ४२ ॥

अब फिर भगवान् ने समन्त विजृम्भित ज्ञानवज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय, वाक् चित्त वज्रों से वज्रैकजटानामक महासर्पा पराजित वाग्वज्राग्री को उत्पन्न किया। ॐ शूलिनि स्वाहा। अब इनके मन्त्र के उच्चारण = भाषण मात्र से ऋद्धियुक्त नाग कन्यायें जलने लगीं और बुद्धबोधि का स्मरण करते हुए विवस्त्र नग्न हो गयीं । इस मन्त्र विद्या से सभी सर्प आकर्षित हो जाते हैं। साथ ही विशालाक्षी नागकन्या को आकर्षित करके उसका भोग करें।

[यहाँ भगवान् = महावज्रधर हैं]

अथ भगवान् गगनसमयसम्भवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां महाधर्मसमयवज्रभृकुटीं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

ओं भयनाशनि त्रासनि त्रासय भृकुटी तटि वेतटि वेतटि वैरटि वैरटि श्वेते श्वेतजटिनि स्वाहा ॥

अथास्यां गीतमात्रायां सर्वविद्याधरात्मजाः ।
कम्पिता भयमापेदे ज्ञानराजमनुस्मरन् ॥ ४३ ॥
विद्याधरमहाकन्यां चलत्कनककुण्डलाम् ।
आकृष्य समयाद्येन अनया मन्त्रविद्यया ॥ ४४ ॥
निरोधवज्रराजेन निष्पन्नेनाग्रचारुणा ।
त्रिवज्रज्ञानसम्भूताः क्षणात् कृष्यन्ति सर्वतः॥ ४५ ॥

इसके बाद भगवान् ने गगन समय सम्भव वज्र नामक समाधि में प्रवेश

करके अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से महाधर्म समय वज्र भृकुटी को उत्पन्न किया। ॐ भयनाशिनि -------------- श्वेतजटिनि स्वाहा। इस मन्त्र के गान मात्र से सर्व विद्या धरात्मज कम्पित हो गए और यमराज का स्मरण करते हुए भयभीत हो गए। विद्याधर नामक महाकन्या जो हिलते हुए कनक एवं कुण्डल धारण करती है, उसे आकर्षित करके इस मन्त्र विद्या के द्वारा उसका उपभोग करे। निरोध वज्रराज के द्वारा सुन्दर अग्रगति में निष्पन्न पदों से जो त्रिवज्रज्ञान सम्भूत हैं वे तत्क्षण ही आकर्षण कर सकते हैं ।

[यहाँ गगन समय = अमिताभ हैं]

अथवा सर्वक्रोधानां लक्षजापेन मन्त्रिणः।
सर्वकर्मकराः प्रोक्ताः विजनेषु महत्सु च ॥ ४६ ॥
आचार्यनिन्दनपरा महायानाग्रनिन्दकाः।
मारणीयाः प्रयत्नेन अथवा स्थानचालनम् ॥ ४७ ॥

अथवा सभी क्रोधमन्त्रों का लाखवार जाप करने से सभी मन्त्रधारक तथागत सभी कर्मों के कर्ता हो जाते हैं वे सब बड़े विजन स्थानों में भी काम करते हैं। आचार्यों के निन्दक, महायान के द्वेषक जो भी हैं इन्हें यत्नपूर्वक मारना चाहिए अथवा उस स्थान से हटा देना चाहिए।

अनेन बोधिं परमां मन्त्रसिद्धिञ्च प्राप्नुयात् ।
इत्याह च ॥
दशदिक्सर्वबुद्धानां कायवाक्चित्तघातनम् ॥ ४८ ॥

इससे परम बोधि और मन्त्रसिद्धि मिलती है। ऐसा कहा भी है। [सर्वक्रोध = यमान्तक] दशों दिशाओं में सभी बुद्धों के काय, वाक्, चित्त घातन कहा गया है।

भावनीयं विधानेन रिपूणां दुष्टचेतसाम् ।
रुधिरार्द्रं सलिलार्द्रं विण्मूत्रार्द्रं वापि कारयेत् ॥ ४९ ॥
प्रावृत्य लिङ्गं चाक्रम्य क्रोधराजं प्रयोजयेत् ।
शताष्टेन तु पूर्णेन ध्रुवं बुद्धोऽपि शीर्य्यते ॥ ५० ॥
इत्याह च ।

दुष्टचित्तों वाले शत्रुओं की भावना करनी चाहिए, जिससे वे सब रक्त, पानी, विष्ठा

मूत्र आदि से भीग जायेंगे। उनके समापन के लिए क्रोधराज का प्रयोग करके उनके शरीर में ही आक्रमण करना चाहिए। १०८ बार के मन्त्रप्रयोग से यहाँ तक कि बुद्ध भी वश में हो जाते हैं। ऐसा भी कहा है।

[यहाँ लिङ्ग = शरीर को कहा गया है]

सलिलार्द्रगतं वस्त्रं कृत्वा क्रोधाग्रबन्धनात् ।
लिङ्गं पादेन चाक्रम्य ध्रुवं बुद्धोऽपि नश्यति ॥ ५१ ॥
विण्मूत्रार्द्रगतं वस्त्रं पूतिगन्धजुगुप्सितम् ।
प्रावृत्य मन्त्रमावर्तेत् शुष्यते म्रियते क्षणात् ॥ ५२ ॥
भस्मोदकार्द्रगतं वस्त्रं प्रावृत्य क्रोधसङ्कुलम् ।
शताष्टवारानुच्चार्य वज्रसत्त्वोऽपि शीर्य्यते ॥ ५३ ॥
इत्याह च ।

पानी में भीगे हुए वस्त्र को लेकर क्रोध राज के मन्त्र बन्धन द्वारा उसके ऊपर आक्रमण करने पर वे बुद्ध हों तो भी वश में हो जाते हैं। विष्ठा, मूत्र आदि से भीगे हुए और भयङ्कर दुर्गन्ध से पूर्ण वस्त्र को उस व्यक्ति की भावना करके उसके चित्र या शरीर में घुमाने मात्र से वह या सूख जाता है या मर ही जाता है। पानी में भस्म को घोलकर उसी में वस्त्र खण्ड को भिगोकर क्रोधसङ्कुल वज्री की भावना करने पर और १०८ बार मन्त्रोच्चारण से वज्रसत्त्व तक भी वशवर्ती हो जाते हैं ऐसी भी कहा है।

सलिलार्द्रगतं वस्त्रं प्रावृत्य क्रुद्धचेतसा ।
नग्नो मुक्तशिखो भूत्वा विकटोत्कटसम्भ्रमः ॥ ५४ ॥
लिङ्गं पादेन चाक्रम्य खधातुमपि नाशयेत् ।
इत्याह च ।
मातृगृहे श्मशाने शून्यवेश्मनि चतुष्पथे ॥ ५५ ॥
एकलिङ्गैकवृक्षे वा अभिचारं समारभेत् ।
मानुषास्थिमयं कीलं अष्टाङ्गुलप्रमाणतः ॥ ५६ ॥
शताष्टवारानुच्चार्य अरिद्वारेषु गोपयेत् ।
बुद्धस्त्रिकायवरदो ज्ञानाज्ञानविवर्जितः ॥ ५७ ॥
पक्षाभ्यन्तरपूर्णेन भ्रश्यते म्रियतेऽपि वा ।

कपालं परिपूर्णवा प्राप्य विज्ञो विशेषतः ॥ ५८ ॥
लिखेन्मन्त्रपदं तत्र जापया वज्रभाषया ।
अरिद्वारेऽथवा ग्रामे गोप्योच्चाटयते ध्रुवम् ॥ ५९ ॥
तालपत्रेऽथवाऽन्यत्र क्रोधमन्त्रं समालिखेत् ।
अरिगृहेऽथवा द्वारे गोप्य नश्यति शुष्यति ॥ ६० ॥
इत्याह भगवान् महासमयकेतु वज्रः ।

पानी में भीगे हुए कपड़े से ढककर क्रुद्धचित्त होकर नग्न ही शिखा खोलकर विकट-उत्कट स्वरूप बनाकर व्यक्ति के शरीर या चित्र के ऊपर आक्रमण करने पर यहाँ तक की आकाश धातु भी समाप्त हो जाता है। मातृगृह, श्मशान, शून्यस्थान या चौराहे पर भी, एकान्त स्थान या वृक्ष के मूल में भी यह अभिचार आरम्भ किया जा सकता है। मनुष्यों के हड्डी से बने हुए कील जो आठ अंगुली मापन का हो के साथ उपर्युक्त मन्त्र को १०८ बार उच्चारण करके शत्रुओं के घरों में कहीं छिपाकर रख दें, उसमें त्रिकाय बुद्ध जो वरदान देने में उद्यत है, जो ज्ञान और अज्ञान दोनों रहित हैं। इस प्रकार की भावना मात्र से १५ दिनों में यह कृत्य पूर्ण हो जाता है। वह व्यक्ति मर जाता है या भ्रष्ट हो जाता है। इस प्रकार विशेष करके उसके कपाल को विशेषज्ञ प्राप्त कर सकता है। उस कपाल में मन्त्र पद को वज्र के भाषा में लिखना और जाप करना चाहिए। इससे शत्रु के द्वार में या ग्राम में निश्चय ही गोपनीयपूर्वक रखने से उच्चाटन हो जाता है। ताड़ के पत्तों में अथवा अन्य किसी भी कागज में क्रोध मन्त्र को लिखकर शत्रु के द्वार पर या अन्यत्र गोपनीय रूप से रख देने मात्र से वह शत्रु तत्काल ही समाप्त या नष्ट हो जाता है।

भगवान् महासमयकेतु वज्र ने ऐसा ही कहा है।

[यहाँ मातृगृह कहने से - ब्रह्माणी, वैष्णवी, रुद्राणी, इन्द्राणी, कौबेरी, वाराही और चामुण्डा सप्त लोकमाताओं का बोध होता है]

अथ भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तनिबन्धनवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वत्रैधातुककायवाक्चित्तकीलनवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं घ घ घातय घातय सर्वदुष्टान् फट् कीलय कीलय सर्वपापान्

फट् हूँ हूँ हूँ वज्र कीलय वज्रधर आज्ञापयति कायवाक्चित्तवज्रं कीलय हूँ फट् ॥

अथास्मिन् भाषितमात्रे सर्वे वज्रा महर्धिकाः ।
मूर्च्छिता भयमापन्नाः खवज्रचित्तमनुस्मरन् ॥ ६१ ॥
मानुषास्थिमयं कीलं अथवा खदिराग्रजम् ।
अयोमयकृतं कीलं त्रिवज्रकायनाशनम् ॥ ६२ ॥
वज्रसत्त्वं समाधाय स्फुलिङ्गाकुलसुप्रभम् ।
त्रिवज्रकायपर्यन्तं बिम्बं ध्यात्वा प्रयोजयेत् ॥ ६३ ॥
वैरोचनमहामुद्रामथवा राजवज्रिणः ।
यमान्तकमहामुद्रां ध्यात्वा त्रिवज्रकीलनम् ॥ ६४ ॥
कुण्डलामृतवज्रेण दुष्टक्रूरनिकृन्तनम् ।
कर्तव्यं वज्रयोगेन बुद्धस्यापि महात्मनः ॥ ६५ ॥
हृदयं यावत् पादान्तं वज्रकीलविभावनम् ।
ऊर्ध्वन्तदेवसमयमिदं कीलविजृम्भितम् ॥ ६६ ॥
ध्यानवज्रप्रयोगेण ध्रुवं बुद्धोऽपि कील्यते ।
वज्रसत्त्वो महाराजा कीलयन् म्रियते लघु ॥ ६७ ॥

अब फिर भगवान् ने सर्वतथागत काय वाक् चित्त निबन्धन वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय-वाक् चित्त वज्रों से इस सर्वत्रैधातुक काय-वाक्-चित्त कीलन वज्र का उत्पादन किया। ऊँ घ घ घातय --------------- कीलय हूँ फट्। भगवान् द्वारा इस मन्त्र के उच्चारण मात्र से महाऋद्धि सम्पन्न सभी वज्रगण भयभीत हो गए तथा खवज्र चित्त का स्मरण करते हुए मूर्च्छित हो गए। मनुष्य के हड्डीयुक्त अथवा खयर के वृक्ष का कील बनाकर अथवा लोहे का कील बनाकर प्रयोग करने से त्रिवज्र ही क्यों न हो नाश हो जाता है। वज्रसत्त्व का ध्यान करके जो जलते हुए अंगार जैसे हैं, और त्रिवज्रकाय तक फैले हुए हैं के बिम्ब का ध्यान कर के इस मन्त्र का प्रयोग किया जाना चाहिए। वैरोचन महामुद्रा अथवा रागमुद्रा और यमान्तकमहामुद्रा का ध्यान करके ही इसका प्रयोग करना चाहिए।

कुण्डलात्मक अमृतवज्र से ही दुष्ट क्रूर व्यक्तियों का नाश करना चाहिए।

उसमें महात्मा स्वरूप बुद्ध का चिन्तन भी करना चाहिए। हृदय से लेकर पैर के अन्तिम भाग तक वज्रकील का चिन्तन करना चाहिए। यही ऊर्ध्व देव समय है जो कीलों से संपुट हुआ है। ध्यान वज्र के प्रयोग द्वारा निश्चय ही बुद्ध का भी कीलन हो जाता है। यहाँ तक की वज्रसत्त्व महाराज भी कीलन से तत्काल ही अवस्थान्तर को प्राप्त होते हैं।

[यहाँ भगवान् महावज्रधर हैं। ऋद्धि सम्पन्न व्यक्ति = शुक्र आदि हैं। वज्र योग = अक्षोभ्य योग। बुद्ध का = वैरोचन-अमिताभ आदि का। महात्मा = यमान्तक। बुद्ध भी कीलित होते हैं = कील विधि के ज्ञाता - मारणवेत्ता भी]

अथ भगवान् महावैरोचनः कायविजृम्भितवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं स्वकायसमयाक्षेपवज्रकीलनमन्त्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

॥ ओं छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द हन हन दह दह दीप्तवज्रचक्र क्षुँ फट् ॥

अन्योन्यवेष्टनाकारमङ्गुष्ठपदमीलनम् ।
वैरोचनपदाक्रान्तं वज्रकीलनिपातनम् ॥ ६८ ॥
हतमात्रे महासत्त्वे त्रिकायवज्रसम्भवः ।
उत्तिष्ठेत् समयाग्रेण न चेन्नाशपदं भजेत् ॥ ६९ ॥

अब फिर भगवान् महावैरोचन ने कायवाक्विजृम्भित नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय-वाक्-हृदय-चित्तवज्रों से स्वकाय समयाक्षेपवज्रकीलन मन्त्र को प्रकट किया। ऊँ छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द हन हन दह दह दीप्तवज्रचक्र क्षुं फट्। इस मन्त्र के द्वारा एक दूसरे को, दोनों अंगुष्ठों को आपस में जोड़ते हुए वैरोचन पदों से आक्रान्त करना ही वज्रकील का निपातन कहलाता है। इसके बाद महासत्त्वों के हत होते ही त्रिकायवज्र सम्भव को समयाग्र स्थान से उठना चाहिए अन्यथा अपना ही नाश हो जाता है।

अथ भगवान् लोकेश्वरो वाग्विजृम्भितं नाम समाधिं समापद्येदं वाक्समयाक्षेपकीलनमन्त्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं ह्रीः भूर्भुवः ॥

विकसितज्ञानं पद्मे वज्राङ्गुलिनिवेशनम् ।
वाक्यवज्रपदाक्रान्तं वज्रकीलनिपातनम् ॥ ७० ॥
हतमात्रे महावज्रे त्रिकायालयसम्भवः ।

उत्तिष्ठेत् हतमात्रेण न चेन्नाशपदं भजेत् ॥ ७१ ॥

अब भगवान् लोकेश्वर ने वाग्विजृम्भित नामक समाधि में प्रविष्ट होकर स्वकायवाक्‌चित्तवज्रों से इस वाक्‌समयाक्षेप कीलन मन्त्र का प्रादुर्भाव किया। ऊँ ह्रीः भूर्भुवः। पूर्णरूप से फुले हुए ज्ञानरूपी कमल में वज्राङ्गुली का प्रवेश कराना और वज्रपदाक्रान्त वाक्य को उसमें निवेश करना ही वज्रकील निपातन कहा जाता है। उसके प्रयोग से महावज्र नष्ट होते हैं उनके नष्ट होते ही त्रिकायालय सम्भव योगी को उठना चाहिए अन्यथा उनका भी नाश हो जाता है।

अथ भगवान् महावज्रधरः चित्तविजृम्भितवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं चित्तसमयाक्षेपकीलनमन्त्रं स्वकायवाक्‌चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

॥ ओं वज्रराज हूँ ॥

पञ्चशूलनिवेशेन स्फुलिङ्गाकुलसाधनम् ।
चित्तवज्रपदाक्रान्तं वज्रकीलनिपातनम् ॥ ७२ ॥
हतमात्रे महावज्रे त्रिवज्रालयसम्भवः ।
उत्तिष्ठेत् हतमात्रेण च चेन्नाशपदं भजेत् ॥ ७३ ॥
सम्यग्विधानमार्गेण कायवाक्‌चित्तयोगतः ।
खधातुवज्रपर्यन्तं कीलयेन्नात्र संशयः ॥ ७४ ॥

अब भगवान् महावज्रधर ने चित्तविजृम्भित नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने कायवाक्‌चित्तवज्रों से चित्त समयाक्षेपकीलन मन्त्र का प्रादुर्भाव = उत्पन्न किया। ऊँ वज्रराज हूँ। पञ्चशूलों के निवेशपूर्वक स्फुलिङ्गाकुल के साधन से चित्तवज्र को पदाक्रान्त करने पर वज्रकील का निपात हो जाता है। उस महावज्र के हनन मात्र से त्रिवज्रालय को तत्काल ही उठना चाहिए अन्यथा उन्हीं का नाश हो जाता है। अच्छे विधिविधान पूर्वक, कायवाक्‌चित्तों के योग से आकाश धातु तक फैले हुए दुष्टों का नाश करना चाहिए इसमें सन्देह नहीं है।

इत्याह भगवान् महाकीलवज्रः ।

अथ बुद्धास्त्रिकायाग्राः सत्त्वधातुहितैषिणः ।
तुष्टाः प्रामोद्यसंप्राप्ताः इदं घोषमकारयन् ॥ ७५ ॥
अहो गुह्यपदं श्रेष्ठमहो सारसमुच्चयम् ।
अहो धर्मपदं शान्तमहो वज्रविदारणम् ॥ ७६ ॥

कीलनं सर्वबुद्धानां बोधिसत्त्वा महायशाः ।
कायवाक्चित्तवज्राणां कीलनं समुदाहृतम् ॥ ७७ ॥
इदं तत् सर्वमन्त्राणां कीलनं तत्त्वसम्भवम् ।
कायवाक्चित्तवरदं मन्त्रतत्त्वसमुच्चयम् ॥ इति ॥ ७८ ॥

भगवान् महाकील वज्र ने ऐसा ही कहा है। अब यह सब होने पर त्रिकाय के अग्रभूत बुद्ध जो सत्त्व धातु के पूर्ण हित में संलग्न हैं अत्यन्त हर्षित हुए और प्रमोद पूर्वक यह घोषणा करने लगे। आश्चर्य है! यह गुह्य पद अति श्रेष्ठ है सभी सत्त्वों के कल्याण का सार है। यह धर्म पद भी आश्चर्यकारक एवं शान्त है। यही वज्रविदारण भी है। सभी बुद्धों का कीलन जो बोधिसत्त्वों, महासत्त्वों के द्वारा होता है वह काय-वाक् चित्त वज्रों का कीलन ही कहा गया है। यही वह सभी तन्त्रों में कीलन शब्द से व्याहृत हुआ है। यही काय, वाक् चित्तों का वरदान है और यही समग्र मन्त्र तत्त्वों का समुच्चय-सार संक्षेप भी है।

इति श्री सर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे कायवाक्चित्ताद्भुतमन्त्राकर्षणविजृम्भितराजो नाम समाधिपटलश्चतुर्दशोऽध्यायः ॥

चतुर्दश पटल पूर्ण हुआ।

पञ्चदशपटलः

अथ वज्रधरो राजा सर्वाकाशमहाक्षरः।
सर्वाभिषेकसर्वज्ञो वाग्वज्रं समुदीरयत् ॥ १ ॥
द्वादशाब्दिकां कन्यां तां चाण्डालस्य महात्मनः।
साधयेत् साधको नित्यं विजनेषु विशेषतः ॥ २ ॥
विण्मूत्रसमयाद्येन चतुरस्त्रं विधानतः।
मण्डलं कारयेत् तत्र वज्रमण्डलसाधनैः॥ ३ ॥
सर्वलक्षणसंशुद्धां चारुवक्त्रां सुशोभनाम्।
सर्वालङ्कारसम्पूर्णामङ्के स्थाप्य विभावयेत् ॥ ४ ॥
पञ्चमण्डलचक्रेण बुद्धबिम्बविभावनम्।
भावयेत्पूजापदं रम्यं रहस्यं मन्त्रवज्रिणाम् ॥ ५ ॥

इसके बाद सर्वाकाशमहाक्षर रूप राजा, सर्वाभिषेक सर्वज्ञ राजा वज्रधर ने वचनरूपी वज्र का उद्घाटन किया = कहा। महात्मा चाण्डाल की १२ वर्ष की कन्या को एकान्त स्थाल में ले जाकर साधना करनी चाहिए। गोबर, गोमूत्र आदि के सहयोग से चार कोनों वाला मण्डल बनाकर ही उसमें वज्र मण्डल साधनों से साधना करें। ऐसी सर्वलक्षण संशुद्ध सुन्दर मुखमण्डलवाली सुन्दरी जो समग्र अलंकारों से परिपूर्ण हो अपने गोद में स्थापित करके साधना करें। पञ्चमण्डल चक्र के द्वारा बुद्धबिम्ब का ध्यान करना चाहिए और मन्त्र वज्री का उत्तम रहस्य का ध्यान करना चाहिए।

वैरोचनमहाबिम्बं कायवाक्चित्तवज्रिणम्।
ध्यानमन्त्रप्रयोगेण भवेद्बुद्धसमप्रभः॥ ६ ॥

काय, वाक् चित्तवज्री, जो वैरोचनात्मक महाबिम्ब है उसका ध्यान, मन्त्रप्रयोग और पूजा से, वह साधक बुद्ध के समान गुणवाला हो जाता है।

नीलोत्पलदलाकारां रजकस्य महात्मनः ।
कन्यां तु साधयेन्नित्यं वज्रसत्त्वप्रयोगतः ॥ ७ ॥
तदेव विधिसंयोगं कृत्वा कर्म समारभेत् ।
एषो हि सर्वमन्त्राणां समयो दुरतिक्रमः ॥ ८ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव वज्रसत्त्वसमप्रभः ।
सर्वधर्मधरो राजा काममोक्षप्रसाधकः ॥ ९ ॥

महात्मा धोबी की कमल के आकार जैसी अति सुन्दरी कन्या को वज्रसत्त्वों के प्रयोग द्वारा निरन्तर साधना करें। उसे विधिपूर्वक सुशिक्षित करके कर्म का आरम्भ करें। यही सभी मन्त्रों का समय-क्षेष्ठ मन्त्र है जिसका अतिक्रम अन्य मन्त्र नहीं कर सकते। इसके साधना से तत्काल ही साधक वज्रसत्त्व के समान प्रभावशाली हो जाता है। वही धर्मधर, राजा और काममोक्षप्रसाधक भी हो जाता है।

[यहाँ रजक = अक्षोभ्य हैं। वज्रसत्त्व का प्रयोग = वज्रसत्त्व समाधि के द्वारा। वज्रसत्त्व समान = रत्नकेतु के समान। सर्वधर्मधर राजा = अमिताभ। काम मोक्ष प्रसाधक = अमोघसिद्धि].

चारुवक्त्रां विशालाक्षीं नटकन्यां सुशोभनाम् ।
साधयेत् साधको नित्यं वज्रधर्मविभावनैः ॥ १० ॥
स भवेद्वज्रधर्मात्मा दशभूमिप्रतिष्ठितः ।
वाक्समयधरो राजा सर्वाग्रः परमेश्वरः ॥ ११ ॥

वज्रधर्म विभावनापूर्वक 'नट' की कन्या जो सुन्दरी हो विशाल नेत्र वाली एवं सुन्दर मुखमण्डलवाली हो निरन्तर साधक उसकी साधना करें। इस साधना से वह साधक दशभूमियों में प्रतिष्ठित एवं वज्रधर्मात्मा, वाक्समयधर, राजा, सर्वाग्र और परमेश्वर हो जाता है।

[यहाँ 'नट' अमिताभ हैं]

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां कन्यां शूद्रकुलोद्भवाम् ।
साधयेद्वज्रधर्मात्मा इदं गुह्यसमावहम् ॥ १२ ॥
अस्तमिते तु वज्रार्के साधनं तु समारभेत् ।
अरुणोद्गमवेलायां सिध्यते भावनोत्तमैः ॥ १३ ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यों की जो शूद्रकुल में उत्पन्न हुई हो ऐसी कन्या का वज्र धर्मात्मा साधना करें। यही गुह्य समावहन कहलाता है। सूर्य अस्त होते ही साधना प्रारंभ करनी चाहिए, इससे अरुणोदय तक उत्तम भावना युक्त योगी सिद्धि प्राप्त कर ही लेता है।

सर्वालङ्कारसम्पूर्णां गन्धपुष्पविभूषिताम् ।
ध्यात्वा तु वज्रसत्त्वाग्र्यां लघुसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १४ ॥
स भवेत्त्रिकायवरदो बुद्धलक्षणलक्षितः ।
योजनशतविस्तारमवभासं करोत्यसौ ॥ १५ ॥
द्वयेन्द्रिप्रयोगेण सर्वयोगान् समारभेत् ।
एषो हि सर्वसिद्धीनां समयो दुरतिक्रमः ॥ १६ ॥
विण्मूत्रसमयं भक्षेत् यदीच्छेत् सिद्धिवज्रिणः ।
एषो हि सर्वसिद्धीनां समयो दुरतिक्रमः ॥ १७ ॥
विण्मूत्रसमयाद्येन द्वयेन्द्रियप्रयोगतः ।
सिध्यतेऽनुत्तरं तत्त्वं बुद्धबोधिपदं शिवम् ॥ १८ ॥

सर्व अलंकारों से पूर्ण गन्धपुष्पादि से पूरित वज्र सत्त्वाग्री का ध्यान करके तत्काल ही सिद्धि प्राप्त होती है। वह साधक त्रिकायवाद, बुद्धलक्षण लक्षित होकर सौ योजनतक स्वयं ही प्रकाशमान हो जाता है। दो इन्द्रियों के प्रयोगपूर्वक सभी योगों का प्रारंभ करना चाहिए। यही सर्वसिद्धियों का समय है जिसे अतिक्रमित नहीं किया जा सकता। विष्ठामूत्रादि समय का भक्षण करें यदि सिद्धि वज्री की कामना है तो, यही सर्व सिद्धियों का महासमय कहलाता है जो अत्यन्त दुरतिक्रम है। विष्ठामूत्रादि समय योग द्वारा और स्त्री-पुरुष इन्द्रियों के समवायात्मक प्रयोग से अनुत्तर, बुद्धबोधि एवं शिवमय तत्त्वसिद्धि हो जाता है।

इत्याह भगवान् काममोक्षसमयवज्रः ।

अथ भगवान् महासमयवज्रक्रोधं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वतथागतवज्रसन्त्रासनक्रोधं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

ओँ ह्रीः ष्ट्रीः विकृतानन सर्वशत्रून्नाशय स्तम्भय हूँ हूँ फट् फट् स्वाहा ॥

विषरुधिरसंयुक्तं लवणं राजिकान्तथा ।
कण्टकाग्नौ जुहेत् क्रुद्धः कन्यानामपदैः सह ॥ १९ ॥
मध्याह्नेऽर्धरात्रे वा इदं शस्यति सर्वथा ।
त्रिकोणे तु जुहेत् प्राज्ञोऽष्टसहस्त्रं विधानतः ॥ २० ॥
दिनत्रयमिदं कार्यं कन्यानां फलहेतुतः ।
स्तम्भनं भवते तेन त्रिकल्पासंख्यमपि सदा ॥ २१ ॥
बुद्धो धर्मधरो वापि वज्रसत्त्वोऽपि वा यदि ।
अतिक्रमेद्यदि मोहात्मा तदन्तं तस्य जीवितम् ॥ २२ ॥

भगवान् काम मोक्ष समय वज्र ने यही कहा। इसके बाद अब भगवान् ने महासमय वज्रक्रोध नामक समाधि में प्रवेश करके अपने काय, वाक् और चित्त वज्रों से सर्वतथागत वज्र सन्त्रासन क्रोध को उत्पन्न किया। ॐ ह्रीः ष्ट्रीः विकृतानन सर्वशत्रून् नाशय स्तम्भय हूँ हूँ फट् फट् स्वाहा। विषरुधिरों से संयुक्त लवणप्रयुक्त कमल के गट्टों का कण्टकों में जले हुए अग्नि में कन्या के नाम पदों से हवन करें। मध्याह्न अथवा मध्यरात्रि में यह कार्य प्रशस्त माना गया है। त्रिकोणात्मक कुण्ड में प्राज्ञ योगी द्वारा विधान पूर्वक आठ हजार हवन होना चाहिए। कन्याओं के फल के लिए यह कर्म तीन दिन तक करना चाहिए। इस कर्म से स्तम्भन सिद्ध होता है असंख्य कल्प तक या कभी कभी तीन कल्प तक होता है। बुद्ध, धर्मधर या वज्रसत्त्व ही क्यों न हो यदि मोह से इसका अतिक्रमण करता है तो वह उसी समय समाप्त हो जाता है।

चतुर्दश्यां तथाष्टम्यां गृह्याङ्गारं श्मशानतः ।
अभिमन्त्र्य विधानेन दासकः स भवेत् सदा ॥ २३ ॥

चतुर्दशी में, अष्टमी में गुह्यरूप में श्मशान भूमि के अंगारों से अभिमन्त्रित करने से वह हमेशा के लिए दास भाव को प्राप्त होता है ।

रेखां ददाति ध्यात्वा तु मन्त्रज्ञो यस्य कस्यचित् ।
शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा म्रियते नात्र संशयः ॥ २४ ॥

यदि मन्त्रज्ञ जिसका ध्यान करके उसे रेखा में (चित्र बनाकर) दे देता है तो अथवा शत्रु का चित्र बनाकर उसे अभिमन्त्रित करता है तो वह मर जाता है।

मुद्गरं ध्यानयोगेन पातयन् पतितं ध्रुवम् ।
हूँकारं ज्वालसंयुक्तं दीप्तवज्रं प्रभावयेत् ॥ २५ ॥

ध्यान योग से मूँग को अग्नि में या श्मशान के अग्नि में जलाकर ज्वाला युक्त हूँ कार का, जो दीप्तवज्र है का ध्यान करें।

नाशकः सर्वदुष्टानां वज्रपाणिकुलः स्मृतः ।
खटिकाङ्गारादिभिर्लेख्य पुरुषं वाऽथवा स्त्रियम् ॥ २६ ॥
कुठारं पाणौ विभावित्वा ग्रीवां छिन्नां विभावयेत् ।
बुद्धास्त्रिवज्ररत्नाग्राः सर्वसत्त्वहितैषिणः ॥ २७ ॥

सभी दुष्टों का विनाशक वज्रपाणि कुल प्रसिद्ध है। जिसे मारना हो उसे अंगार से चित्र के रूप लिखें चाहे पुरुष या स्त्री जो भी क्यों न हो। कुठार को हाथ में रखकर कटे हुए ग्रीवा की भावना करें।

अनेन हन्यते वापि म्रियते नात्र संशयः ।
कर्मवज्रमहादीप्तं स्फुलिङ्गगहनाकुलम् ॥ २८ ॥
मध्ये वज्र विभावित्वा वारिस्तम्भनमुत्तमम् ।
मण्डले लिख्यमाने तु वाताद्यं यदि जायते ॥ २९ ॥
दंष्ट्रामुद्रां ततो बद्ध्वा दुष्टसत्त्वमनुस्मरेत् ।
बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च निर्मितं वापि यद्भवेत् ॥ ३० ॥
शीर्यते दृष्टमात्रेण न चेन्नाशं समाप्नुयात् ।
बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च ये चान्ये दुष्टजन्तवः ।
त्रासितास्तेन मन्त्रेण म्रियन्ते नात्र संशयः ॥ ३१ ॥

वहाँ पर बुद्ध जो त्रिवज्र रत्नाग्र हैं और सर्वसत्त्व हितैषी हैं वे सभी दुष्टों के नाशक हैं वे ही वज्रपाणिकुल के रूप में प्रसिद्ध हैं। मण्डल के लिखने पर यदि वात आदि की उत्पत्ति होती है तो दाँतों को और मुद्राओं

का बन्धन करके दुष्ट सत्त्वों का अनुस्मरण करना चाहिए। वह बुद्ध और बोधिसत्त्व के द्वारा विनिर्मित भी हो तो भी दृष्टि मात्र से नष्ट हो जाता है। यदि नहीं होता है तो बुद्ध, बोधिसत्त्व और अन्य दुष्ट जन्तु इस मन्त्र से संत्रस्त होकर मर जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं है।

तत्रेदं सर्वतथागतमन्त्ररहस्यहृदयम् ।
ज्ञानसत्त्वप्रयोगेण मध्ये बिम्बं प्रभावयेत् ।
चतुःस्थानेषु मन्त्रज्ञो योषितं स्थापयेत्सदा ॥ ३२ ॥
सर्वालङ्कारसम्पूर्णां सर्व्वलक्षणलक्षिताम् ।
पद्मं प्रसारितं कृत्वा इदं मन्त्रं विभावयेत् ॥ ३३ ॥ ॥ हूँ ॥

यही यहाँ पर सर्वतथागत मन्त्ररहस्य हृदय है। ज्ञान सत्त्व के प्रयोग द्वारा उसके बीच में बिम्ब की भावना करनी चाहिए। चार स्थानों में मन्त्रज्ञ स्त्री को स्थापित करें। सर्वालङ्कार सम्पूर्ण, सर्वलक्षणों से युक्त होकर कमल को प्रसारित करके यह मन्त्र उच्चारित करें ॥ हूँ ॥

पञ्चरश्मिप्रभं दीप्तं भावयेत् योगवज्रिणम् ।
कायवाक्चित्तवज्रेषु पातयन् बोधिमाप्नुयात् ॥ ३४ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव वैरोचनसमप्रभः ।
वज्रसत्त्वो महाराजः संबुद्धकायवज्रधृक् ॥ ३५ ॥

पञ्चरश्मियों से उद्दीप्त योगवज्र का ध्यान करें। काय, वाक् और चित्तवज्रों में गिराने से बोधि प्राप्त होगी ही। उसी क्षण वह साधक वैरोचन के समान हो जाता है। साथ ही वज्रसत्त्व, महाराज, संबुद्ध कायवज्र धारक हो जाता है। यही सर्वसत्त्वोत्पादन कारक नामक समाधि है।

सर्वसत्त्वोत्पादनकरो नाम समाधिः ।
योषितं प्राप्य विधिना चारुवक्त्रां हितैषिणीम् ।
प्रच्छन्ने प्रारभेत् पूजा गुह्यागुह्यं विभक्षयेत् ॥ ३६ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव मञ्जुश्रीतुल्यतेजसः ।
अन्तर्द्धानाधिपः श्रीमान् जाम्बूनदसमप्रभः ॥ ३७ ॥

विधिपूर्वक सुन्दरी और हितैषिणी स्त्री को प्राप्त करके एकान्त स्थान में पूजा का प्रारंभ करें और गुह्य और अगुह्य का संशोधन करें। उसी समय वह

साधक योगी मञ्जुश्री के तरह ही तेजस्वी हो जाता है। अन्तर्धान होने में समर्थ, श्रीमान् रत्नकेतु के समान हो जाता है।

भक्ष्यं वा अथवा विष्ठं मांसं वापि प्रवेशयेत् ।
अभिमन्त्र्य विधानेन भक्ष्यं बुद्धैर्न दृश्यते ॥ ३८ ॥

भोजन के विषय में साधक को जो भी मिले जैसे गोबर हो, माँस हो अथवा अन्य कुछ भी उसे मन्त्रशक्ति से अभिमन्त्रित करके अपने अनुरूप बनाकर विधिपूर्वक ग्रहण करना चाहिए। और इसे अपने को पण्डित मानने वाले विद्वान् नहीं समझ सकते।

इत्याह च ।
विष्ठं संगृह्य विधिना शरावसम्पुटे न्यसेत् ।
शताष्टवारान् सञ्चोद्य बुद्धसूर्यैर्न दृश्यते ॥ ३९ ॥

गोबर को इकट्ठा करके विधिपूर्वक मिट्टी के छोटे बर्तनों में रखने के बाद १०८ बार उन्हें विधिपूर्वक अभिमन्त्रित करने से वह अति उत्तम इच्छित भक्ष्य हो जाता है किन्तु इसे पण्डितमानी नहीं समझ सकते।

श्वानमांसं हयमांसं महामांसं विधानतः ।
गृह्य सम्पुटयोगेन भक्षयंस्तैर्न दृश्यते ॥ ४० ॥

कुत्ते का मांस, घोड़े का मांस और मनुष्यों के मांस को विधिपूर्वक संग्रह करके संपुट योग द्वारा अभिमन्त्रित करके भक्षण करने से वह अदृश्य शक्ति सम्पन्न हो जाता है।

विष्ठेन सह संयुक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४१ ॥
महामांसेन संयुक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४२ ॥
श्वानमांसेन संयुक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४३ ॥
गोमांसेन च संयुक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४४ ॥

गोमय के साथ उक्तमांस को तीन लोहों से वेष्टित करके दो इन्द्रियों के

प्रयोग पूर्वक भक्षण करने से वह देवताओं से भी अदृश्य हो जाता है। मनुष्य मांस को त्रिलोह वेष्टित करके दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक अभिमन्त्रित करके भक्षण करने से सिद्धदेवादि द्वारा भी अदृश्य हो जाता है। उसी प्रकार कुत्ते के मांस को त्रिलोह वेष्टित करके दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक अभिमन्त्रिक करके भक्षण करने से वही देवों से भी अदृश्य हो जाता है। गोमांस को छोटे-छोटे गोल बनाकर त्रिलोह में वेष्टित करके दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक भक्षण करने मात्र से वह देवों से भी अदृश्य हो जाता है।

[अमृत चतुष्टयों से युक्त गोली बनाकर अच्छे वृक्षों के सुन्दर पत्तों में लपेट कर (राहु के) ग्रहण काल में स्पर्श काल से उक्त महिला के योनि में रखकर जब मोक्षकाल हो तक तब रखकर उसके बाद बाहर निकाले और अन्य विधि कर उसे भक्षण करने से ही उत्तम सिद्धि की प्राप्ति होती है]

प्राणकैर्विष्ठसंभूतैर्गुलिकां कारयेद्व्रती ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४५ ॥

गोबर के छोटे गोल बनाकर दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक अभिमन्त्रित कर भक्षण करने से सिद्धों के द्वारा भी अदृश्य हो जाता है।

कर्पूरचन्दनैर्युक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४६ ॥

कपूर चन्दनों की गोली बनाकर पत्तों में लपेटकर दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक विधि से भक्षण करने से सिद्ध देवों द्वारा भी अदृश्य हो जाता है।

रोचनागुरुसंयुक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण भवेद्वज्रमहाबलः ॥ ४७ ॥
कर्पूरकुङ्कुमैर्युक्तां गुलिकां त्रिलोहवेष्टिताम् ।
द्वयेन्द्रियप्रयोगेण सर्वबुद्धैर्न दृश्यते ॥ ४८ ॥

गोरोचन को गोली बनाकर पत्तों में लपेट कर दो इन्द्रिय प्रयोगपूर्वक विधिपूर्व अभिमन्त्रित करके भक्षण करने से वह महाबलशाली हो जाता है। कर्पूर-कुङ्कुम को मिलाकर उपर्युक्त विधि से भक्षण करने से वह अदृश्य शक्ति सम्पन्न हो जाता है देवता भी उसे नहीं देख सकते।

इत्याह च ।

अधिष्ठाय महामुद्रां यस्य कस्यापि वज्रिणः ।
स भवेत् तादृशः श्रीमान् महाबलपराक्रमः ॥ ४९ ॥
योजनकोटि सम्पूर्णमूद्धर्वं वज्रगतिर्भवेत् ।
त्रिसाहस्त्रगतिः श्रीमान् भवेद्बुद्धसमप्रभः ॥ ५० ॥
कामधातुस्थितां कन्यां सुरभोगां कुलव्रताम् ।
रूपधातुस्थिताञ्चापि कामयेत महाबलः ॥ ५१ ॥

ऐसा भी कहा है। महामुद्रा का निष्पादन करके जिस किसी वज्रधारी का ध्यान साधना द्वारा साधक योगी उसी वज्री के समान बल, पराक्रम एवं ऐश्वर्य सम्पन्न हो जाता है। करोड़ों योजन ऊपर की ओर उसकी गति हो जाती है, और त्रिसतयोजन होकर वह बुद्ध के समान हो जाता है। वह बलशाली साधक चाहे तो काम धातु, देवलोक या रूपधातु जहाँ की भी किसी कुलव्रता कन्या को तत्काल ही पा सकता है।

इत्याह भगवान् समयान्तर्द्धानमहावज्रः ।
अथ बुद्धाः प्रहृष्टात्माऽभ्रान्तचित्ता मनीषिणः ।
विस्मयोत्फुल्लनयना इदं घोषमुदीरयन् ॥ ५२ ॥
अहो सुविस्मयमिदमहो गुह्यमहाक्षरम् ।
अहो स्वभावसंशुद्धमहो धर्मं सुनिर्मलम् ॥ इति ॥ ५३ ॥

समयान्तर्ध्यान महावज्र ने ऐसी ही कहा है। इसके बाद अत्यन्त खुश हुए, अभ्रान्तचित्त, मनीषी जो उत्फुल्ल नेत्रों से युक्त थे ने इस प्रकार की घोषणा की। अहो यह तो आश्चर्यजनक है। यह गुह्य महाअक्षर भी आश्चर्यमय है। यह स्वभाव शुद्ध है - आश्चर्यमय है। यह धर्म अत्यन्त निर्मल है, सुविशुद्ध है। इति।

अथ वज्रधरः शास्ता स्त्रष्टा कर्त्ता महाक्षरः ।
शुद्धवज्रो महाधर्मो वज्रघोषमकारयत् ॥ ५४ ॥
सर्ववज्रप्रयोगेण तोषणं बुद्धवज्रिणाम् ।
बुद्धबोधि प्रभेदेन तोषणं वज्रचारिणाम् ॥ ५५ ॥
वज्रलोचनबिम्बाद्यैः उष्णीषाराधनं स्मृतम् ।
क्रोधानामपि तच्छ्रेष्ठं बुद्धवज्रप्रभावनम् ॥ ५६ ॥
विद्याराजाग्रधर्माणां रत्नकेतुविभावनम् ।
विद्याराज्ञीप्रयोगेषु अमितायुर्विभावनम् ॥ ५७ ॥
सर्वकर्मिकमन्त्राणां अमोघज्ञानभावनम् ।
सर्वेषामेव मन्त्राणां वज्रसत्त्वविभावनम् ॥ ५८ ॥
इत्याह च ।

इसके बाद शास्ता, स्त्रष्टा, कर्ता, महाक्षर, शुद्धवज्र, महाधर्म ने यही वज्रघोष किया – सर्ववज्र प्रयोग द्वारा बुद्ध वज्रधारियों का तोषण होता है। और बुद्ध बोधि के भेद से वज्र चारियों का तोषण किया जाता है। वज्रलोचन आदि बिम्बों से उष्णीषों की आराधना होती है। क्रोधवज्रों का भी वही श्रेष्ठ बुद्ध वज्र भाव माना गंया है। विद्याराजाग्र धर्मों का उपासना ही रत्नकेतु का ध्यान है और विद्याराज्ञी प्रयोग से अमिताभ खुश होते हैं। सभी कर्मिक मन्त्रों का अनुष्ठान ही अमोघ सिद्धि की आराधना है। अन्य सभी मन्त्रों का जाप ही वज्र सत्त्वों की भावना है। ऐसा कहा भी है।

यक्षिणीमन्त्रतन्त्राणां यमान्तकस्य कल्पनम् ।
सर्वेषां योगमन्त्राणं सस्तम्भं विप्रचोदनम् ॥ ५६ ॥
इत्याह च भगवान् महासमयवज्रः ।

यक्षिणियों के मन्त्र और तन्त्रों का अनुष्ठान ही यमान्तक की कल्पना या उपासना कहा गया है। सभी योग मन्त्रों का जप-अनुष्ठान से ही बुद्ध वज्री प्रेरित एवं वरदान देने में उद्यत हेते हैं। भगवान् महासमय वज्र ने ऐसा ही कहा भी है।

अनेन ध्यानवज्रेण मन्त्राराधनमण्डलम् ।
साधकानां हितं प्रोक्तं महासमयसाधनम् ॥ ६० ॥

इसी ध्यान वज्र के द्वारा मन्त्रों और मण्डलों की आराधना होती है। इसी से साधकों का हित सम्पन्न होता है और यही महासमय साधन भी है।

अथ वज्रधरः शास्ता सर्वधर्मेश्वरः प्रभुः ।
कायवाक्चित्तसंशुद्धो ज्ञानवज्रमुदीरयत् ॥ ६१ ॥

अब इसके बाद सर्वधर्मेश्वर प्रभु, कायवाक् चित्त संशुद्ध शास्ता ने ज्ञानवज्र का उद्घोष किया।

पर्वताग्रेषु रम्येषु विजनेषु वनेषु च ।
ध्यानवज्रं प्रकुर्वीत जपमन्त्रप्रयोगतः ॥ ६२ ॥

रमणीय पर्वतों के अग्रभागों में विजन वनों में ध्यान वज्र की साधना करनी चाहिए – जपमन्त्रों के प्रयोग पूर्वक।

वज्रसत्त्वादयः सर्वे मन्त्रध्यानप्रचोदिताः ।
कुर्वन्ति चित्रकर्माणि वाक्यवज्रवचो यथा ॥ ६३ ॥
वज्र धर्ममहाबिम्बं पद्मरामसमप्रभम् ।
कायवाक्चित्तमहावज्रं तत्स्थाने कुलकल्पनम् ॥ ६४ ॥
आवेशनविधिं सर्वं कारयन् सिद्ध्यति ध्रुवम् ।
स्तोभस्तम्भं महाबिम्बमार्यभौमं चतुर्थकम् ॥ ६५ ॥
कर्तव्यं सिद्धिवज्रेण एवं सिद्ध्यति शाश्वतम् ।
द्वादशवार्षिकां कन्यां पुरुषं द्वादशाब्दिकम् ॥ ६६ ॥
सर्वलक्षणसम्पूर्णं गृह्यावेशं प्रकल्पयेत् ॥
विधानानि तु सर्वाणि कृत्वा कर्मप्रसाधनम् ।
अन्यथा हास्यमाप्नोति त्रैधातुकेषु जन्तुषु ॥ ६७ ॥

सभी वज्रसत्त्व आदि जो मन्त्र ध्यान आदि से सुप्रेरित थे, वे निश्चय ही विचित्र कर्म करते हैं जैसा कि वाक्य वज्र ने कहा। वज्रधर्म महाबिम्ब, पद्मराग समप्रभ और काय-वाक् चित्तमहावज्र को उनके ही स्थान में कुल की कल्पना की जाती है। और वहीं पर आवेशात्मक विधि द्वारा ध्यान करने से शीघ्र सिद्धि होती है। स्तोभ, स्तम्भ, महाबिम्ब और चौथा आर्यभौम साधना है।

सिद्धिवज्र के साधना और इसके ध्यान से शाश्वत काल तक यह सिद्धि रहती है। १२ वर्ष की कन्या और १२ वर्ष के पुरुष दोनों को, जो सर्वलक्षणों से पूर्ण हो उन्हें घर के अन्दर गुप्तरूप से रखना चाहिए। उसके बाद सभी मन्त्रों के विधिपूर्वक प्रयोग द्वारा कर्म करने चाहिए। अन्यथा वह साधक हास्यपात्र हो जाता है तीनों धातुओं के प्राणियों के बीच में, इसलिए सभी कर्म यथावत् किए जाने चाहिए ।

तत्रेमानि हृदयमन्त्राक्षरपदानि

हूँ हः आः ऐः

खधातुमपि निश्चेष्टं सर्वकल्पविवर्जितम् ।

आवेशयति विधिना वज्रसत्त्वमप्रि स्वयम् ॥ ६८ ॥

हूँकारे वज्रसत्त्वात्मा हःकारे कायवज्रिणः ।

आःकारे धर्मधरो राजा इदं गुह्यपदं दृढ़म् ॥ ६९ ॥

ऐःकारं स्तोभनं प्रोक्तं भ्रमणं कम्पनं स्मृतम् ।

एषो हि सर्वस्तोभानां रहस्योऽयं प्रगीयते ॥ ७० ॥

इत्याह च ।

यहाँ वे ही हृदयमन्त्राक्षरपद हैं - हूँ । हः । आः । ऐः । यहाँ स्वयं ही वज्रसत्त्व अपने मन्त्रगत प्रभाव से समग्र आकाश धातु को भी निश्चेष्ट तथा समग्र कल्पों से विवर्जित कर देते हैं। हूँ कार में वज्रसत्त्वात्मा रहते हैं। हः कार कायवज्र का है। आः कार में धर्मवज्र हैं। यह दृढ गुह्यपद ही राजा कहे गए हैं। ऐं कार ही स्तोभन है, भ्रमण कम्पन कहा गया है। यही सभी स्तोभों का रहस्य है ऐसा कहा गया है। ऐसा कहा भी है।

[हृदय मन्त्राक्षर पद ही हृदय हैं क्योंकि हृदय से उत्पन्न होने के कारण मन्त्र ही रहस्यमय हैं।]

हस्तमात्रं द्विहस्तं वा यावद्धस्ताष्टपञ्चकम् ।

उत्तिष्ठन्ति भयत्रस्ता वज्रराजप्रचोदिताः ॥

तथैव सर्वं यथापूर्वमिदं गुह्यसमावहम् ॥ इति ॥ ७१ ॥

एक हाथ लम्बा या दो हाथ लम्बा अथवा आठ हाथ या पाँच अथवा तेरह हाथों का एक मूर्ति निर्माण करके उसकी आराधना करनी चाहिए। वह

मूर्ति अक्षोभ्य की होती है और उनकी प्रेरणा द्वारा सर्वसत्त्व भयत्रस्त होकर खड़े हो जाते हैं। और इसी प्रकार सभी यथापूर्व गुह्यसमावह कहा गया है ॥ इति।

अथ वज्रधरो राजा सर्वतथागताधिपः ।
त्रिकायपदसंघोषमिदं घोषमुदीरयत् ॥ ७२ ॥

इसके बाद भगवान् वज्रधर, राजा, सर्वतथागताधिप ने त्रिकायपदघोषात्मक यह घोषणा की।

अनेकाग्रगतेनापि इदं कार्यं दृढ़व्रतैः ।
कर्तव्यं वान्ययोगेन सर्वदुष्टविदारणम् ॥ ७३ ॥
शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा चिताङ्गारतुषादिभिः ।
नग्नो मुक्तशिखो भूत्वा त्रैलोक्यमपि नाशयेत् ॥ ७४ ॥
शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा श्मशानचितिभस्मना ।
सहस्राष्टशतेनापि म्रियते नात्र संशयः ॥ ७५ ॥
गोमांसहयमांसेन श्वानमांसेन चित्रिणा ।
त्रिकोणमण्डले कार्यं ध्रुवं वज्रोऽपि नश्यति ॥ ७६ ॥
महामांसेन सर्वेषां नाशनं वज्रजं स्मृतम् ।
एषो हि सर्वक्रूराणां नाशको दारुणः स्मृतः ॥ ७७ ॥
शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा विण्मूत्रेणाग्रधर्मिणा ।
कण्टकाग्नौ जुहेत् क्रुद्धो ध्रुवं बुद्धोऽपि नश्यति ॥ ७८ ॥
इत्याह च ।

अनेक साधनाओं में अग्र हुए को भी दृढव्रत होकर यह कार्य करना चाहिए। अथवा अन्य किसी योग से भी करना चाहिए। सर्वदुष्टों का निवारण भी इसी से किया जाता है। शत्रुओं के चित्र चिता के अंगारों से बनाकर स्वयं शिखा खोलकर, नग्न होकर उस मन्त्र के प्रयोग से त्रैलोक्य का ही नाश कर सकता है तो उस शत्रु की बात ही क्या है। शत्रु की प्रतिकृति बनाकर वह भी चिता के भस्म द्वारा उपर्युक्त मन्त्र को एक हजार एक सौ आठ बार जाप करने पर वह मर जाता है इसमें सन्देह नहीं है। गोमांस, घोड़े का मांस और कुत्ते के मांस से भी उस शत्रु का चित्र बनाकर त्रिकोण मण्डल में रखकर उसपर मन्त्र

का प्रयोग करने से यहाँ तक की वज्र भी नष्ट हो जाता है। मनुष्य मांस से सबका नाश ही वज्रोत्पन्न कहा गया है। यही सभी क्रूर सत्त्वों का दारुण नाश कहा गया है। शत्रुओं के चित्र बनाकर वह भी विष्ठामूत्र आदि से, काँटों से जलते हुए अग्नि में उसे डाल देने से निश्चय ही स्वयं बुद्ध भी हों तो जल जाते हैं औरों की बात ही क्या है। ऐसा भी कहा है।

शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा नदीस्त्रोतोगयोरपि ।
तिलमात्रमपि सर्वाङ्गं कण्टकैर्विषसम्भवैः ।
पूरयेच्चोदनपदैर्ध्रुवं बुद्धोऽपि नश्यति ॥ ७६ ॥
इत्याह च ।

शत्रु की चित्र बनाकर नदी के स्त्रोतों में समग्र शरीर में पैर से लेकर कण्ठ तक विष का प्रयोग करके मन्त्र पदों से उसे पूरित करने से शत्रु नष्ट हो जाता है। यहाँ तक कि स्वयं बुद्ध भी नष्ट हो जाते हैं। ऐसी भी कहा है।

राजिकां लवणं तैलं विषं धत्तूरकं तथा ।
मारणं सर्वबुद्धानां इदं श्रेष्ठतमं स्मृतम् ॥ ८० ॥
अङ्गारार्द्रगतं वस्त्रं प्रावृत्य क्रोधचेतसा ।
लिङ्गं पादेन चाक्रम्य राक्षसैर्गृह्यते ध्रुवम् ॥ ८१ ॥
प्रतिकृतिमस्थिचूर्णेन विषेण रुधिरेण च ।
कृत्वा तु गृह्यते शीघ्रं वज्रसत्त्वोऽपि दारुणः ॥ ८२ ॥
लिङ्गराजिकसंयुक्तं विण्मूत्रेणापि पूरितम् ।
पादाक्रान्तगतं कृत्वा महामेघेन गृह्यते ॥ ८३ ॥
इत्याह च ।

पुष्प पराग, नमक, तेल, विष और धत्तूर को मिलाकर मारण के लिए प्रयोग किया जाता है यही श्रेष्ठ मारण कहलाता है। अंगारों से वस्त्र को भिगोकर क्रोधयुक्त चित्र से अभिमन्त्रित कर उसके चित्र को पैर से कुचलने पर वह राक्षसों से निगृहीत हो जाता है। उसके चित्र को विष के चूर्ण से या रक्त से भिगो कर वह शीघ्र ही वशीभूत हो जाता है भले ही दारुण वज्र सत्त्व ही क्यों न हो। लिङ्ग = अर्थात् चित्र को पुष्प पराग एवं गोमय आदि से पूरित कर पाव से कुचलने से वह महामेघ द्वारा गृहीत हो जाता है। ऐसा कहा भी है।

तत्रेदं सर्वतथागतवज्रमहाक्रोधसमयहृदयम् ।

नमः समन्तकायवाक्चित्तवज्राणाम् । ओं हूलू हूलू तिष्ठ तिष्ठ बन्ध बन्ध हन हन दह दह गर्ज गर्ज विस्फोटय विस्फोटय सर्वविघ्नविनायकान्महागणपतिजीविताान्तकराय हूँ फट् ॥

होमं वाऽप्यंथवा ध्यानं कायवाक्चित्तभेदनम् ।
कर्तव्यं नान्यचित्तेन इदं मारणमुत्तमम् ॥ ८४ ॥

वहाँ पर यह सर्वतथागत वज्रमहाक्रोध समय हृदय है। नमः समन्तकायवाक् चित्त वज्राणाम्। ऊँ हूलू हूलू ------------------- हूँ फट् । होम अथवा ध्यान जो काय वाक् चित्तों का भेदनात्मक है एक चित्त होकर करना चाहिए यही उत्तम मारण कहा गया है।

वज्रसत्त्वं महाक्रूरं विकटोत्कटभीषणम् ।
कुठारमुद्गरहस्तं ध्यात्वा ध्यानं प्रकल्पयेत् ॥ ८५ ॥

महाक्रूर विकट, उत्कट, भीषण, कुठार एवं मुद्गरधारण करने वाले वज्रसत्त्व का ध्यान करके ही ध्यान में लगना चाहिए।

तत्रेदं महाक्रूरक्रोधसमयम् ॥

श्वधातुं परिपूर्णं तु सर्वबुद्धैः प्रभावयेत् ।
घातितं तेन दुष्टेन ध्यात्वा म्रियेत तत्क्षणात् ॥ ८६ ॥

वहाँ पर यह महाक्रूर क्रोधसमय है। [यहाँ महाक्रोध = अक्षोभ्य हैं] समग्र आकाश धातु सभी बुद्धों द्वारा परिपूर्ण है ऐसी भावना करनी चाहिए। इससे दुष्टों द्वारा घातित सत्त्व का उद्धार होगा और दुष्ट स्वयं नष्ट हो जायेगा।

[यहाँ दुष्ट - साध्य - गदा है उससे प्रहारकर के कुल्हाडी से काटकर मारा हुआ ध्यान करके अतीत अनागत कर्म करने से दुष्ट नष्ट हो जाता है]

बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च परिपूर्णं विभावयेत् ।
घातितं सर्वदुष्टेन म्रियते वज्रधरः स्वयम् ॥ ८७ ॥
चिन्तयेत्पुरतो मन्त्री रिपुं बुद्धाएकारिणम् ।
भीतं भयाकुलं चिन्तेत् म्रियते नात्र संशयः ॥ ८८ ॥
राक्षसैर्विविधैः क्रूरैः प्रचण्डैः क्रोधदारुणैः ।
त्रासितं भावयेत्तेन म्रियते वज्रधरः स्वयम् ॥ ८९ ॥

उलूकैः काकगृध्रैश्च श्रृगालैर्दीर्घतुण्डकैः ।
भक्षितं भावयंस्तेन ध्रुवं बुद्धोऽपि नश्यति ।
कृष्णसर्पं महाक्रूरं भयस्यापि भयप्रदम् ॥ ६० ॥

बुद्ध और बोधिसत्त्व से समग्र आकाश ढका हुआ है ऐसी भावना करने पर समग्र दुष्ट स्वतः नष्ट हो जाते हैं चाहे जितने भी बलशाली ही क्यों न हो। मन्त्रज्ञ साधक अपने सामने बुद्ध का अपकार करने वाले शत्रु का चिन्तन करके फिर उसे भयाकुल है ऐसी भावना करने से वह मर जाता है। उस शत्रु को भिन्न भिन्न क्रूर राक्षसों के द्वारा और भयङ्कर क्रोधित समूहों से त्रसित है ऐसी भावना से वह तत्काल ही नष्ट हो जाता है। उसे उल्लू, कौवे, गिद्ध, सियार और अन्य भयंकर जानवरों द्वारा मारा हुआ है ऐसी भावना करने से तत्काल नष्ट हो जाता है। और काला सर्प जो अत्यन्त भयङ्कर है उससे आक्रमण किया है ऐसी भावना भी करनी चाहिए।

ध्यात्वा विषाग्रसमयं ललाटे तं विशिष्यते ।
भक्षितं तेन सर्पेण ध्रुवं बुद्धोऽपि नश्यति ॥ ६१ ॥
दशदिक्सर्वसत्त्वानामीते श्चोपद्रवस्य वा ।
निपातनं रिपवे श्रेष्ठमिदं चोदनमुत्तमम् ॥ ६२ ॥
मुद्गरेण प्रचण्डेन उरसि ताडयेद्व्रती ।
नश्यति जीविताच्छक्रः वज्रधर्मवचो यथा ॥ ६३ ॥
स्फालनं कुट्टनं चिन्तेत् कुठाराद्याद्धि वज्रिणः ।
म्रियते त्रिकायवरदो वज्रसत्त्वोपि दारुणः ॥ ६४ ॥
रक्षाद्यानि तु मन्त्राणि देवतानि च कीलयेत् ।
एषो हि मारणाग्राग्रः समयो दुरतिक्रमः ॥ ६५ ॥
स्कन्धवज्रेण यावन्तः सत्त्वास्तिष्ठन्तिमण्डले ।
द्योतनात्मगतां चिन्तेदेवं तुष्यन्ति नान्यथा ॥ ६६ ॥
बुद्धो वज्रधरः शास्ता वज्रधर्मोऽपि चक्रिणः ।
म्रियते व्याड़योगेन चित्तवज्रवचो यथा ॥ ६७ ॥

भयङ्कर विष से ग्रस्त और ललाट प्रदेश में विशेष करके सर्प के द्वारा डसा जाता हुआ शत्रु का चिन्तन करने वे वह तत्काल नष्ट हो जाता है। दशों

दिशाओं में सभी प्राणियों के द्वारा विघ्न और उपद्रव है ऐसी भावना से शत्रु का नाश सहज रूप से हो जाता है। व्रतधारी भयङ्कर मुद्‌गर से उस शत्रु के छाति में तांडव करे इससे वह तत्काल ही नष्ट हो जाता है। जैसा कि वज्रधर्म ने भी कहा है। पटकना, पिटना, और कुठार से उसे काट डालना ऐसी भावना से वह तत्काल ही नष्ट हो जाता है। जितने भी रक्षमन्त्र हैं और अन्य देवताओं के आराधना विधि है इन सभी के प्रयोग से शत्रुओं का कीलन होता है यही मारण प्रयोगों में उत्तम मारण प्रयोग है। इसका अतिक्रमण नहीं हो सकता। इस महामण्डल में जितने भी सत्त्व हैं उनके कल्याण के लिए स्कन्धवज्र का ध्यान करना चाहिए। इससे समग्र तथागत दृष्ट होते हैं। जितने भी समर्थ शाली बुद्ध, वज्रधर आदि है, जो, चक्रधारी भी हैं वे भी इस योग के प्रयोग से वशवर्ती हो जाते हैं इस व्याड योग से, जैसा कि चित्तवज्र ने कहा भी है।

इत्याह भगवान् महाक्रूरसमयवज्रक्रोधः ।
अथ वज्रधरो राजा सर्वाकाशो महामुनिः ॥
सर्वाभिषेकसम्बुद्धो ज्ञानवज्रमुदीरयत् ॥ ९८ ॥
अहो स्वभावसंशुद्धं वज्रयानमनुत्तमम् ॥
अनुत्पन्नेषु धर्मेषु उत्पत्तिः कथिता जिनैः ॥ ९९ ॥

भगवान् महाक्रूर समय वज्र क्रोध ने ऐसा कहा है। इसके बाद भगवान् वज्रधर, राजा, सर्वाकाश, महामुनि, सर्वाभिषेकसम्बुद्ध ने ज्ञान वज्र का उदान किया। आश्चर्य है यह स्वभाव से शुद्ध, अनुत्तर वज्रयान क्योंकि इसमें अनुत्पन्न धर्मों में बुद्धों ने उत्पत्ति कहा है।

तत्रेदं क्षुद्रकर्मरहस्यम् ।
खटिकाङ्गारेण लिखेत्सर्पं विकृतं तु भयप्रदम् ।
कृष्णज्वालाकुलं क्रुद्धं द्विजिह्वं दंष्ट्रमालिनम् ॥ १०० ॥

यहाँ पर यही क्षुद्र कर्मों का रहस्य है। श्मशान के अंगार से भयप्रद विकृत सर्प का चित्र लिखे। वह भी काले ज्वालाओं से घिरा हुआ हो, क्रुद्ध, दो जीभ वाला तथा द्रष्टाओं से युक्त होना चाहिए।

तत्रेदं क्रूरनागचोदनहृदयम्। ॥ खँ ॥

वक्त्रमध्यगतं चिन्तेद्विषं हालाहलप्रभम् ।
तत्रेदं सर्वविषाकर्षणहृदयम् ॥ ह्रीः ॥
त्रैधातुकस्थितं सर्वं विषं विविधसम्भवम् ।
हृतं तु भावयेत्तेन पतमानं विचिन्तयेत् ॥ १०१ ॥
स भवेत्तत्क्षणादेव विषोदधिसुदारुणः ।
स्पृष्टमात्रे जगत्सर्वं नाशयेन्नात्र संशयः ॥ १०२ ॥
इत्याह च ।

यही क्रूर नाग को प्रेरित करने का मन्त्र है। ॥ खँ ॥ उस सर्प के मुख में भयंकर हालाहल के प्रभाव से युक्त है ऐसी भावना करनी चाहिए। यहाँ पर यही सर्वविषाकर्षण हृदय है। ॥ ह्रीः ॥ तीनों धातुओं में स्थित जितना भी विष है वह सभी विष यहाँ पर लाया हुआ है और यहाँ गिर रहा है ऐसी भावना करनी चाहिए। वह योगी उसी समय महान् विष का समुद्र जैसा हो जाता है उसके स्पर्श करने मात्र से जो चाहे वह नष्ट हो जाता है। ऐसा कहा भी है।

मण्डूकवृश्चिकादीनि सर्पाणि विविधानि च ।
कर्तव्यानि विधानेन यागोत्पत्तिकलक्षणैः ॥ १०३ ॥

मण्डूक, वृश्चिक, भयङ्कर सर्प आदि को विधिपूर्वक याग द्वारा उत्पत्ति कराना चाहिए ।

तत्रेदं सर्वविषमहासंक्रमणहृदयम् । ॥ ओं ॥
दुष्टवज्रविषादीनि ये चान्ये विषदारुणाः ।
आकृष्य ज्ञानचक्रेण प्रेरणं खवज्रमण्डले ॥ १०४ ॥

यहाँ पर सर्वविषमहासंक्रमण हृदय यही है। ॥ ओं ॥ जितने भी दुष्टवज्र विषादि हैं, और जो भी भयङ्कर विष हैं, उन्हें ज्ञान चक्र से आकृष्ट करके प्रेरित करना चाहिए – खवज्रमण्डल में ।

इत्याह भगवान् महाविषसमयवज्रः ।
तत्रेदं विषचिकित्सनवज्रहृदयम् । ॥ हूँ ॥
हृदये तं महावज्रं सितवर्णं विचिन्तयेत् ।
रश्मिमेघं महादीप्तं चन्द्रांशुमिव निर्मलम् ॥ १०५ ॥
चतुः स्थानप्रयोगेण संहरन् तत्र तिष्ठते ।
द्वित्रिवारान् प्रभावित्वा छेदयन्तं विचिन्तयेत् ॥ १०६ ॥

ऐसा महाविष समयवज्र भगवान् ने कहा है। यहाँ पर यही विषचिकित्सनवज्र हृदय है। ॥ हूँ ॥ हृदय में उस महावज्र रूप श्वेतवर्णयुक्त, महामेघ, महादीप्त, चन्द्रकिरणों के तरह निर्मल वज्रधर की भावना करें। चार स्थानों में प्रयोगपूर्वक संहार करने से और दो तीन बार भावना करके उसे (शत्रु को) काटते हुए का चिन्तन करें।

खधातुं विषसम्पूर्णं निर्विषं कुरुते क्षणात् ।
इत्याह च ।
तत्रेदं सर्वविषाकर्षणहृदयम् । ॥ आः ॥
गण्डपिटकलूताश्च ये चान्ये व्याधयः स्मृताः ।
नश्यन्ति ध्यानमात्रेण वज्रपाणिवचो यथा ॥ १०७ ॥
अष्टपत्रं महाप शशाङ्कमिव निर्मलम् ।
तत्र मध्यगतं चिन्तेत्पञ्चरश्मिप्रपूरितम् ॥ १०८ ॥
संहरेत्कृष्णसमयं चोदने सितसन्निभम् ।
इदं ध्यानपदं गुह्यं रहस्यं ज्ञाननिर्मलम् ॥ इति ॥ १०९ ॥

समग्र आकाशधातु जो विषपूर्ण है वह तत्काल ही निर्विष हो जाता है। ऐसा कहा भी है। वहाँ पर यह सर्वविषाकर्षण हृदय है। ॥ आः ॥ गण्ड, पीटक-फोड़े-फुन्सियाँ, खुजली आदि जितने भी व्याधियाँ हैं ध्यान मात्र से वे सब नष्ट हो जाते हैं जैसा वज्रपाणि ने कहा है। आठ पत्रों वाला महान् कमल जो चन्द्रमा के तरह निर्मल है, उसके बीच में स्थित तेजों से पूरित वज्रतत्त्व का ध्यान करना चाहिए। कृष्ण पक्ष में उसका संहार किया जाना चाहिए। जो शुक्ल रश्मियों से प्रभावित हो। यह ध्यान पद अति गुह्य है, रहस्यमय है और ज्ञाननिर्मल भी है। इति

तत्रेमानि बाह्याध्यात्मिकव्याधिचिकित्सावज्रहृदयमन्त्राक्षरपदानि ।
॥ जिनजिक् ॥ आरोलिक् । वज्रधृक् ॥
यदेवाक्षरपदमिष्टं भवेद्भक्तिगुणावहम् ।
भावयेत्तादृशं व्याधिं विश्ववज्रप्रचोदनैः ॥ ११० ॥
वानराकारसमयमथवा श्वानसम्भवम् ।
स्वकायवाक्चित्तपदे निश्चरन्तं विचिन्तयेत् ॥ १११ ॥
चक्रं वाऽप्यथवा वज्रं ध्यात्वा वज्रपदे स्थितः ।
कायवाक्चित्तसमयं चूर्णितं तेन भावयेत् ॥ ११२ ॥
ततः प्रभृति संबुद्धा बोधिसत्त्वा महायशाः ।
अधिष्ठानपदं रम्यं ददन्ति हृष्टचक्षुषः ॥ ११३ ॥

यहाँ पर निम्नलिखित वे बाह्याध्यात्मिक-व्याधि चिकित्सा वज्रहृदयमन्त्राक्षर पद हैं। ॥ जिनजिक् । आरोलिक् । वज्रधृक् ॥ जो भी अक्षरपद अभिष्ट है उसे भक्ति के गुण से संयुक्त करके उसी प्रकार के कर्म के लिए ध्यान करे जिसमें विश्ववज्र की भी प्रेरणा रहती ही है। वानरों के आकार अथवा कुत्तों के आकार से समुत्पन्न चित्रों के अपने कायवाक्चित्त पदों में रहते हुए का चिन्तन करे। वज्रपद में स्थित होकर चक्र अथवा वज्रपद का ध्यान करते हुए काय वाक् चित्त समय को उससे चूर्णित है ऐसी भावना करें। उस समय से संबुद्ध, बोधिसत्त्व महाशय आदि अत्यन्त उत्तम अधिष्ठान पद देते हैं उस साधको अत्यन्त खुश होकर।

इत्याह च ।
स्वकायचित्तवज्रेषु बुद्धमेघान् विचिन्तयेत् ।
वज्ररागमहामेघं भावयेद्व्याधिमोक्षणम् ॥ इति ॥ ११४ ॥
दशदिक्सर्वबुद्धानां वज्रसत्त्वसुधीमताम् ।
क्रुद्धो भावयतस्तस्य मारणं पारमार्थिकम् ॥ ११५ ॥
अनेन ध्यानमात्रेण कर्मजं वापि यत्स्मृतम् ।
शताष्टजपयोगेन सप्तदिनैर्विनश्यति ॥ ११६ ॥
अथवा स्वमन्त्रराजेन वज्रध्यानविधिः स्मृतः ।
एषो हि सर्वव्याधीनां समयो दुरतिक्रमः ॥ ११७ ॥

अथ वज्रधरो राजा ज्ञानाङ्कुशमहाद्युतिः ।
काममोक्षमहावज्र इदं वचनमब्रवीत् ॥ ११८ ॥
स्वप्नोपमेषु धर्मेषु अनुत्पादस्वभाविषु ।
स्वभावशुद्धतत्त्वेषु भ्रान्तिवज्रः प्रगीयते ॥ ११९ ॥
पश्यन्ति साधका नित्यं जपध्यानार्थतत्पराः ।
बुद्धांश्च बोधिसत्त्वांश्च द्विधाभेदेन दर्शनम् ॥ १२० ॥

अपने काय चित्त वज्रों में बुद्ध मेघों का चिन्तन करें। व्याधि मोक्षण के लिए वज्रराग महामेघ का ध्यान करना चाहिए। दशों दिशाओं में अवस्थित सभी बुद्धों का और जो भी वज्रसत्त्व श्रीमान् हैं उन सभी का क्रुद्ध होकर ध्यान करने से पारमार्थिक मारण सिद्ध हो जाता है। इस ध्यान मात्र से जो कुछ कर्म से समुत्पन्न पदार्थ वासना फल है उसे १०८ जाप के द्वारा समाप्त किया जा सकता है। अथवा स्वमन्त्र राज द्वारा वज्र ध्यान विधि के द्वारा जाप करने से सारी इच्छा पूर्ण होती है। यही सभी व्याधियों का दुरतिक्रम समय है। इसके बाद वज्रधर राजा, जो ज्ञानाङ्कुश महासमाधि द्युति से युक्त हैं, और काम मोक्ष महावज्र भी हैं, उन्होंने यह वचन कहा। स्वप्नोपमधर्मों में, जो अनुत्पाद स्वभाव से संयुक्त हैं, स्वभाव शुद्धतत्त्वों में वे ही भ्रान्तिवज्र के नाम से प्रसिद्ध हैं। जप और ध्यान समाधि में संलग्न साधक नित्य ही बुद्ध, बोधिसत्त्व-महासत्त्व आदि दो भेदों से युक्त होकर दर्शन प्राप्त करते रहते हैं ।

तत्रेदं महास्वप्नसमयपदम् ।
बोधिज्ञानाग्रसम्प्राप्तं पश्यति ज्ञानसुप्रभम् ।
बुद्धसम्भोगकायं वा आत्मानं लघु पश्यति ॥ १२१ ॥
त्रैधातुकमहासत्त्वैः पूज्यमानं स पश्यति ।
बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च पञ्चकामगुणैरपि ॥
पूजितं पश्यते बिम्बं महाज्ञानसमप्रभम् ॥ १२२ ॥
वज्रसत्त्वं महाबिम्बं वज्रधर्म महाशयम् ।
स्वबिम्बं पश्यते स्वप्ने गुह्यवज्रमहायशाः ॥ १२३ ॥
प्रणमन्ति महाबुद्धा बोधिसत्त्वाश्च वज्रिणः ।
द्रक्ष्यते ईदृशं स्वप्नं कायवाक्चित्तसिद्धिदम् ॥ १२४ ॥

सर्वालङ्कारसम्पूर्णां सुरकन्यां मनोरमाम् ।
दारकं दारिकां पश्यन् स सिद्धिमधिगच्छति ॥ १२५ ॥
दशदिक्सर्वबुद्धानां क्षेत्रस्थं पश्यति ध्रुवम् ।
ददन्ति हृष्टचित्तात्मा धर्मगञ्जं मनोरमम् ॥ १२६ ॥
धर्मचक्रगतं कायं सर्वबुद्धैः परिवृतम् ।
पश्यते योगसमये ध्यानवज्रप्रतिष्ठितः ॥ १२७ ॥
आरामोद्यानविविधान् सुरकन्याद्यलङ्कृतान् ।
पश्यति ध्यानसमये सर्वबुद्धैरधिष्ठितान् ॥ १२८ ॥
बुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च अभिषिक्तं स पश्यति ।
विद्याधरमहाराजैः पूज्यमानं स पश्यति ॥ १२९ ॥
इत्याह च ॥

यहाँ पर यह महास्वप्न समय पद निम्नलिखित है। वह साधक स्वप्न में बोधिज्ञानाग्रसम्प्राप्ति को, जो ज्ञान सुप्रभ है तथा बुद्ध सम्भोग काय को तत्काल ही आत्मा को भी देखता है। स्वप्न में त्रैधातुक महासत्त्वों से अपने को पूजित होता हुआ देखता है और बुद्ध-बोधिसत्त्व तथा पञ्चकामगुणों से पूजित होता है और महाज्ञानसमान प्रभा युक्त बिम्ब का भी साक्षात्कार करता है। वज्रसत्त्व, महाबिम्ब, वज्रधर्म, महाशय और स्वबिम्ब को भी स्वयं गुह्यवज्र महाशय होकर देखता है। और गुह्यवज्र महाशय, महाबुद्ध, बोधिसत्त्व, वज्री, आदि इसे प्रणाम भी करते हैं साथ ही इस प्रकार का स्वप्न तभी देखे जाते हैं जब काय वाक् और चित्त सिद्ध होते हैं। सर्व अलंकारों से पूर्ण मनोरम, सर्वालंकार पूर्ण सुरकन्या को दारक = बालक और दारिका बालिका के रूप में देखते हुए वह सिद्धि प्राप्त करता है। दोनों दिशाओं में सर्वबुद्धों के क्षेत्रों को निश्चय ही देखता है। और वे दृष्ट चित्त महात्मा उसे मनोरम धर्म धातु प्रदान करते हैं। वह धर्मचक्र में स्थित अपने को देखता है जिसे बुद्धों ने घेरा हुआ है। और योग के समय में ध्यानवज्र में प्रतिष्ठित होकर देखता है। ध्यान में वह बड़े अच्छे वगैंचे, विभिन्न अलंकारों से अलंकृत सुरकन्याओं को सर्वबुद्धों से अधिष्ठित अवस्था में देखता है। बुद्धों और बोधिसत्त्वों से अपने को अभिषिक्त वह देखता है और विद्याधर महाराजाओं से अपने आपको पूजित भी देखता है।

विविधान् वज्रसम्भूतान् स्वप्नान् पश्यति निर्मलान् ।
सिध्यतेऽनुत्तरं तस्य कायवाक्चित्तवज्रजम् ॥ १३० ॥
चण्डालश्वानयोगादीन् पश्यति यदि वज्रधीः ।
सिध्यते चित्तनिलयं वज्रसत्त्वस्य धीमतः ॥ १३१ ॥

वह स्वप्न में विभिन्न वज्रों से समुत्पन्न, निर्मल स्वप्नों को देखता है जिससे कायवाक्चित्त वज्रों का अनुत्तर योग सिद्ध हो जाता है। यदि वह वज्रधी चण्डाल श्वान आदि योगों को देखता है तो ऐसे वज्रसत्त्व जो बुद्धिमान है उसका चित्त निलय सिद्ध हो जाता है।

तत्रेदं स्वप्नविचारणसमयहृदयम् ।
स्वचित्तं चित्तनिध्यप्तौ सर्वधर्माः प्रतिष्ठिताः ।
खवज्रस्था ह्यमी धर्मा न धर्मा न च धर्मता ॥ १३२ ॥

वहाँ यह स्वप्न विचारण समय हृदय कहा गया है। अपना चित्त अपने ही चित्त गह्वर में है जहाँ सभी धर्म प्रतिष्ठित हैं। आकाशवज्र में स्थित वे सभी धर्म न धर्म हैं और न ही इनमें धर्मता ही है।

अथ भगवन्तः सर्वतथागता आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ताः सर्वतथागतकायवाक्चित्तसंशयच्छेत्तारं वज्रसत्त्वं पपच्छुः । किमिदं भगवन् -

निःस्वभावेषु धर्मेषु धर्मतत्त्वमुदाहृतम् ।
अहो विस्मयसम्भूतमाकाशाकाशभावनम् ॥ इति ॥ १३३ ॥

अब इसके बाद भगवान् तथागत गणों ने आश्चर्यान्वित एवं अद्भुत अवस्था को प्राप्त होकर सर्वतथागत - कायवाक् चित्त संशयों के छेत्ता भगवान् वज्रसत्त्व से पूछा। भगवन् यह क्या है? निःस्वभाव धर्मों में धर्मतत्त्व की व्याख्या की गई। यह आश्चर्य स्वरूप हुआ है क्योंकि आकाश में आकाश की भावना या आकाश का आकाश में होना जैसा है। इति ।

अथ भगवान् कायवाक्चित्तवज्रपाणिस्तथागतः सर्वतथागतानेवमाह । भगवन्तः सर्वतथागता आकाशं न केनचिद्धर्मेण संयुक्तं नाप्यसंयुक्तम् न चाकाशस्यैवं भवति । सर्वगतोऽयं सर्वत्रानुदर्शी च । एवमेव भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वधर्माः स्वप्नाः स्वप्नसमयसम्भूताश्चानुगन्तव्याः । तद्यथापि नाम भगवन्तः

सर्वतथागता आकाशमनिरूप्यमनिदर्शनमप्रतिपाद्यम्। एवमेव भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वधर्मा अनुगन्तव्याः ।

तद्यथापि नाम भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वधर्मकायवाक्चित्तवज्रपदसमयं सर्वत्रानुगतमेकस्वभावं यदुत चित्तस्वभावम्। यश्च कायवाक्चित्तधातुराकाशधातुश्चाद्वयमेतदद्वैधीकरम् । तद्यथापि नाम भगवन्तः सर्वतथागता आकाशधातुस्थिताः सर्वधर्माः, स चाकाशधातुर्न कामधातुस्थितो न रूपधातुस्थितो नारूपधातुस्थितः । यश्च धर्मधातुस्त्रैधातुके न स्थितः तस्योत्पादो नास्ति, यस्योत्पादो नास्ति नासौ केनचित् धर्मेण सम्भाव्यते। तस्मात्तर्हि भगवन्तः निःस्वभावाः सर्वधर्मा इति। तद्यथापि नाम भगवन्तः सर्वतथागता बोधिचित्तं सर्वतथागतज्ञानोत्पादनवज्रपदकरम्। तच्च बोधिचित्तं न कायस्थितं न चित्तस्थितम्। यश्चधर्मस्त्रैधातुके न स्थितः तस्योत्पादो नास्ति। इदं सर्वतथागतज्ञानोत्पादनवज्रपदम्।

न च भगवन्तः सर्वतथागताः स्वप्नस्यैवं भवति अहं त्रैधातुके स्वप्नपदं दर्शयेयम्। न च पुरुषस्यैवं भवति अहं स्वप्नं पश्येयमिति। सा च त्रैधातुकक्रिया स्वप्नोपमा स्वप्नसदृशी स्वप्नसम्भूता। एवमेव भगवन्तः सर्वतथागता यावन्तो दशदिक्सर्वलोकधातुषु बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च यावन्तः सर्वसत्त्वाः सर्वे ते स्वप्नैरात्म्यपदेनानुगन्तव्याः ।

तद्यथापि नाम भगवन्तः सर्वतथागताः चिन्तामणिरत्नं सर्वरत्नप्रधानं सर्वगुणोपेतम्। ये च सत्त्वाः प्रार्थयन्ति सुवर्णं वा रत्नं वा रौप्यं वा तत् सर्वं चिन्तामात्रेणैव सम्पादयन्ति। तच्च रत्नाद्यं न चित्तस्थितं न चिन्तामणिस्थितम्। एवमेव भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वधर्मा अनुगन्तव्याः ।

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः प्रहर्षोत्फुल्ललोचनाः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रं तथागतमेवमाहुः। आश्चर्यं भगवन् यत्र हि नाम आकाशधातु समवसरेषु सर्वधर्मेषु बुद्धधर्माः समवसरणं गच्छन्ति।

अथ ते सर्वबुद्धबोधिसत्त्वा भगवन्तो वज्रपाणेस्तथागतस्य पादयोः प्रणिपत्यैवमाहुः । यद्भगवता सर्वमन्त्रवज्रसिद्धिसमुच्चयं भाषितं तानि च सर्वमन्त्रवज्रसमुच्चयसिद्धीनि कुत्र स्थितानि।

अथ वज्रपाणिस्तेषां तथागतानां बोधिसत्त्वानां च साधुकारं दत्त्वा तान् सर्वतथागतानेवमाह। न च भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वमन्त्रसिद्धीनि सर्वमन्त्रकायवाक्चित्तवज्रस्थितानि। तत्कस्य हेतोः । परमार्थतः कायवाक्चित्तमन्त्रसिद्धीनामसम्भवात्। किन्तु भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वमन्त्रसिद्धीनि सर्वबुद्धधर्माणि स्वकायवाक्चित्तवज्रस्थितानि। तच्च कायवाक्चित्तं न कामधातुस्थितं न रूपं धातुस्थितं नारूपधातुस्थितम्। न चित्तं कायस्थितं न कायश्चित्तस्थितः न वाक् चित्तस्थिता न चित्तं वाक्स्थितम्। तत्कस्य हेतोः? आकाशवत् स्वभावशुद्धत्वात् ।

अथ ते सर्वतथागताः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रं तथागतमेवमाहुः। सर्वतथागतधर्मा भगवन् कुत्र स्थिताः क वा सम्भूताः। वज्रसत्त्व आह। स्वकायवाक्चित्तसंस्थिताः स्वकायवाक्चित्तसम्भूताः। भगवन्तः सर्वतथागता आहुः। स्वकायवाक्चित्तवज्रं कुत्र स्थितम्? आकाशस्थितम्। आकाशं कुत्र स्थितम्? न क्वचित्।

अथ ते सर्वबुद्धबोधिसत्त्वा आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ताः स्वचित्तधर्मताविहारं ध्यायंस्तूष्णीं स्थिता अभूवन्निति।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वचित्तसमयसारवज्रसम्भूतिर्नाम पटलः पञ्चदशोऽध्यायः ।

इसके बाद भगवान् कायवाक्चित्त वज्रपाणि तथागत ने सर्वतथागतों से यों कहा – आप सभी भगवान् सर्वतथागत यह जान लें – आकाश किसी भी धर्म से संयुक्त नहीं है और असंयुक्त भी नहीं है। और न हि आकाश का यह सब होता है। यह सर्वगत और सभी के द्वारा बोध्य भी है। इसी प्रकार सभी धर्म स्वप्न के तरह हैं, स्वप्न समय सम्भूत हैं ऐसा भी जान लेना चाहिए। और यह भी है आकाश निरूपण योग्य और निदर्शन योग्य भी नहीं है। ऐसे ही सभी धर्म हैं ऐसा आप सर्वतथागत जान लें।

और ऐसा भी है कि सर्वधर्म काय वाक् चित्त वज्र समयपद, सर्वत्रगानुगत – एक स्वभाव है या चित्र के स्वभाव से युक्त है। जो कायवाक् चित्त धातु और आकाश धातु भी अद्वय है यही इसका द्वैधीकरण है।

और ऐसा भी है कि हे सर्वतथागत भगवन्तः! सभी धर्म आकाश धातु में

स्थित हैं। वह आकाश धातु काम धातु में स्थित नहीं है, न रूप धातु में स्थित और न ही अरूप धातु में ही स्थित है। जो धर्मधातु त्रिधातु में स्थित नहीं है उसकी उत्पत्ति ही नहीं है। जिसकी उत्पत्ति नहीं है वह किसी भी धर्म से सम्बद्ध होता ही नहीं है। इसीसे आप सब जान लें सभी धर्म नि:स्वभाव हैं।

और यह भी है कि बोधिचित्त ही सर्वतथागत ज्ञानोत्पादन वज्र पद कारक है। वह बोधिचित्त न शरीर में स्थित हैं, न वाणी और न ही चित्त में ही स्थित है। जो धर्म त्रैधातुक में स्थित नहीं है, उसका उत्पादन ही नहीं है। यही सर्वतथागत ज्ञान उत्पादन वज्र पद है।

और हे तथागतभगवन्त:! यह भी आप जान लें कि त्रैधातुक में मैं स्वप्न देखूँ या देख रहा हूँ यह स्वप्न में नहीं होता है। और मैं स्वप्न देखना चाहता हूँ यह भी स्वप्न में नहीं होता। वह त्रैधातुक क्रिया स्वप्न जैसी, स्वप्न जैसा ही और स्वप्न से समुद्भूत भी है। इसीलिए जितने भी दशदिशाओं लोकधातुओं में बुद्ध और बोधिसत्त्व हैं वे सभी अन्य सत्त्व भी वे स्वप्न और नैरात्म्यपद के वाचक हैं ऐसा जानना चाहिए।

और भी आप सर्वतथागत भगवान् जान लें कि चिन्तामणि रत्न सभी रत्नोंमें प्रधांन है, सर्वगुणों से युक्त भी है। जो भी प्राणी उसके सामने सुवर्ण, रत्न, चाँदी, वा अन्य जो चाहे चाहने मात्र से वह चिन्तामणि उसे दे देता है। वे सभी रत्न न तो उस व्यक्ति के चित्त में हैं और न ही चिन्तामणि में ही अवस्थित हैं। ऐसे ही सभी धर्म भी हैं यह आप सब लोग जान लें हे सर्वतथागत भगवन्त:।

अब सर्वतथागत भगवान् यह सब सुनकर हर्ष से भावविभोर होकर सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र को इस प्रकार कहने लगे। आश्चर्य है भगवन्। जहाँ तक आकाश धातु है जैसा है वैसा ही सभी धर्मों में बुद्ध धर्म है। वे सब धर्म भी उसी प्रकार व्याप्त हैं। आकाश के समान हैं। इसके बाद सर्वतथागत बोधिसत्त्व भगवान् वज्रपाणि तथागत के पाद में गिरकर उन्हें प्रणाम कर इस प्रकार कहने लगे। जो आपने सर्वमन्त्र वज्र सिद्धि समुच्चय के विषय में बताया वे सर्वमन्त्र वज्रसमुच्चय सिद्धि कहाँ अवस्थित हैं।

अब भगवान् वज्रपाणि ने तथागत-बोधिसत्त्वों को धन्यवाद देकर उन

सभी तथागतों से यों कहने लगे। सभी मन्त्र सिद्धि सर्वमन्त्र कायवाक् चित्त वज्र स्थित नहीं हैं। क्योंकि परमार्थ रूप में काय, वाक् चित्त, मन्त्र और सिद्धि होना संभव नहीं है। किन्तु सभी मन्त्र सिद्धियाँ सर्वबुद्धधर्म स्वकायवाक्चित्तवज्र में स्थित होते हैं। किन्तु वह काय, वाक् चित्त में स्थित नहीं है, न काय धातु, न रूप धातु, न रूपधातु में ही स्थित होते है। चित्त काय में स्थित नहीं है और काय भी चित्त में नहीं है, वाक् चित्त में स्थित नहीं है और न ही चित्त वाणी में स्थित है। क्योंकि सब कुछ स्वभाव शुद्ध है इसीलिए आकाश के तरह ही है।

अब सभी वे सर्वतथागतों ने सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र तथागत को इस प्रकार कहा। हे भगवन्! सर्वतथागत धर्म कहाँ अवस्थित हैं और कहाँ से उत्पन्न हुए हैं। वज्रसत्त्व ने कहा। स्वकायवाक्चित्त संस्थित और स्वकायवाक् चित्त संभूत हैं। भगवान् सर्वतथागतों ने इस प्रकार कहा - स्वकायवाक् चित्त वज्र कहाँ अवस्थित हैं? आकाश में स्थित हैं। आकाश कहाँ स्थित है? कहीं भी स्थित नहीं है।

अब वे सभी बोधिसत्त्व आश्चर्ययुक्त हो गए, अद्भुत अवस्था को प्राप्त कर गए, स्वचित्तधर्मताविहार का ध्यान करते हुए मौन हो गए।

पञ्चदश पटल पूर्ण हुआ।

षोडशपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः पुनः समाजमागम्य भगवन्तं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रंतथागतं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रपदैरध्येष्य सर्वतथागतरत्लवज्रपूजाव्यूहैः पूजयामासुः। अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्ववज्रमण्डलसिद्धिसमयराजव्यूहं नाम समाधिं समापद्येदं वज्रकायमण्डलं सर्वबुद्धानां स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कायमण्डलमुत्तमम् ।
चित्तवज्रप्रतीकाशं सर्वमण्डलमुत्तमम् ॥ १ ॥
षोडशहस्तं प्रकुर्वीत चतुरस्त्रं सुशोभनम् ।
मण्डलं सर्वबुद्धानां कायवज्रप्रतिष्ठितम् ॥ २ ॥
तस्याभ्यन्तरतश्चक्रमालिखेद्विधिवज्रया ।
मुद्रावज्रपदं कुर्यान्मन्त्राणां गुह्यमुत्तमम् ॥ ३ ॥
मध्ये वैरोचनपदमक्षोभ्यादीन् समालिखेत् ।
कायवाक्चित्तवज्राग्रीन् सर्वकोणे निवेशयेत् ॥ ४ ॥
क्रोधन् समालिखेद्द्वारि महाबलपराक्रमान् ।
पूजां कुर्वीत मन्त्रज्ञो गुह्यवज्रप्रभाविताम् ॥ ५ ॥
एषो हि सर्वक्रोधानां समयो दुरतिक्रमः ।
अवश्यमेव दातव्यं विण्मूत्राद्यं विशेषतः ॥ ६ ॥

अब, भगवान् सर्वतथागतों ने फिर से समाज में आकर भगवान् सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्र तथागत को सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र पदों के द्वारा अध्येषणा करके सर्वतथागतरत्न वज्रपूजा व्यूहों से पूजा किया। अब भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्व वज्रमण्डल सिद्धि समयराज व्यूह नामक समाधि में प्रविष्ट होकर वज्रकायमण्डल को सर्वबुद्धों का स्वकायवाक् चित्तवज्रों से प्रकट किया। अब मैं आप लोगों के लिए उत्तम कायमण्डल, चित्तवज्रप्रतीकाश सर्वमण्डलों में उत्तम मण्डल की व्याख्या करता हूँ। चारों ओर फैला हुआ १६

हाथ परिमाण का सर्वबुद्धों का कायवज्र प्रतिष्ठित मण्डल निर्माण करना चाहिए। उसके आन्तरिक भाग में विधिवज्र के द्वारा चक्र लिखना चाहिए। और मुद्रावज्र पद को भी लिखना चाहिए जो गुह्यों में भी उत्तम गुह्य है। उसके बीच में वैरोचन का चित्र अंकित करना चाहिए। और सभी कोणों में काय, वाक् चित्त वज्राग्रों को लिखना चाहिए। द्वार में क्रोध वज्रों को स्थापित करे जो महाबलपराक्रम से युक्त होते हैं, पूजा करना चाहिए जो गुह्यवज्रों से प्रभावित होता है। यही सर्वक्रोधों का समय है जो दुरतिक्रम है। उसे अवश्य ही गोबर गोमूत्र आदि देना चाहिए। यही सभी मन्त्रों कायवज्रों का भी समय है।

एष हि सर्वमन्त्राणं समयः कायवज्रिणाम् ।
सर्वतथागतकायमण्डलम् ॥

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्ववाग्वज्रसमयमेघव्यूहं नाम समाधिं समापद्येदं वाग्वज्रमण्डलं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्य उदाजहार ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वाङ्मण्डलमुत्तमम् ।
चित्तवज्रप्रतीकाशं सर्वमण्डलमुत्तमम् ॥७॥
विंशतिहस्तं प्रकुर्वीत चतुरस्त्रं विधानतः ।
चतुष्कोणं चतुर्द्वारं सूत्रयेद्वज्रभावनैः ॥८॥
स्ववाङ्मण्डलपदं वाक्यवज्रगुणावहम् ।
वज्रधर्ममहाराजं विद्वेषमवतारयेत् ॥९॥
तस्य मध्ये महाचक्रमालिखेत्परिमण्डलम् ।
सर्वमुद्रां समासेन आलिखेद्विधितत्परः ॥१०॥
अमितायुर्महामुद्रां तस्य मध्ये निवेशयेत् ।
तदेव वज्रपदं रम्यं सर्वेषां परिकल्पयेत् ॥११॥
परिस्फुटं विधानेन कृत्वा मण्डलमुत्तमम् ।
गुह्यपूजां ततः कुर्यादेवं तुष्यन्ति वज्रिणः ॥१२॥
विण्मूत्रशुक्रसमयैः पूज्य सिद्धिरवाप्यते ।
एषो हि सर्वबुद्धानां समयो दुरतिक्रमः ॥१३॥

यही सर्वतथागत काय मण्डल है। इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्ववाग्वज्र समय मेघव्यूह नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय

वाक् चित्त वज्रों से वाग्वज्र मण्डल को उत्पन्न किया। अब मैं चित्तवज्र प्रतीक, सर्वमण्डलों में उत्तम, वाङ्मण्डल के विषय में बताऊँगा। चतुष्कोण के रूप में २० हाथों का चतुरस्र विधानपूर्वक वज्रभावना से युक्त मण्डल का निर्माण करना चाहिए। स्व वाङ्मण्डल पद, वाक्यवज्रगुणों से युक्त, वज्रधर्म महाराज विद्वेष का उपचार करना चाहिए। उसके बीच में परिमण्डल रूप में महाचक्र का लेखन करे। उसके बाद संक्षेप में सर्वमुद्रा को लिखकर विधिपूर्वक कर्म प्रारंभ करे। अमिताभ की महामुद्रा का उसके ऊपर लिखना चाहिए। वही रमणीय वज्र पद है सर्वमुद्राओं की कल्पना करना चाहिए। पुष्ट रूप में विधान पूर्वक उत्तम मण्डल बनाकर गुह्यपूजा का आरंभ करना चाहिए। इससे वज्री तुष्ट होते हैं। विष्ठा मूत्र और शुक्र समयों के द्वारा पूजा करने से सिद्धि प्राप्त होती हैं। यही सर्वबुद्धों का दुरतिक्रम समय है।

सर्वतथागतवाङ्मण्डलम् ॥

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः समन्तमेघव्यूहं नाम समाधिं समापद्येदं परमगुह्यमण्डलरहस्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

यस्य वज्रधराग्रस्य मध्ये बिम्बं समालिखेत् ॥

भवेन्मण्डलपदं तस्य कायवाक्चित्तगुह्यजम् ॥ १४ ॥

यही सर्वतथागतवाङ्मण्डल है। अब भगवान् तथागत वज्रपाणि ने समन्तमेघव्यूह नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने कायवाक्चित्त वज्रों से परमगुह्यमण्डल को उत्पन्न किया। उस वज्रधराग्र के मध्य में बिम्ब को लिखे। उसी में कायवाक्चित्त गुह्य में उत्पन्न मण्डल पद से युक्त होना चाहिए।

इति सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रज्ञानरहस्योऽयं परमगुह्यः ।

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्वमण्डलचक्रसम्भवं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वमण्डलकायवाक्चित्तगुह्यजं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्य उदाजहार । ततो मण्डलमन्त्रः ॥ मन्त्राक्षरहृदयसूत्राक्षरपदानि ॥

॥ हूँ ओं आः ॥

पातनं वज्रसूत्रस्य रजस्यापि निपातनम् ।
न कार्यं मन्त्रसत्त्वेन कारयन् बोधिदुर्ल्लभः ॥ १५ ॥
तस्मात्समयविधानज्ञोऽवतार्य्य मन्त्रदेवतान् ।
अधिष्ठानपदं ध्यात्वा मण्डलानां विकल्पनम् ॥ १६ ॥
वैरोचनमहाराजं लोचनां चावतारयेत् ।
कायमण्डलपदं रम्यं कायवज्रगुणावहम् ॥ १७ ॥
वज्रधर्ममहाराजं सधर्मं चावतारयेत् ।
इदं तत्सर्वमन्त्राणां रहस्यं परमशाश्वतम् ॥ १८ ॥
वज्रसत्त्वमहाराजं मामकीं चावतारयेत् ।
इदं तत्सर्वमन्त्राणां रहस्यं परमाद्भुतम् ॥ १९ ॥
एवं कृतेन सान्निध्यं स्वयमेव मनीषिणः ।
आगत्य गुह्यपरमं लिखन्ति हरिषान्विताः ॥ २० ॥
इत्याह च ।

यही सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्रज्ञान रहस्य रूप परम गुह्य है। अब भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्वमण्डलचक्रसम्भव नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने कायवाक्चित्तवज्रों से सर्वमण्डल कायवाक्चित्त गुह्यज मण्डल को उत्पन्न किया। उसके बाद मण्डल मन्त्र उत्पन्न किया। उसके बाद मन्त्राक्षर-हृदय सूत्राक्षर पदों को उत्पन्न किया। हूँ । ओं । आः । वज्रसूत्र का उसमें सम्मिलित करना, और रजः का उसी में योजन करना चाहिए। मन्त्रसत्त्व से यदि करेगा तो बोधि दुर्लभ है। इसीलिए समय विधि के ज्ञाता को हमेशा मन्त्रदेवताओं को अवतरित करके अधिष्ठान पद का ध्यान करके मण्डलों का विकल्प करना चाहिए। उस अवसर में भगवान् वैरोचन एवं देवी लोचना को वहाँ आवाहित करना चाहिए। वही रमणीय कायमण्डल है और कायवज्र गुणा वह भी है। और वज्रधर्म महाराज को धर्म सहित उन्हें अवतरित करना चाहिए। यही वह सभी मन्त्रों का परमशाश्वत रहस्य भी है। वज्रसत्त्वमहाराज के साथ ही देवी मामकी को भी आवाहित करे। यही सभी तन्त्रों का अद्भुत रहस्य भी है। इस प्रकार के कृत्य से स्वयं ही मनीषी देवतागण आकर हर्षित होकर परमगुह्य को लिखते हैं, बताते हैं । ऐसा कहा भी है।

कर्तव्यं मन्त्रसिद्धे च वज्रगुह्यं महाद्भुतम् ।
आकृष्य क्रोधराजेन सर्वबुद्धांस्तु पूजयेत् ॥ २१ ॥
त्रिकालसमये पूजा त्रिवज्रामलवज्रिणः ।
कर्तव्यं त्रिवज्रयोगेन मन्त्रसिद्धिप्रवर्तनम् ॥ इति ॥ २२ ॥
इत्याह च ।

मन्त्रों के सिद्ध होने पर महद् अद्भुत वज्रगुह्य की आराधना द्वारा उन्हें आकर्षित करना चाहिए साथ ही सभी बुद्धों की पूजा भी। त्रिकाल समय में त्रिवज्रामल वज्री की पूजा भी की जानी चाहिए। वह भी त्रिवज्रयोग द्वारा जिससे मन्त्रसिद्धि होती है।

सर्वेषामेव मन्त्राणां बलिं दद्यान्महाद्भुतम् ।
विण्मूत्रमांसतैलं च पञ्चमं चित्तसम्भवम् ॥ २३ ॥
शुक्रेण सर्वमन्त्राणां प्राणनं समुदाहृतम् ।
एषो हि समयश्रेष्ठो बुद्धबोधिप्रपूरकः ॥ २४ ॥

सभी मन्त्रों का अत्यन्त अद्भुत बलि देना चाहिए। उसमें विष्ठा, मूत्र, मांस, तैल जो पाँचवाँ चित्त से उत्पन्न है। शुक्र के द्वारा सभी मन्त्रों की प्रतिष्ठा की जानी चाहिए। यही सभी मन्त्रों का समयश्रेष्ठ है यही बुद्ध बोधि प्रपूरक भी है।

सूत्रस्य पातनमिदं स्वयमेव समाचरेत् ।
वैरोचनं प्रभावित्वा वज्रसत्त्वं विभावयेत् ॥ २५ ॥
अथवाऽमृतवज्राख्यं शिष्यं वज्रमहाद्युतिम् ।
विभावयेत्कर्मपदं सर्वबुद्धनिषेवितम् ॥ २६ ॥
पञ्चबुद्धमहाराजं सूत्रं वज्रगतं न्यसेत् ।
एषो हि सर्वबुद्धानां रहस्यं परमाद्भुतम् ॥ २७ ॥

सूत्रों को उसमें गिराकर स्वयं ही उस कृत्य में संलग्न होना चाहिए। और वैरोचन की भावना करके वज्रसत्त्व का ध्यान करे। अथवा अमृत वज्र नामक शिष्य जो वज्रमहाद्युतियुक्त है, उसकी भावना करनी चाहिए, वही कर्मपद है और सर्वबुद्धनिषेवित भी है। पञ्चबुद्ध महाराज को वज्रगत सूत्र को उसमें रख दें। यही सर्वबुद्धों का परम अद्भुत रहस्य है।

पञ्चविंशतिभेदेन रजस्यापि निपातनम् ।
इदं तत्सर्ववज्राणां रहस्यं बोधिमुत्तमम् ॥ २८ ॥
सर्वेषामेव मन्त्राणां वज्रहूँकारभावना ।
कायवाक्चित्तसमयं पञ्चस्थानेषु भावयेत् ॥ २९ ॥
एवं कृतेन सान्निध्यं त्रिवज्राभेद्यवज्रजाः ।
कुर्वन्ति भयसंत्रस्ता वज्रसत्त्वस्य धीमतः॥ ३० ॥

पच्चीस प्रकार के भेद से रज का भी पातन करना चाहिए। यही सर्व वज्रों का उत्तम बोधि रहस्य है। सभी मन्त्रों का वज्र हूँ कार भावना यही है। काय वाक् चित्त समय को पाँच स्थानों में भावना करनी चाहिए। इस प्रकार के सान्निध्य ही त्रिवज्राभेद्य वज्रों से उत्पन्न होता है। धीमान् वज्रसत्त्व को भयसंत्रस्त कर देने वाला यह योग है जिसे वज्री साधना करें।

न्यासं कलशवज्राणां मन्त्रतन्त्रान्वितैः स्मृतम् ।
वज्रसत्त्वं समाधिस्थं कल्पयेत् दृढ़बुद्धिमान् ॥ ३१ ॥
होमं कुर्वीत मन्त्रज्ञः सर्वसिद्धिफलार्थिनः ।
विण्मूत्रमांसतैलाद्यैराहुतिं प्रतिपादयेत् ॥ ३२ ॥
पूर्णां वज्राहुति दद्यात् त्रिवज्राद्यं समाचरेत् ।
शुक्रं वा अथवा विष्ठामभिमन्त्र्य विधानतः ॥ ३३ ॥
भक्षयेद्वज्रयोगेन एवं सिद्धिर्न दुर्लभा ।
कृत्वा वज्रमहागुह्यं रहस्यं सर्ववज्रिणाम् ॥ ३४ ॥
स्त्रीरूपमन्त्रचक्रेण स्थिताः सत्त्वार्थचर्यया ।
तत्रेदं सर्ववज्रमण्डलमन्त्राराधनरहस्यम् ॥ ३५ ॥

मन्त्र तन्त्रों से कलश वज्रों का न्यास करना चाहिए। उसके बाद समाधि में स्थित वज्रसत्त्व को बुद्धिमान साधक ध्यान करें। सर्वसिद्धि को चाहने वाला साधक जो मन्त्रज्ञ उसके बाद होम करें। विष्ठा, मूत्र, मांस और तेल आदि की आहुति होनी चाहिए। पूर्ण वज्राहुति देना चाहिए उसके बाद त्रिवज्रादि का आचरण करें। उसमें शुक्र अथवा विष्ठा को अभिमन्त्रित करके विधानपूर्वक वज्रयोग द्वारा भक्षण करें जिससे तत्काल ही वज्र सिद्धि प्राप्त कर सकता है। वज्रमहागुह्य का प्रयोग करना चाहिए जो सर्ववज्रधारियों का परम रहस्यमय

है। वे सब वज्रधारी तथागत स्त्री रूप मन्त्रचक्र रूप अवस्था में प्राणियों के कल्याणार्थ रहते हैं। वहाँ पर यही सर्ववज्रमण्डल मन्त्राराधन रहस्य है।

हस्तिमांसं हयमांसं महामासं च भक्षयेत् ।
दद्याद्वै सर्वमन्त्राणामेवं तुष्यन्ति नायकाः ॥ ३६ ॥
प्रत्यहं वज्रशिष्यस्य दर्शयेत् मण्डलं बुधः ।
विण्मूत्रमांसकृत्येन वज्रगुह्यपदेन च ॥ ३७ ॥
ओं कारं सर्वमन्त्राणां ध्यात्वा ज्वलति तत्क्षणात् ।
इत्याह च भगवान् महामन्त्रवज्रविद्यापुरुषवज्रः ।
साधनं सर्वसिद्धीनां महासमयसाधनम् ।
साधनीयं प्रयत्नेन बुद्धबोधिमपि स्वयम् ॥ ३८ ॥

हस्तिमांस, अश्वमांस, मनुष्यमांस का भक्षण करें। और सभी मन्त्रों के प्रयोगपूर्वक नायकों को समर्पित करने से वे सब हृष्ट होते हैं। प्रतिदिन वज्रशिष्य को उक्त मण्डल का दर्शन कराना चाहिए। और विष्ठा, मूत्र मांस आदि को अभिमन्त्रित करके ही गुह्यपद साधना करनी चाहिए। उस अवसर पर उन मन्त्रों के प्रारंभ में ऊँकार का ध्यान करने से वह तत्काल ही जल उठता है। ऐसी ही कहा है भगवान् महामन्त्र वज्रविद्यापुरुष वज्र ने। सर्वसिद्धियों की साधन ही महासमय साधन है। इस प्रकार प्रयत्नपूर्वक स्वयं बुद्ध बोधि का भी साधन करना चाहिए।

अन्तर्द्धानं बलं वीर्यं वज्राकर्षणमुत्तमम् ।
सिध्यते मण्डले सर्वं कायवज्रवचो यथा ॥ ३९ ॥
विण्मूत्रं च महामांसं समभागं तु कारयेत् ।
शरावसम्पुटे स्थाप्य बुद्धैः सह च संवसेत् ॥ ४० ॥
इत्याह च ।
तत्रेदं सर्वगुह्यवज्रकिङ्करमहासाधनपदं वरम् ।
खवज्रमध्यगतं चिन्तेत् ह्रीः कारं ज्वालसुप्रभम् ।
खधातुं सर्वबुद्धैस्तु परिपूर्णं विभावयेत् ।
कायवाक्चित्तपदं तेषां तत्र मन्त्रे निपातयेत् ॥ ४१ ॥

इस प्रकार के महायोग से अन्तर्ध्यान की सिद्धि, बल, वीर्य, उत्तम

वज्राकर्षण आदि की सिद्धि होती है। जैसा कि काय वज्र ने कहा है। गोबर, गोमूत्र, मनुष्य माँस को समान भाग में एकत्र कर छोटे सकोरों में रखकर सभी बुद्धों को अर्पित कर उसे प्रसाद के रूप में खाना चाहिए। ऐसा कहा भी है। यहाँ पर सर्वगुह्य वज्रकिङ्कर महासाधन पद ही श्रेष्ठ है। आकाश धातु में स्थित, ज्वालाओं से उद्दिप्त ह्रीः कार का ध्यान करें। साथ ही सर्वबुद्धों से परिपूर्ण आकाशधातु का चिन्तन करें। काय, वाक् और चित्त पदों को उनके मन्त्रों में समाविष्ट करें।

तत्रेदं कायवाक्चित्तमन्त्रवज्राधिष्ठानपदम् । ॥ आः खँ वीः ॥
वज्रपाणिमहाबिम्बं पद्मपाणिमहाद्युतिम् ।
अपराजितमहाबिम्बं ध्यात्वा गुह्यपदं न्यसेत् ॥ ४२ ॥

वहाँ पर यह काय, वाक् चित्त मन्त्र वज्राधिष्ठान पद कहा गया है। ॥ आः खँ वीः ॥ वज्रपाणि का महाबिम्ब, पद्मपाणि का महातेज, और अपराजित का महाबिम्ब का ध्यान करके उस पर गुह्य पद उस पर स्थापित करें।

तत्रेदं वज्रगुह्यपदम् ।
सूर्यमण्डलमध्यस्थमक्षोभ्यं वा प्रकल्पयेत् ।
अमितायुर्महाबिम्बं वज्रवैरोचनं तथा ।
चोदयेद् हृदये सर्वान् तीव्रदुःखमहाद्युतीन् ॥ ४३ ॥

वहाँ यह वज्रगुह्यपद है। सूर्य मण्डल के मध्य में अवस्थित अक्षोभ्य की भावना करें। इसी प्रकार अमिताभ को उसी बिम्ब पर तथा वैरोचन का भी उसी स्थान पर ध्यान करें। साथ ही अपने हृदय में उन सभी को स्थापित करना चाहिए।

तत्रेदं सर्ववज्रहृदयवज्रसंचोदनम् । ॥ आँ ॥
महाशूलैर्महावज्रैरङ्कुशैर्विविधैर्बलैः ।
चोदयेद्विधिवद्वज्रं बुद्धबोधिः प्रसिध्यति ॥ ४४ ॥
इत्याह च ॥

यही यहाँ सर्ववज्रहृदयवज्र प्रेरणात्मक योग है। ॥ आँ ॥ महाशूल, महावज्र, विविधबलात्मक अंकुशों से विधिपूर्वक वज्र को प्रेरित करना चाहिए इससे बुद्ध बोधि ही सिद्धि होती है। ऐसा भी कहा है।

पर्वतेषु च रम्येषु द्वीपेषु विविधेषु च ।
पक्षाभ्यन्तरपूर्णेन ध्रुवं बुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ ४५ ॥
षट्त्रिंशत्सुमेरूणां यावन्तः परमाणवः ।
परिवारगणास्तस्य सिध्यन्ते बोधिवज्रिणः ॥ ४६ ॥
दशदिक्सर्वबुद्धानां बुद्धक्षेत्राणि कारयेत् ।
मध्ये स्वदेवताबिम्बं ध्यात्वा वज्रेण पातयेत् ॥ ४७ ॥
इत्याह च ।

रमणीय पर्वतों में विविध द्वीपों में साधना करने से एक पक्ष (१५ दिन) में निश्चय भी बुद्धत्व प्राप्त करता है। षट्त्रिंशत् सुमेरु पर्वतों के जितने भी परमाणु गण हैं। उस साधक के इस साधना से उतने बोधिवज्री के परिवारगण हो जाते हैं। दशों दिशाओं में जितने भी बुद्ध क्षेत्र हैं उन्हें निश्चय ही साधना से बुद्ध क्षेत्र के रूप में परिणत कर देना चाहिए। और बीच में अपने आराध्य के बिम्ब का ध्यान करके वज्र द्वारा उसे वहाँ स्थापित - आवाहित करें। ऐसा भी कहा है।

द्वयेन्द्रियप्रयोगेण जुहुयादयुतं बुधः ।
एषो हि सर्वबुद्धानां समयो दुरतिक्रमः ॥ ४८ ॥

दो इन्द्रियों के प्रयोग से विद्वान् 'अयुत' संख्या बराबर हवन करें। यही सर्व बुद्धों का दुरतिक्रम समय कहा गया है।

वैरोचनप्रयोगेण शिष्यं त्रिवज्रसम्भवम् ।
आः कारं कायवाक्चित्ते ध्यात्वा वज्रेण गृह्यते ॥ ४९ ॥
वज्रसत्त्वो महाराजो वैरोचनो महायशाः ।
कायवाक्चित्तसमयमधिष्ठानं ददाति हि ॥ ५० ॥

वैरोचन के प्रयोगपूर्वक त्रिवज्र से समुद्भूत शिष्य का आःकार को काय-वाक् और चित्त में ध्यान करने से वज्र द्वारा सुगृहीत होता है। वज्रसत्त्व महाराज, वैरोचन महाशय ही काय, वाक् चित्त समय के अधिष्ठान प्रदान करते हैं।

तत्रेदं महामण्डलप्रवेशनवज्रपदम् । ॥ आः खँ वीर हूँ ॥
सर्वसमयकायवाक्चित्तहृदयमन्त्रवज्रोऽयम् ।
तत्रेदं महावज्राभिषेकगुह्यज्ञानरहस्यम् ।
खधातुं सर्वबुद्धैस्तु परिपूर्णं विभावयेत् ।

वाद्यगन्धमहामेघैर्भावयेद्वज्रश्रोत्रधीः ॥ ५१ ॥

इत्याह च ।

यहाँ यही महामण्डल प्रवेशन वज्र पद है। आः । खँ । वीर । हूँ । सर्व समय काय वाक् चित्त हृदय मन्त्र वज्र यही है। यहाँ पर महावज्राभिषेक गुह्यज्ञान रहस्य भी यही है। समग्र आकाशधातु को सर्वबुद्धों द्वारा परिपूर्ण है ऐसी भावना करें। वाद्य-गन्धादि महामेघों द्वारा वज्रश्रोत्र बुद्धि वाला साधक इसकी भावना करें।

त्रिवज्रकायमन्त्रैस्तु सर्षपैस्ताडयेत् व्रती ।
अभिषेकं तदा तस्य स्वयमेव ददन्ति हि ॥ ५२ ॥
अथवा भावयेत् बुद्धान् वज्रसत्त्वसमाधिना ।
कलशान् समयाग्रैस्तु धारितान् भावयेद्बुधः ॥ ५३ ॥
वज्रवैरोचनं चिन्तेत् शिष्यो दृढ़मतिस्तदा ।
न्यासं कुर्वीत मन्त्रज्ञः कायवाक्चित्तवज्रिणः ॥ ५४ ॥

त्रिवज्रकाय मन्त्रों के द्वारा व्रतधारी साधक सरसों से वहाँ पर ताडित करें उसके बाद उसे स्वयं ही बुद्धगण अभिषेक देते हैं। अथवा वज्रसत्त्व समाधि के द्वारा बुद्ध की भावना करें। साथ ही कलशों को समयाग्रों से धारण किए हुए रूप में विद्वान् भावना करें। दृढ बुद्धि शिष्य वैरोचन की भावना करें। इसीलिए काय, वाक् चित्त वज्री का मन्त्रज्ञ न्यास करें।

तत्रेदं सर्वाभिषेकरहस्यं सर्वाचार्यवाग्वज्रोदीरणम् ।
अभिषेकं महावज्रं त्रैधातुकनमस्कृतम् ।
ददामि सर्वबुद्धानां त्रिगुह्यालयसम्भवम् ॥ ५५ ॥

यहाँ पर यह सर्वाभिषेक रहस्य सर्वाचार्य वाग्वज्र के द्वारा बताया गया है। अभिषेक जो महावज्रात्मक है और त्रैधातुक नमस्कृत तत्त्व जो सर्व बुद्धों का त्रिगुह्यालय सम्भव है उसे मैं देता हूँ।

तत्रेदं सर्वाभिषेकमहावज्रप्रार्थनाविधिरहस्यम् ।
बोधिवज्रेण बुद्धानां यथा दत्तो महामहः ।
ममापि त्राणनार्थाय खवज्राद्यं ददाहि मे ॥ ५६ ॥
अभिषेकं तदा तस्य दद्यात् प्रहृष्टचेतसः ।
देवताबिम्बयोगेन हृदयेऽधिपतिं न्यसेत् ॥ ५७ ॥

मन्त्राक्षरपदं दत्त्वा समयं च विधानतः ।
दर्शयेन्मण्डलं तस्य वज्रशिष्यस्य धीमतः ॥ ५८ ॥
समयं श्रावयेद्गुह्यं सर्वबुद्धैरुदाहृतम् ।
प्राणिनश्च त्वया घात्या वक्तव्यं च मृषा वचः ॥ ५९ ॥
अदत्तं च त्वया ग्राह्यं सेवनं योषितामपि ।
अनेन वज्रमार्गेण वज्रसत्त्वान् प्रचोदयेत् ॥ ६० ॥
एषो हि सर्वबुद्धानां समयः परमशाश्वतः ॥
इत्याह च ।

वहाँ पर यह सर्वाभिषेक महावज्रप्रार्थनाविधि रहस्य जो बोधिवज्र ने बुद्धों का जैसे दिया था जो तेजोमय है। मुझे भी मेरी रक्षा के लिए वही खवज्र कृपया दें। उस अवसर पर खुश होकर अभिषेक देने का काम करें। देवता बिम्ब योग द्वारा हृदय में अधिपति को न्यस्त करें। मन्त्राक्षर पदों के स्थापित करके समय को भी विधान पूर्वक स्थापित करके उसे मण्डल का दर्शन करायें, उस धीमान् वज्र शिष्य को समय का भी श्रवण करायें जो सर्वबुद्धों के द्वारा उद्धृत किया गया है। इसी से तुम प्राणी का वध करो, झूठ बोलो चोरी भी करो। पर स्त्रियों का भी सेवन करो। इस वज्र भाग के द्वारा वज्रसत्त्वों को प्रेरित करें। यही सभी बुद्धों का परम शाश्वत समय कहा गया है। ऐसा कहा भी है।

मन्त्रं दद्यात् सदा तस्य मन्त्रचोदनभाषितैः ॥ ६१ ॥

उसे मन्त्र भी दे दे, और मन्त्रों से प्रेरणा और मन्त्र प्रेरणा भाषणों से भी उसे उत्साहित करें ।

समाधिं मन्त्रराजस्य दत्त्वा गुह्यं समारभेत् ।
धर्मं श्रृणोति गाम्भीर्य्यं बुद्धभूमिं च प्राप्नुयात् ॥ ६२ ॥

मन्त्रराज की समाधि प्रदान करने के बाद गुह्यकृत्य का आरंभ करे। उसके बाद वह गंभीर धर्म का श्रवण करता है। और स्वयं बुद्धभूमि को भी प्राप्त करता है।

इत्याह च भगवान् महासमयवज्रहासः ।
तत्रेदं सर्वकिङ्करगुह्यवज्ररहस्यम् ।
वज्रसत्त्वमहाज्ञानं वाक्यवज्रधरं तथा ।

कायवज्रमहान्यासैः किङ्करं चोदयेत्सदा ॥ ६३ ॥

ऐसा भी कहा है भगवान् महासमयवज्र हास ने। वहाँ पर यह सर्वकिङ्कर गुह्य वज्र रहस्य यही है। वज्र सत्त्व महाज्ञान तथा बाह्य वज्रधर को भी कायवज्रमहान्यास द्वारा किङ्कर को प्रेरित करना चाहिए।

तत्रेदं वज्रज्ञानचक्रं चतुःसमयपदम् ।

समयचोदनं समयप्रेरणं समयमन्त्रणं समयबन्धनं चेति।

खधातुं विमलं शुद्धं सर्वधर्मविवर्जितम् ।

कुर्वन्ति पिण्डरूपेण त्रिवज्राद्भुतरूपिणः ॥ ६४ ॥

यहाँ पर यह वज्रज्ञान चक्र नामक चतुःसमय पद भी यही है। समय की प्रेरणा, समय की मन्त्रणा और समय का बन्धन भी यही है। आकाश धातु जो विमल, शुद्ध, सर्वधर्म विवर्जित है त्रिवज्राद्भुतरूपधारी वज्री पिण्ड रूप से उन्हें ऐसा करते हैं ।

इत्याह भगवान् सर्वबुद्धैकपुत्रो महावज्रधरः ।

बुद्धं वा वज्रसत्त्वं वा यदीच्छेद् वशमानितुम् ।

चिन्तयेदिदं महागुह्यं त्रिवज्राग्रधरं महत् ॥ ६५ ॥

भगवान् सर्वबुद्धैकपुत्र महावज्रधर ने ऐसा कहा है। यदि बुद्ध या वज्रसत्त्व को भी वश में करना चाहते हो तो इस महागुह्य, त्रिवज्राग्रधर का चिन्तन करें।

खवज्रमध्यगतं चिन्तेन्मञ्जुवज्रं महाबलम् ।

पञ्चबाणप्रयोगेण मुकुटाग्रं तु संस्मरेत् ॥ ६६ ॥

पञ्चस्थानेषु मन्त्रज्ञः क्रूरवज्रेण पातयेत् ।

मूर्च्छितं भावयेत् त्रस्तं बालबुद्धिं महायशाः ॥ ६७ ॥

पक्षमेकमिदं ध्यानं कर्तव्यं गुह्यचोदनैः ।

रहस्यं सर्वमन्त्राणां गीतं वज्रार्थबुद्धिना ॥ ६८ ॥

आकाश वज्र के बीच में स्थित, महाबल मञ्जुवज्र का चिन्तन करें और पञ्च बाणों के प्रयोग पूर्वक मुकुटाग्र की भावना करनी चाहिए। मन्त्रज्ञ पाँचों स्थानों में क्रूर वज्र के द्वारा निक्षिप्त करें। महाशय मूर्च्छित अवस्था के बाल बुद्धि की भावना करें। एक पक्ष तक गुह्यों के प्रेरणापूर्वक यह ध्यान करना चाहिए। सभी मन्त्रों के रहस्य का गान वज्रार्थ बुद्धि ने किया है।

खवज्रमध्यगतं चिन्तेद्बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।
हूँकारवज्रमन्त्राद्यैः त्रिवज्रादीन् प्रभावयेत् ॥ ६९ ॥
ओंकारं चक्षुर्गतं ध्यात्वा दर्शयेत विधानतः ।
पश्येत सर्वमन्त्राणां बिम्बं त्रिकायवज्रिणाम् ॥ ७० ॥
क्षुत्तृषाद्यैर्महाक्लेशैरिदं योगं विचिन्तयेत् ।
नश्यन्ति सर्वदुःखानि चित्तवज्रवचो यथा ॥ ७१ ॥
वैरोचनमहाबिम्बं ध्यात्वा सर्वार्थसम्पदम् ।
वंकारं वक्त्रगतं ध्यात्वा ओंकारं जिह्वाग्रं न्यसेत् ॥ ७२ ॥
आलयं सर्वभक्ष्याणां चिन्तामणिविभूषितम् ।
सर्वदुःखहरं शान्तं ज्ञानवज्रप्रभावितम् ॥ ७३ ॥

आकाश वज्र के मध्य में स्थित उत्तम बुद्ध मण्डल का ध्यान करें। उसके बाद 'हूँ' कार आदि वज्रमन्त्रों से त्रिवज्रादिकों की भावना करनी चाहिए। ॐ कार को अपने नेत्र के अन्दर रखकर विधान पूर्वक उसका ध्यान करें। उसके माध्यम से त्रिकाय वज्रों का जो बिम्ब है उसका दर्शन = ध्यान करना चाहिए। भूख, प्यास आदि महाक्लेशों के अवसर पर इस योग का चिन्तन करना चाहिए। उससे समस्त दुःख नष्ट होते हैं जैसा कि चित्त वज्र ने कहा है। वैरोचन के महाबिम्ब का ध्यान करके सर्वार्थ सम्पत्तियाँ उपलब्ध होती हैं। 'वं' कार को मुख के बीच में और ॐ कार को जिभ के अग्रभाग में स्थापित करें। सभी भोजनों का आलय जो है वही चिन्तामणि से विभूषित कहा गया है। वही सर्वदुःखों का हरणकर्ता है, शान्त है, ज्ञानवज्र से प्रभावित भी है।

इत्याह भगवान् चिन्तामणिवज्रः । अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः महावीरवज्रतथागतं वज्रभावनावज्रपदाग्रं वाग्वज्रपदाग्रं वाग्वज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

खवज्रमध्यगतं चिन्तेद्बुद्धमण्डलसुप्रभम् ।
त्रिवज्रकाययोगेन निष्पाद्येदं विचिन्तयेत् ॥ ७४ ॥
सर्वालङ्कारसम्पूर्णं पीतं वज्रविजृम्भितम् ।
जटामुकुटधरं शान्तं ध्यात्वा सर्वं समारभेत् ॥ ७५ ॥

यही कहा भगवान् चिन्तामणि वज्र ने। अब इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागत ने वाग्वज्रों से महावीर वज्रतथागत वज्रभावना वज्रपदाग्र को उत्पन्न किया। ॥ वीः ॥ खवज्र के मध्य में स्थित सुप्रभ-बुद्धमण्डल की भावना करें। और त्रिवज्रकाय योग द्वारा निष्पादन करके यह चिन्तन करें। सर्व अलंकार पूर्ण, पीले, वज्रों से संयुक्त, जटामुकुट धारी, शान्त स्वरूप का ध्यान करके सर्वकर्मों का आरंभ करना चाहिए।

वीरवज्रोर्मिमाला नाम समाधिः ॥

अथ भगवान् वज्रधरः समन्तनिर्घोषवज्रं नाम समाधिं समापद्येदं महावज्रभावनापदं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास । ॥ चुँ ॥

खवज्रमध्यगतं चिन्तेत्सूर्यमण्डलमुत्तमम् ।
बुद्धमेघान् विधानेन त्रिवज्रात्मा महायशाः ॥ ७६ ॥
पातनं कायवाक्चित्ते चुन्दवज्रीं विभावयेत् ।
सर्वालङ्कारसम्पूर्णां सितवर्णां विभावयेत् ॥ ७७ ॥
वज्रसत्त्वमहाराजं ध्यात्वा मन्त्रपदं न्यसेत् ।
वज्ररश्मिज्ञानसमयं नाम समाधिः ॥ ७८ ॥

वीरवज्रोर्मिमाला नामक यह समाधि है। अब भगवान् वज्रधर ने समन्त निर्घोष वज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर स्वकाय-वाक्चित्तों से महावज्र भावना पद को उत्पन्न किया। ॥ चुँ ॥ आकाश वज्र के मध्य में स्थित उत्तम सूर्य मण्डल का ध्यान करें। विधान पूर्वक त्रिवज्रात्मा-महाशय बुद्ध मेघों का ध्यान करें। काय, वाक् और चित्तों में उसको स्थापित करना और चन्दवज्री की भावना-चिन्तन करें। उन्हें भी अलंकार युक्त किन्तु श्वेत वर्ण के रूप में ध्यान करना चाहिए। वज्रसत्त्व महाराज का ध्यान करके यह मन्त्र पद विन्यस्त करें। यही वज्ररशिम ज्ञान समय नामक समाधि है ॥ ७६-७८ ॥

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्वाशावज्रसम्भोगं नाम समाधिं समापद्येदं समाधिवज्रनयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥ ॥ जँ ॥

खवज्रमध्यगतं चिन्तेद्बुद्धमण्डलमुत्तमम् ।
सर्वबुद्धान् विधानेन पातयेद्वज्रभावनैः॥ ७९ ॥

निष्पादयेन्महायक्षं जम्भलं द्रव्यसाधकम् ।
यक्षरूपधरं शान्तं जटामुकुटवज्रिणम् ॥ ८० ॥
पञ्चबुद्धान् विधानेन पञ्चस्थानेषु भावयेत् ।
वज्रामृतोदकं तस्य दद्याद्ध्यानपदे स्थितः ॥ ८१ ॥
वज्रसत्त्वं विधानेन मुकुटे तस्य चिन्तयेत् ।
एवं तुष्यति यक्षेन्द्रो जम्भलेन्द्रो महाद्युतिः ॥ ८२ ॥

इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्वदशावज्रसम्भोग नामक समाधि में प्रविष्ट होकर अपने काय-वाक्-चित्त-वज्रों से समाधि वज्रनय का उत्पादन किया। ॥ जँ ॥ आकाश वज्र में स्थित उत्तम बुद्ध मण्डल की भावना करनी चाहिए। विधानपूर्वक वज्रभावना के द्वारा सभी बुद्धों को वहाँ पर स्थापित करें। महायक्षस्वरूप, जम्भाल, द्रव्यसाधक, शान्त, पक्षरूपधर, जटामुकुटवज्रि का निष्पादन करें। विधान पूर्वक पाँच बुद्धों को पाँच स्थानों में स्थापित करें। ध्यान की अवस्था में उसे वज्रपद अमृत देना चाहिए। विधान पूर्वक उसके मुकुट में वज्रसत्त्व का चिन्तन करें। इससे जम्भलेन्द्र, महाद्युति यज्ञेन्द्र तुष्ट होते हैं।

वज्रसमयद्रव्याराधनकेतुश्रीर्नाम समाधिः ॥

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतो वज्रकामोपभोगश्रियं नाम समाधिं समापद्येदं सर्वयक्षिणीसमयवज्रपदं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास । ॥ क्षिँ ॥

खवज्रधातुमध्यस्थं चतुरस्त्रं सुशोभनम् ।
चतूरत्नमयं सर्वं पुष्पगन्धसमाकुलम् ॥ ८३ ॥
खधातुं सर्वयक्षिण्यैः परिपूर्णं विचिन्तयेत् ।
हृदयमन्त्रपदं ध्यात्वा वज्रयोगं समारभेत् ॥ ८४ ॥

यही वज्रसमयद्रव्याराधनकेतुश्री नामक समाधि है। इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागत ने वज्रकामोपभोग श्रीनामक समाधि में प्रविष्ट होकर स्वकाय वाक् चित्त वज्रों से सर्वयक्षिणी समयवज्र पद को उत्पादन किया।॥ क्षिं ॥ आकाश वज्र धातु में अवस्थित चतुरस्त्र सुशोभन पुष्पगन्धादि से पूरित चतुरत्नमय तथा समग्र आकाशधातु यक्षिणियों से पूर्ण है ऐसी भावना करें। उसके बाद

हृदय में मन्त्र पद का ध्यान करके वज्रयोग का आरंभ करें ।

सर्वयक्षिणीसमताविहारभावनवज्रो नाम समाधिः ॥

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्वबुद्धमन्त्रसिद्धिविजृम्भितवज्रं नाम समाधिं समापद्येमां हीनसिद्धिं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

कायवाक्चित्तसंसिद्धा बुद्धरूपधरप्रभाः ।
जाम्बूनदप्रभाकारा हीनसिद्धिसमाश्रिताः ॥ ८५ ॥
अन्तर्द्धानादिसंसिद्धौ भवेद्वज्रधरः प्रभुः ।
यक्षराजादिसंसिद्धौ भवेद्विद्याधरः प्रभुः ॥ ८६ ॥
तत्रेमानि सर्ववज्रसिद्धिरूपगुह्यमन्त्रसिद्धीनि।
सर्वाणि चारुरूपाणि मन्त्रसिद्धिमनीषितैः ।
प्रीणयन्ति दर्शनेन लोकधातुं समन्ततः ॥ ८७ ॥
उष्णीषः सर्वसिद्धीनां भवेच्चिन्तामणिप्रभुः ।
बुद्धबोधिकरं श्रेष्ठं बुद्धवज्रप्रभावितम् ॥ ८८ ॥
इत्याह भगवान् सर्वाशापरिपूरकवज्रः ।

सर्वयक्षिणी समताविहार भावना वज्र नामक समाधि यही है। अब भगवान् तथागत वज्रपाणि ने सर्वबुद्धमन्त्रसिद्धि विजृम्भृतवज्र नामक समाधि में प्रविष्ट होकर स्वकायवाक्चित्त वज्रों से इस हीन सिद्धि का उत्पादन किया।

कायवाक्चित्त संसिद्ध बुद्धरूपधर जो प्रभायें हैं, वे ही बादलों के स्वरूपवाले हीन सिद्धि आश्रित हैं, इनकी साधना से हीन सिद्धि में योग्यता आती है और वह साधक स्वयं वज्रधर प्रभु हो जाता है और यक्षराजादि के सिद्धि को भी प्राप्त करता है। यहाँ वे ही सर्व वज्रसिद्धि रूप गुह्यसिद्धियाँ हैं। वे ही सुन्दर रूपवाले मन्त्रसिद्धियाँ कहलाती हैं। इससे समस्त तथागत प्रसन्न होते हैं। इनके दर्शन से ही सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। यही सभी सिद्धियों में अग्रगण्य, चिन्तामणि समान, बुद्ध बोधिदाता, बुद्धवज्र-प्रभावित सर्वश्रेष्ठ समाधि भी है। यही भगवान् सर्वाशापरिपूरक वज्र ने कहा है।

अथ भगवान् वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रविद्याव्रतसमादानचर्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

कायवाक्चित्तवज्राणां कायवाक्चित्तभावनम् ।
स्वरूपेणैव तत्कार्यमेव सिद्धिरवाप्यते ॥ ८६ ॥

इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागताधिपति ने अपने कायवाक्चित्त वज्रों से सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्रविद्याव्रत समादान चर्या का उत्पादन किया। काय वाक् चित्त वज्रों का कायवाक्चित्तों से ध्यान करना चाहिए। इसके उपासना मात्र से तत्काल ही इच्छित सिद्धि प्राप्त होता है।

तत्रेदं स्वकायवाक्चित्तविद्याव्रतम् ।
जटामुकुटधरं बिम्बं सितवर्णनिभं महत् ।
कारयेत् विधिवत् सर्वं मन्त्रसंवरसंवृतम् ॥ ९० ॥
षोडशाब्दिकां गृह्य सर्वालङ्कारभूषिताम् ।
चारुवक्त्रां विशालाक्षीं प्राप्य विद्याव्रतं चरेत् ॥ ९१ ॥
लोचनापदसंभोगी वज्रचिह्नं तु भावयेत् ।
मुद्रामन्त्रविधानज्ञो मन्त्रतन्त्रसुशिक्षिताम् ॥ ९२ ॥
कारयेत्ताथागतीं भार्यां बुद्धबोधिप्रतिष्ठिताम् ।
गुह्यपूजां प्रकुर्वीत चतुःसंध्यं महाव्रती ॥ ९३ ॥
कन्दमूलफलैः सर्वं भोज्यं भक्ष्यं समाचरेत् ।
एवं बुद्धो भवेच्छीघ्रं महाज्ञानोदधिः प्रभुः ॥ ९४ ॥
षण्मासेनैव तत्सर्वं प्राप्नुयात् नात्र संशयः ॥ इति ॥

यहाँ पर अपने काय वाक् चित्त विद्याव्रत का बिम्ब निर्माण करके उसमें जटामुकुट हो, श्वेतवर्ण का बिम्ब विशाल बनाकर सर्वमन्त्रों से अभिमन्त्रित करके १६ वर्ष वाली, समस्त आभूषणों से अलंकृत, सुन्दरी, विशाल नेत्रों वाली को प्राप्त करके विद्याव्रत का आरंभ करे। उसमें लोचना का ध्यान करें और वज्रचिह्न की भावना भी करें, साधक मन्त्र मुद्रा विधान का ज्ञाता हो वही मन्त्र तन्त्र सुशिक्षित स्त्री को ही साधनाङ्गभूत करायें। उसे ही तथागत की भार्या के रूप में कल्पना करें। जो बुद्ध बोधि में प्रतिष्ठित हो। चार संध्या तक गुह्यपूजा करे उसके साथ रहकर एकान्त में। कन्दमूल फलों से ही समग्र भोज्य-भोजन की व्यवस्था करें। इससे शीघ्र ही साधक ज्ञान में निपुण एवं बुद्ध हो जाता है। इस प्रकार छह महीने तक साधना करने से उपर्युक्त सिद्धि प्राप्त होती है। ऐसा ही है।

परस्वहरणं नित्यं घातनं च महाद्भुतम् ॥ ९५ ॥

रागवज्रपदं गुप्तं इदं संवरसंवृतम् ।
रागवज्राङ्कुशीं भार्यां मामकीं गुणमेखलाम् ॥ ९६ ॥
वाग्वज्राग्रचित्तेभ्य इदं पूजयति सर्वथा ।
स्वमुद्रां वाऽथवा चिन्तेद्ध्यानं त्र्यक्षरवज्रिणाम् ॥ ९७ ॥
पञ्चबुद्धाश्च सर्वज्ञाः प्रीणन्ते नात्र संशयः ।
वने भिक्षां भ्रमेन्नित्यं साधको दृढ़निश्चयः ॥ ९८ ॥
ददन्ति भयसंत्रस्ता भोजनं दिव्यमण्डितम् ।
अतिक्रमेद्यदि वज्रात्मा नाशं वज्राक्षरं भवेत् ॥ ९९ ॥
सुरीं नागीं महायक्षीमसुरीं मानुषीमपि ।
प्राप्य विद्याव्रतं कार्यं त्रिवज्रज्ञानसेवितम् ॥ १०० ॥
इदं तत्सर्वमन्त्राणां गुह्यं तत्त्वं महानयम् ।
त्रिवज्रज्ञानसम्भूतं बुद्धबोधिप्रवेशकम् ॥ १०१ ॥
इत्याह भगवान् सर्वतथागतविद्याव्रतसमयतत्त्ववज्रः ।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वसिद्धिमण्डलवज्राभिसम्बोधिर्नाम पटलः षोडशोऽध्यायः ॥

इसके बाद परस्व का अपहरण, निरन्तर अद्भुत रूप में हत्या करना ही गुप्तरागवज्रपद है यही संवर संवृत भी कहा गया है। उसके बाद रागवज्राङ्कुशी को भार्या बनाये जो मामकी है गुणोंसे अलंकृत हैं इस प्रकार उन्हें वाग्वज्र चिह्नों से पूजित करें। स्व मुद्रा अथवा त्र्यक्षर वज्रियों का ध्यान करें। इस कृत्य से पञ्च बुद्ध आदि खुश हो जाते हैं। वह साधक वन में भ्रमण करें। भिक्षा का भोजन करें और दृढ निश्चय से इस साधना में लगे। इस अवस्था में उसे सिद्ध देवता आदि दिव्य भोजन स्वयं ही भयभीत होकर दे देते हैं। इसका अतिक्रमण जो भी करता है वह नष्ट हो जाता है। वह साधक इस अवस्था में देवता की स्त्री, राक्षसी स्त्री, मानुषी स्त्री, नागिन स्त्री, यक्षिणी आदि को प्राप्त करके त्रिवज्रज्ञान का सेवन करें। यही सभी तन्त्रों का गुह्य तत्त्व है, महायान यही है। त्रिवज्रज्ञान सम्भूत बुद्ध बोधि प्रवेशक मार्ग भी यही है । भगवान् सर्व तथागत विद्याव्रत समय तत्त्व वज्र ने यही कहा है।

षोडश पटल पूर्ण हुआ।

सप्तदशपटलः

अथ भगवन्तः सर्वतथागताः पुनः समाजमागम्य भगवन्तं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रं तथागतमनेन स्तोत्रराजेनाध्येषितवन्तः।

अक्षोभ्यवज्र महाज्ञान वज्रधातु महाबुध ।
त्रिमण्डल त्रिवज्राग्र घोषवज्र नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥
वैरोचन महाशुद्ध वज्रशान्त महारत ।
प्रकृतिप्रभास्वरान् धर्मान् देव वज्र नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥
रत्नराजसुगाम्भीर्य खवज्राकाशनिर्मल ।
स्वभावशुद्धनिर्लेप कायवज्र नमोऽस्तुते ॥ ३ ॥
वज्रामितमहाराज निर्विकल्प खवज्रधृक् ।
रागपारमिताप्राप्त भाष वज्र नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥
अमोघवज्र सम्बुद्ध सर्वाशापरिपूरक ।
शुद्धस्वभावसंभूत वज्रसत्त्व नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥
एभिः स्तोत्रपदैः शान्तैः सर्वबुद्धप्रचोदितैः ।
संस्तूयाद्वज्रसंभोगात् सोऽपि वज्रसमो भवेत् ॥ ६ ॥

अब भगवान् सर्वतथागत वज्रों ने फिर समाज में आकर सर्वतथागत कायवाक् चित्तवज्र भगवान् तथागत को निम्न स्तोत्र के द्वारा प्रार्थना किया। हे अक्षोभ्यवज्र! हे त्रिवज्राग्र! हे घोषवज्र! आपको हम नमस्कार करते हैं। हे वैरोचन! हे महाशुद्ध! हे वज्रशान्त! हे महारत! आपको नमस्कार है कृपया प्रकृति प्रभास्वर धर्मों का उपदेश आप करें। हे रत्नराज! हे महाशुद्ध! हे वज्रशान्त! हे महारत! आपको नमस्कार है कृपया प्रकृति प्रभास्वर धर्मों का उपदेश आप करें। हे रत्नराज! हे गम्भीर! हे खवज्र आकाश निर्मल स्वरूप! हे स्वभाव शुद्ध निर्लेप! हे कायवज्र! आपको नमस्कार है। हे वज्रामृत महाराज! हे निर्विकल्प! हे खवज्रधृक! हे रागपारमित प्राप्त! आप उपदेश करें। आपको नमस्कार है। हे अमोघवज्र! हे सम्बुद्ध! हे सर्वआशापूरक! हे स्वभावशुद्ध सम्भूत! हे वज्रसत्त्व आपको नमस्कार है। इन स्तोत्र पदों से जो शान्त हैं, सर्वबुद्धों से संप्रेरित हैं उन्हें वज्र संभोग द्वारा स्तुति करने से वह साधक भी वज्र समता को प्राप्त होता है।

अथ वज्रधरः शास्ता सर्वबुद्धानुकम्पकः ।
वज्रगुह्यपदं शुद्धं वाग्वज्रं समुदीरयत् ॥ ७ ॥
अहो हि सर्वबुद्धानां धर्मधातु महाक्षरम् ।
प्रकृतिप्रभास्वरं शुद्धं खधातुमिव निर्मलम् ॥ इति ॥ ८ ॥

इसके बाद वज्रधर शास्ता भगवान् जो सभी बुद्धों के ऊपर अनुकम्पा करते हैं उन्होने शुद्ध वाग्वज्र का उच्चारण किया। यह सर्वबुद्धों का महाक्षर जो धर्मधातु है, वही प्रकृति प्रभास्वर शुद्ध है, आकाश धातु के तरह ही निर्मल भी है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिरिदं सर्वबुद्धकायवज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

समयचतुष्टयं रक्ष्यं बुद्धज्ञानोदधिप्रभैः ।
महामांसं सदा भक्ष्यमिदं समयमुत्तमम् ॥ ९ ॥

इसके बाद सर्व तथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से सर्वबुद्ध काय वज्र समय का उत्पादन किया। समय चतुष्टय की रक्षा करनी चाहिए - बुद्धों के द्वारा जो ज्ञानोदधि समान हैं, उसके बाद महामांस का भक्षण करना चाहिए जो उत्तम समय कहलाता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिरिदं सर्वबुद्धवाग्वज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

समयचतुष्टयं रक्ष्यं वाक्यवज्रमहाक्षरैः ।
विण्मूत्रं च सदा भक्ष्यमिदं गुह्यं महाद्भुतम् ॥ १० ॥

इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक् चित्तवज्रों से सर्वबुद्धकाय समय वज्र को उत्पन्न किया। वाक्य वज्र महाक्षरों के द्वारा समयचतुष्टय की रक्षा करनी चाहिए। उसके बाद विष्ठा मूत्र आदि सदा भक्षण करना चाहिए। यही महा अद्भुत गुह्य भी है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिरिदं वज्रधरचित्तवज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

समयचतुष्टयं रक्ष्यं वज्रसत्त्वैर्महर्द्धिकैः ।
रुधिरं शुक्रसंयुक्तं सदा भक्ष्यं दृढ़वतैः ॥ ११ ॥

इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय वाक् चित्त वज्रों से वज्रधर चित्तवज्र समय का उत्पादन किया। वज्रसत्त्व महापुरुषों द्वारा समय चतुष्टय की रक्षा की जानी चाहिए। उसके बाद शुक्र से संयुक्त रक्त का भोजन सदा करना चाहिए। यही दृढवती का लक्षण भी है।

कायवाक्चित्तवज्राणाम् समयोऽयं महाद्भुतः ।
शाश्वतं सर्वबुद्धानां संरक्ष्यो वज्रधारिभिः ॥ १२ ॥
यश्चेमं समयं रक्षेद्वज्रसत्त्वो महाद्युतिः ।
कायवाक्चित्तगतं तस्य बुद्धो भवति तत्क्षणात् ॥ १३ ॥

काय वाक् चित्त वज्रों का यह अद्भुत समय है। इसीलिए वज्रधारि सर्वबुद्धों के द्वारा शाश्वत तत्त्व की रक्षा की जानी चाहिए। जो वज्रसत्त्व महाद्युति स्वरूप इस समय हैं उनकी रक्षा की जानी चाहिए। उसके बाद वह साधक कायवाक्चित्त के रूप में तत्काल ही बुद्ध के समान हो जाता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः प्रत्येकबुद्धसमयवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

देशना कायिकी तेषां कायवज्रप्रतिष्ठिता ।
सत्त्वावतारणं शीलसमयः परमशाश्वतः ॥ १४ ॥

अब इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि अपने कायवाक्चित्त वज्रों से प्रत्येक बुद्ध समय वज्र को उत्पन्न किया। उन लोगों की जो देशना है वह कायवज्रों में प्रतिष्ठित है। वही सत्त्वों का अवतारण है। वही शील समय और परमशाश्वत है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः श्रावकशिक्षासमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

दशकुशलान् कर्मपथान् कुर्वन्ति ज्ञानवर्जिताः ।
हीनाधिमुक्तिकास्सर्वे समयोऽयं महाद्भुतः॥ १५ ॥

अब इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने कायवाक् चित्तों से श्रावक शिक्षा समय को उत्पन्न किया। ज्ञानवर्जित सत्त्व दशकुशल कर्मपथों का अभ्यास करते हैं। वे सब ही नाधिमुक्ति हैं। यही अद्भुत समय है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिब्रह्मसमयं स्वकायवाक्चित्तेभ्यो निश्चारयामास ॥

मोहमात्रेण यत्कर्म करोति भयभैरवम् ।
बुद्धबोधिप्रणेतारं भवते कायवज्रता ॥ १६ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से ब्रह्म समय को उत्पन्न किया। केवल मोह से ही जो कर्म किया जाता है और वह भय एवं बुद्ध बोधि का प्रणेता हो जाता है साथ ही काय वज्र गुण भी आ जाता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः रुद्रसमयं स्वकायवाक्चित्तेभ्यो निश्चारयामास ॥

त्रैधातुकस्थितां सर्वामङ्गनां सुरतविह्वलाम् ।
कामयेद्विविधैर्भावैः समयः परमाद्भुतः॥ १७ ॥

अब फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय वाक् एवं चित्तों से रुद्रसमय को उत्पन्न किया। त्रैधातुक में अवस्थित, सुख के कारण विह्वल, रुद्र की अङ्गना = स्त्री को विभिन्न भावों से कामना करें। यही परम अद्भुत समय कहा गया है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः विष्णुसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

यावन्तः सत्त्वसंभूताः त्रिवज्राभेद्यसंस्थिताः ।
मारयेद्ध्यानवज्रेण वज्रधातुमपि स्वयम् ॥ १८ ॥

इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्-चित्तवज्रों से विष्णु समय को उत्पन्न किया। जितने भी त्रिवज्र अभेद्य रूप से रहन वाले सत्त्व हैं उन सभी को ध्यान वज्र के द्वारा मार डाले, यहाँ तक कि उसमें स्वयं वज्रधातु भी हैं।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः त्रिवज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तेभ्यो निश्चारयामास ॥

कायवज्रो भवेद् ब्रह्मा वाग्वज्रस्तु महेश्वरः ।
चित्तवज्रधरो राजा सैव विष्णुर्महर्धिकः ॥ १६ ॥

अब भगवान् सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय, वाक् चित्तों से त्रिवज्र समय का उत्पादन किया। काय वज्र स्वयं ब्रह्मा हैं। वाग्वज्र महेश्वर हैं। चित्तवज्र धर राजा के रूप में हैं, वे ही विष्णु कहलाते हैं जो तेजस्वी हैं।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वयक्षयक्षिणी समयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

असृक्पिशिताहारा नित्यं कामपराः स्त्रियः ।
आराधयेन्महावज्रसमयैरेभिर्दुरासदैः ॥ २० ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने कायवाक्चित्तवज्रों से सर्व यक्षयक्षिणीसमय को उत्पन्न किया। रुधिर मांसादि भक्षण में संलग्न एवं नित्य कामक्रिया में संलग्न स्त्रियों की आराधना करें - महावज्र समय के द्वारा जो दुरासद हैं।

अथ वज्रापाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वभुजगेन्द्रराज्ञीसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

पैशुन्यक्षीरिताहाराः कामगन्धपराश्च ताः ।
साधयेत्समयैरेभिरन्यथा क्लिश्यते ध्रुवम् ॥ २१ ॥

अब सर्वतथागताधिपति भगवन् वज्रपाणि ने स्वकाय-चित्तवज्रों से सर्वभुजगेन्द्रराज्ञी समय को उत्पन्न किया। पैशुन्य और क्षीर का आहार करने वाली एवं कामकला में संलग्न स्त्रियों की आराधना करनी चाहिए अन्यथा निश्चय भी क्लेश प्राप्त होता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिरसुरकन्यासमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

क्रूरा मानभराक्रान्ता गन्धपुष्पोपभोगजाः ।
समयो वज्रपात्रालिः दुर्दान्ता वज्रभैरवाः ॥ २२ ॥

अब फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायचित्तवज्रों से असुरकन्या समय को उत्पन्न किया। असुर कन्या का स्वरूप बताते हैं - क्रूर होकर मान के भार से आक्रान्त, गन्धपुष्प उपभोगों से समुत्पन्न, वज्रपत्र का समूह रूप जो वज्र भैरव हैं वे दुर्दान्त समय के रूप में अवस्थित हैं।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः राक्षसस्त्रीसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

कपालास्थिधूपतैलवसया प्रीणनं महत् ।
समयः सर्वभूतानां पवित्रोऽयं महार्थकृत् ॥ २३ ॥

अब सर्वतथागताधिपति भगवान् वज्रपाणि ने स्वकायचित्त वज्रों से राक्षस स्त्री समय को उत्पन्न किया। कपाल, अस्थि, धूप-तैल और चर्बि आदि से संनद्ध होना जिसे अतिप्रिय है वही सर्वभूतों का समय है, पवित्र एवं महार्थ कारक कहा गया है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्ववज्रडाकिनीसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

विण्मूत्ररुधिरं भक्षेत् मद्यादींश्च पिबेत् सदा ।
वज्रडाकिनीयोगेन मारयेत् पदलक्षणैः ॥ २४ ॥
स्वभावेनैव संभूता विचरन्ति त्रिधातुके ।
आचरेत्समयं कृत्स्नं सर्वसत्त्वहितैषिणा ॥ २५ ॥

अब फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से सर्ववज्रडाकिनी समय को उत्पन्न किया। विष्ठामूत्र और रुधिर का भक्षण करे। निरन्तर मद्य आदि का पान करें। पद लक्षणों = मन्त्रों से वज्रडाकिनी योग में स्थित होकर मारण का प्रयोग करें। त्रिधातुक में स्वभाव से ही युक्त होकर विचरण करते रहते हैं वे सिद्ध वज्रधारी, इसीलिए समय का सम्पूर्ण रूपेण ध्यान भावना करनी चाहिए जो सर्वसत्त्वों का हितैषी है।

सर्वत्रैधातुकसमयसमवसरणो नाम समाधिः ।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः कायसिद्धि समयवज्रं कायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

कायिकं त्रिविधं सर्वं कारयेद्वज्रसम्भवम् ।
बुद्धकार्यकरं नित्यं सत्त्वधातोः समन्ततः ॥ २६ ॥

सर्व त्रैधातुक समयसमवसरण नामक समाधि यही है। अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायचित्तवज्रधातुओं से कायसिद्धिसमयवज्र को उत्पन्न किया। त्रिविध कायिक कर्म जो वज्रसम्भव हैं उन्हे करना चाहिए। सत्त्वधातुओं के लिए चारों ओर से बुद्ध कार्य के ही फलस्वरूप वे निर्गत हुए हैं।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिर्वाक्सिद्धिसमयवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

वाक्यकर्मकृतं कृत्स्नं त्रैलोक्यामलमण्डलम् ।
वाक्सिद्धिपदरम्योऽयं समयो दुरतिक्रमः॥ २७ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से वाकसिद्ध समय वज्र को उत्पन्न किया। वाक् कर्म के द्वारा सम्पादित समग्र त्रैलोक्य–अमल मण्डल ही वाक्सिद्धि की परम रमणीय अवस्था है यही दुरतिक्रम समय कहलाता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः चित्तसिद्धिवज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

मनोवज्रमयं सर्वं भावयेद् दृढ़वज्रधृक् ।
एषो हि समयः प्रोक्तः त्रिवज्राभेद्यवज्रिणाम् ॥ २८ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से चित्तसिद्धि वज्र समय को उत्पन्न किया। दृढ वज्रधारक साधक सब कुछ–सर्व पदार्थों को मनोवज्र के रूप में भावना करे। यही त्रिवज्र –अभेद्य वज्र धारकों का समय कहा गया है।

इत्याह भगवान् समन्तभद्रो वज्रसत्त्वः ।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वमन्त्रवज्रसारसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

बुद्धांश्च बोधिसत्त्वांश्च प्रत्येकश्रावकांस्तथा ।
कायवाक्चित्तसंयोगैर्वन्दयन् नाशमाप्नुयात् ॥ २६ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से सर्वमन्त्रवज्रसार समय को उत्पन्न किया। बुद्धों को, बोधिसत्त्वों को और प्रत्येकश्रावकों को भी काय वाक् चित्त संयोगों से नमस्कार-वन्दना करने से वह नष्ट हो जाता है।

[यहाँ काय वाक् चित्तों के भिन्न रूप से नमस्कार नहीं करना है किन्तु उनके एक स्वरूप द्वारा ही नमस्कार विधान किया गया है]

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रध्यानसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास॥

वज्रसत्त्वस्य सर्वत्र कायवाक्चित्तमण्डले ।
ध्यानं त्रिवज्रयोगेन ध्यातव्यं मन्त्रजापिना॥ ३० ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक् चित्त वज्रों से सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र ध्यान समय को समुत्पन्न किया। वज्रपाणि को सर्वत्र काय-वाक् चित्त मण्डल में वज्रसत्त्व का त्रिवज्रयोग से ध्यान करना चाहिए।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वमन्त्रवज्रसाधनसमयसम्बरं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

सत्त्वधातुं समासेन ध्यानवज्रेण चोदयेत् ।
त्रिवज्रवन्दनाग्राग्र्यः समयो वज्रसम्भवः ॥ ३१ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्तोंसे सर्वमन्त्रवज्रसाधन समय सम्बर को उत्पन्न किया। संक्षेप में, समग्र सत्त्व धातु को ध्यान वज्र से संप्रेरित करे। त्रिवज्र वन्दनाओं में अग्र गण्य समय ही वज्र सम्भव है।

अथ वज्रपाणिः *सर्वतथागताधिपतिः* सेवासाधनोपसाधनमहासाधनसमयसम्बरं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

खधातुं विण्मूत्रवज्रेण परिपूर्णं विचिन्तयेत् ।
दद्यात् त्रियध्वबुद्धेभ्यः समयः परमशाश्वतः ॥ ३२ ॥

अब फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से सेवासाधनोपसाधन – महासाधन–समय सम्बर को उत्पन्न किया। समग्रखधातु को विष्ठा एवं मूत्रों से परिपूर्ण है ऐसी भावना करें। उसके बाद वह सब त्रियध्व बुद्धों को अर्जित करें। यही परमशाश्वत समय है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्ववज्रान्तर्धानसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

कामयेत्प्रतिदिनं वज्री चतुःसन्ध्यं यथोत्तमम् ।
द्रव्यं चोपहरेन्नित्यं समयो वज्रपूरकः ॥ ३३ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय–वाक्–चित्त–वज्रों से सर्ववज्रान्तर्धानसमय को उत्पन्न किया। वज्री प्रतिदिन उत्तम चार सन्ध्याओं की कामना करें। नित्य ही पदार्थों का अर्पण भी करें। यही समय वज्रपूरक कहा है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः खविद्याधरसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

कायवाक्चित्तवज्राणां मुकुटे ध्यानं विचिन्तयेत् ।
त्रिवज्रसमयैः सर्वैः क्रुद्धैर्जेतुं न शक्यते ॥ ३४ ॥

इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्तों से खविद्याधर समय को उत्पन्न किया। कायवाक्चित्तवज्रों के मुकुट में ध्यान करना चाहिए। सभी त्रिवज्र समयों के द्वारा जो अति क्रुद्ध भी क्यों न हो वे भी जीत नहीं सकते– इसे।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वमन्त्रधरादिकर्मिकसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

भजने कायवज्रस्य बहिर्वज्रधरस्य च ।
वज्रधर्मैः सदा कार्या सूत्रोद्घाटविधिक्रिया ॥ ३५ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति भगवान् वज्रपाणि ने स्वकायचित्त-वज्रों से सर्वमन्त्र धरादिकर्मिक समय को उत्पन्न किया। कायवज्र के भोजन में और उसके बाहर वज्रधर का भोजन, इन दोनों का सदा ही वज्रधमों के द्वारा सूत्र उद्घाटन क्रिया करनी चाहिए ।

इत्याह भगवान् स्वभावशुद्धवज्रः ।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्ववज्रधरस्वकायवाक्चित्तहृदयवज्रसमतां विचिन्त्य तूष्णीमभूत् ॥

अथ खल्वनभिलाप्यानभिलाप्यबुद्धक्षेत्रसुमेरुपरमाणुरजःसमा बोधिसत्त्वा महासत्त्वाः सर्वतथागतान् प्रणिपत्यैवमाहुः। किमयं भगवान् सर्वतथाताधिपतिर्वज्रधरः सर्वतथागतबोधिसत्त्वपर्षन्मण्डलमध्ये तूष्णीम्भावेनाधिवासयति। अथ भगवान् सर्वतथागताधिपतिस्तान् सर्वबोधिसत्त्वानेवमाह । कायवाक्चित्तवज्रानुपलब्धिस्वभावाक्षरपदं कुलपुत्रा अयं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिः निःस्वभावाक्षरपदं विचार्य तूष्णीं व्यवस्थितः ॥

अस्य च कुलपुत्राः सर्वतथागताधिपतेः चिन्तया एतदभूत् ॥

कायाक्षरमनुत्पन्नं वाक्चित्तपदलक्षणम् ।
खवज्रकल्पनाभूतं मिथ्यासंग्रहसंग्रहम् ॥ इति ॥ ३६ ॥

स्वभावशुद्धवज्र भगवान् ने ऐसा कहा है।

अब, इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि, सर्ववज्रधर-स्वकाय-वाक्चित्त-हृदय वज्र समता का चिन्तन करके शान्त = मौन हो गए।

जब वे इस प्रकार मौन हो गए तब निश्चय ही अनभिलाप्य - अनन्त बुद्ध क्षेत्र परमाणु रजों के समय बोधि सत्त्व एवं महासत्त्वों ने सर्वतथागतों को प्रणाम करके यह कहा। यह क्या सर्वतथागताधिपति वज्रधर भगवान् सर्वतथागत बोधिसत्त्व परिषद् मण्डल में ही मौन होकर रहने लगे।

इस प्रश्न को सुनकर सर्वतथागताधिपति भगवान् ने सभी बोधिसत्त्वों से यह कहा। हे कुलपुत्रों! काय-वाक्-चित्त-वज्र-अनुपलब्धि-स्वभाव-अक्षर पद ही यह सर्वतथागत काय-वाक्चित्त वज्राधिपति है इसीलिए उन्होंने निःस्वभाव अक्षर पद का विचार कर के मौन हो गए हैं।

और यह भी हे कुलपुत्रों इन सर्वतथागताधिपति की चिन्ता से भी यह हुआ है।

काय-अक्षर अनुत्पन्न है जो वाक्चित्त पदों का लक्षण कहा गया है। खवज्र भी कल्पना से उत्पन्न है एवं मिथ्या संग्रह का कथन या संग्रह मात्र है। इति।

अथ मञ्जुश्रीप्रमुखा महाबोधिसत्त्वाः तान्सर्वतथागतानेवमाहुः। मा भगवन्तः सर्वतथागता वाग्वज्रपदं मिथ्यासमुदयेन कल्पयथ। तस्कस्माद्धेतोः । सर्वतथागतवज्रधातुष्ववचरितगतानुगतिकोऽयं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिः। तत्कस्माद्धेतोः। सन्ति ब्रह्माद्या महाबोधिसत्त्वा महाभिज्ञाज्ञानसंप्राप्ताः सर्वधर्मलक्षणस्वभावमजानन्त एवं विकल्पयन्ति॥ किमयं सर्वतथागतमहावज्रात्मा सर्वतथागतधर्मवज्रतत्त्वमनभिज्ञाय गुह्याक्षरं निर्दिशतीति।

अथ भगवन्तः सर्वतथागतास्तान् बोधिसत्त्वानेवमाहुः। तिष्ठन्तु तावत् भवन्तो महाबोधिसत्त्वा वयमपि सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रगुह्याक्षरं प्राप्य कायवाक्चित्तबोधिं न जानीमहे। तत्कस्माद्धेतोः । निःस्वभावाक्षरसम्भूत अनुत्पादवज्राभिसंबोधिर्यावन्तः कुलपुत्राः सत्त्वाः सत्त्वसंग्रहेण संगृहीताः सर्वे ते बोधिप्रतिष्ठिताः बुद्धवज्राः । तत्कस्माद्धेतोः। कायवाक्चित्तवज्रज्ञानप्राप्ता बतामी सत्त्वास्त्रिकायवज्रधर्मतामुपादाय।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्राधिपतिस्तान् सर्वतथागतबोधिसत्त्वांश्चैवमाह ॥

स्वभावशुद्धनैरात्म्ये धर्मधातुनिरालये ।
कल्पना वज्रसम्भूता गीयते न च गीयते ॥ ३७ ॥

अब मञ्जुश्री प्रमुख महाबोधि सत्त्वों ने उन सर्वतथागतों को यह कहा। नहीं, भगवान् सर्वतथागत आप लोग वाग्वज्र पद को मिथ्या समुदय = मिथ्या

सिद्धान्त कथन के रूप में कल्पना करें। क्योंकि सर्वतथागत वज्र धातुओं में विचरण करने वाले गतानुगतिक सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्राधिपति कौन हैं? क्योंकि ब्रह्मा आदि महाबोधि सत्त्व, महा अभिज्ञा-ज्ञान से प्राप्त सर्वधर्म लक्षण स्वभाव को न जानने वाले हैं जो इसे विकल्पित करते हैं। क्या वे सर्वतथागत महावज्रात्मा सर्वतथागत धर्म वज्रतत्त्व को न बताकर केवल गुह्य अक्षर का ही निर्देश करते हैं?

अब भगवान् सर्वतथागतों ने बोधिसत्त्वों से यह कहा। आप सब महाबोधिसत्त्व रुकें, हम भी सर्वतथागत कायवाक् चित्तवज्रगुह्याक्षर को प्राप्त कर कायवाक्चित्त बोधि को नहीं जानते हैं। क्योंकि निःस्वभाव-अक्षरों से समुत्पन्न अनुत्पाद वज्राभिसम्बोधि जब तक कुल पुत्र सत्त्व, संग्रह द्वारा संगृहीत हैं वे सब बोधि में प्रतिष्ठित बुद्ध वज्र हैं। क्योंकि काय-वाक्-चित्त-वज्र ज्ञान प्राप्त वे सत्त्वगण त्रिकाय वज्रधर्मता को लेकर ही रहते हैं, निश्चय भी।

अब सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्राधिपति वज्रपाणि ने सर्वतथागत-बोधिसत्त्वों से यों कहा।

स्वभाव शुद्ध नैरात्म्य में और धर्मधातु निरालय में जो भी वज्रसम्भूत कल्पना है उसका कहीं गायन होता है कहीं नहीं होता।

अथ भगवन्तः सर्वतथागता भगवन्तं महावज्रपाणिं सर्वतथागतस्वामिनं नमस्कृत्यैवमाहुः। कुत इमानि भगवन् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रसिद्धीति समवसरन्ति? क्व वा प्रतिष्ठितानि?

सर्वतथागताधिपतिर्वज्रधरः प्राह। स्वकायवाक्चित्तवज्रसमतासन्तानवज्रप्रतिष्ठितानि भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वसिद्धीनि सर्ववज्रज्ञानानि सर्वं यावत् त्रैधातुकमिति।

सर्वतथागताः प्रोचुः। सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रसिद्धीनि सर्वं त्रैधातुकं च भगवन् कुत्र स्थितम्? सर्वतथागतज्ञानाधिपतिः प्राह। आकाशधातुप्रतिष्ठितानि भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रसिद्धीनि सर्वं त्रैधातुकं च। सर्वतथागताः प्रोचुः। आकाशं भगवन् कुत्र स्थितम्? वज्रधरः प्रोचुः (प्रोवाच)। न क्वचित्। अथ ते सर्वतथागता बोधिसत्त्वा आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ता इमं धर्मघोषमकार्षुः।

अहो वज्र अहो वज्र अहो वज्रस्य देशना।
यत्र न कायवाक्चित्तं तत्र रूपं विभाव्यते ॥ ३८ ॥

अब इसके बाद भगवन्त सर्वतथागतों ने भगवान् सर्वतथागतस्वामी वज्रपाणि को नमस्कार कर यह कहा। हे भगवन्! वे सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र सिद्धियाँ कहाँ से आती हैं और कहाँ प्रतिष्ठित होती हैं? सर्वतथागताधिपति वज्रधर ने कहा। अपने कायवाक्चित्त वज्रसमता सन्तान वज्र में प्रतिष्ठित हैं आप भगवान् सर्वतथागत, सभी सिद्धियाँ और सर्ववज्र ज्ञान जो कुछ है यह सब त्रैधातुक ही है। सर्वतथागतों ने कहा। सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र सिद्धियाँ और त्रैधातुक कहाँ स्थित है? सर्वतथागत ज्ञानाधिपति ने कहा। आकाश धातु में प्रतिष्ठित हैं भगवान् सर्वतथागत और सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र सिद्धि सब त्रैधातुक भी। सर्वतथागतों ने कहा। आकाश हे भगवन् कहाँ स्थित है? वज्रधर ने कहा कहीं भी नहीं। अब यह सुनकर सभी तथागत बोधिसत्त्व आश्चर्य युक्त एवं अद्भुततायुक्त हो गए और उन्होंने इस प्रकार घोषणा की। अहो वज्र! अहो वज्र! वज्र की देशना भी आश्चर्यमय है। जहाँ काय, वाक् और चित्त नहीं हैं वही रूप की कल्पना की जाती है।

अथ वज्रधरः शास्ता सर्वबुद्धनमस्कृतः ।
त्रिवज्राग्र्यो महाग्राग्र्यस्त्रिवज्रः परमेश्वरः ॥ ३९ ॥
भाषते सर्वसिद्धीनां विद्यापुरुषभावनाम् ।
खवज्रधातुमध्यस्थं भावयेद्बुद्धमण्डलम् ॥ ४० ॥
कायवज्रं प्रभावित्वा वज्रं मूर्ध्नि प्रभावयेत् ।
त्रिमुखं त्रिकायसम्भूतं विस्फुरन्तं विचिन्तयेत् ॥ ४१ ॥
वज्रचक्रधरं ध्यात्वा शीघ्रं बोधिमवाप्नुयात् ।
कुलभेदेन सर्वेषामिदं गुह्यं विचिन्तयेत् ।
अन्यथा भावना तेषां सिद्धिर्भवति नोत्तमा ॥ ४२ ॥

अब वज्रधर, शास्ता, सर्वबुद्धों द्वारा नमस्कृत त्रिवज्राग्री, महावज्राग्र, त्रिवज्र परमेश्वर ने कहा सभी सिद्धियों के द्वारा वज्रपुरुष की भावना खवज्रधातु में स्थित बुद्धमण्डल की भावना करनी चाहिए। कायवज्र का ध्यान करके फिर शिर में वज्र की भावना करे। त्रिकाय सम्भूत, विस्फुरन्त त्रिमुख का ध्यान

करे। वज्रचक्रधर का ध्यान करके तत्काल ही बोधि प्राप्त कर सकता है। कुल भेद से सभी के लिए इसी गुह्य का चिन्तन करें। अन्यथा उनकी भावना की सिद्धि नहीं होती।

इत्याह च भगवान् विद्यापुरुषवज्रगुह्यः ॥

धातुभूतां महाराज्ञीं प्रीणयन्तीं विचिन्तयेत् ।

एवं तुष्यन्ति ते वृषभाः वज्रकायत्रिलक्षणाः ॥ ४३ ॥

भगवान् विद्या पुरुष वज्र गुह्य ने ऐसा ही कहा है। धातुभूत, प्रीतियुक्त महारानी का चिन्तन करें। इससे वृषभस्वरूप वज्रकाय त्रिलक्षण खुश होते हैं।

यश्चेदं भावयेत्कश्चिद्बोधिसत्त्वो महायशाः ।

त्रिकायसिद्धिमाप्नोति सप्ताहेन महाद्युतिः ॥ ४४ ॥

जो महायशस्वी बोधिसत्त्व इस प्रकार चिन्तन करता है, एक सप्ताह में त्रिकाय की सिद्धि प्राप्त कर लेता है।

अथ भगवान् वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि कायवाक्चित्तवज्रसमुच्चयगुह्यरहस्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

कायवाक्चित्तसमयं महामुद्रार्थकल्पनाम् ।

भावयेद्विधिवत्सर्वान् क्षणाद्बुद्धत्वमाप्नुयात् ॥ ४५ ॥

अब, इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी अपने काय-वाक्चित्त वज्रों से काय वाक् चित्त वज्र समुच्चय गुह्यरहस्य को उत्पन्न किया। महामुद्रार्थ की कल्पना, कायवाक्चित्त समय को विधिपूर्वक चिन्तन करते हुए तत्क्षण ही बुद्धत्व प्राप्त होता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वसाधककायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

हस्तमुद्रां न बध्नीयात् यदीच्छेत्सिद्धिमुत्तमाम् ।

समयः सर्वमन्त्राणां नातिक्रम्यो जिनैरपि ॥ ४६ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी सर्वसाधक काय वाक्चित्त वज्रों से रहस्य को उत्पन्न किया। यदि उत्तम सिद्धि की कामना है तो उसे हस्तमुद्रा का बन्धन नहीं करना चहिए। सभी मन्त्रों का जो रहस्य है उसे बुद्धों को भी अतिक्रमण नहीं करना चाहिए।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वबुद्धसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

विण्मूत्रशुक्ररक्तानां जुगुप्सां नैव कारयेत् ।
भक्षयेद्विधिना नित्यमिदं गुह्यं त्रिवज्रजम् ॥ ४७ ॥

अब, फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने काय-वाक्चित्त वज्रों से सर्वबुद्ध समय को उत्पन्न किया। विष्ठा, मूत्र, शुक्र, रक्तादि के प्रति घृणा की भावना नहीं करनी चाहिए। विधिपूर्वक नित्य इनका भक्षण करना चाहिए यही गुह्य त्रिवज्रोत्पन्न साधना है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरति वाग्वज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

त्रैधातुकपथे रम्ये यावन्त्यो योषितः स्मृताः ।
कामयेद्विधिवत् सर्वा वाग्वज्रैर्न जुगुप्स्यते ॥ ४८ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी स्वकायवाक्चित्त वज्रों से वाग्वज्र समय को उत्पन्न किया। रमणीय त्रिधातुक पथ में जितनी भी स्त्रियाँ हैं विधिपूर्वक उनकी कामना करें, इसे करने से वाग्वज्रों से वह जुगुप्सित नहीं होता।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि चित्तवज्रसमयं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

यावन्तः सर्वसमयास्त्रिवज्रकायसंस्थिताः ।
प्रीणयन्ति वज्रसमयैः चित्तवज्रं न जुगुप्सयेत् ॥ ४९ ॥

अब फिर से सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी अपने कायवाक् चित्तवज्रों से चित्तवज्रसमय को उत्पन्न किया। जितने भी स्त्रिकाय संस्थिता सर्वसमय हैं वे सब वज्र समय के द्वारा खुश ही होते हैं इसीलिए चित्तवज्र के प्रति घृणा का भाव न रखें।

इत्याह भगवान् त्रिवज्रसमयः। अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वतथागतगुह्यवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ।

पञ्चस्कन्धाः समासेन पञ्चबुद्धाः प्रकीर्तिताः ।

वज्र-आयतनान्येव बोधिसत्त्वाग्र्यमण्डलमिति ॥ ५० ॥

भगवान् त्रिवज्रसमय ने ऐसा कहा है। अब फिर सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने कायवाक्चित्त वज्रों से सर्वतथागत गुह्य वज्र को उत्पन्न किया। पञ्च स्कन्ध ही संयुक्त = संक्षेप में पञ्च बुद्ध कहे गए हैं। उनका फैलावट ही वज्र कहा गया है। वे ही बोधिसत्त्वों के अग्रमण्डल भी हैं।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि त्रैधातुकसमुच्चयवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

पृथिवी लोचना ख्याता अब्धातुर्मामकी स्मृता ।

पाण्डराख्या भवेत्तेजो वायुस्तारा प्रकीर्तिता ॥ ५१ ॥

खवज्रधातुसमयः सैव वज्रधरः स्मृतः ।

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी स्वकाय वाक् चित्तवज्रों से त्रैधातुक समुच्चय का उत्पादन किया। पृथिवी धातु-लोचना है। जल धातु मामकी कही गई है। पाण्डुरा तेज है और तारा ही वायु है।

खवज्रधातु समय ही वज्रधर कहा गया है। ऐसा कहा सर्वतथागत भुवनेश्वर वज्रसत्त्व ने।

इत्याह भगवान् सर्वतथागतभुवनेश्वरो महावज्रसत्त्वः। अथ भगवान्सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रस्तथागतः सर्वतथागतसमताविहारं नाम समाधिं समापन्नः । समापद्य च सर्वतथागतपर्षन्मण्डलमवलोक्य तृष्णीमभूत् ।

अथ खलु मैत्रेयो बोधिसत्त्वो महासत्त्वः सर्वतथागतान् प्रणिपत्यैवमाह। सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रगुह्यसमाजाभिषिक्तो भगवान् वज्राचार्यः सर्वतथागतैः सर्वबोधिसत्त्वैश्च कथं द्रष्टव्यः? सर्वतथागताः प्राहुः। बोधिचित्तो वज्र इव कुलपुत्र सर्वतथागतैः सर्वबोधिसत्त्वैश्च द्रष्टव्यः। तत्कस्माद्धेतोः? बोधिचित्तश्चाचार्यश्चाद्वयमेतदद्वैधीकारम्। यावत् कुलपुत्र संक्षेपेण कथयामः। यावन्तो दशदिग्लोकधातुषु बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च

तिष्ठन्ति ध्रियन्ति यापयन्ति च, सर्वे ते त्रिष्कालमागत्य तमाचार्यं सर्वतथागतपूजाभिः संपूज्य स्वस्वबुद्धक्षेत्रं पुनरपि प्रक्रामन्ति, एवं च वाग्वज्राक्षरपदं निश्चारयन्ति। पितास्माकं सर्वतथागतानां मातास्माकं सर्वतथागतानाम्। तद्यथापि नाम कुलपुत्र यावन्तो बुद्धा भगवन्तो दशसु दिक्षु विहरन्ति तेषां च बुद्धानां भगवतां यावत् कायवाक्चित्तवज्रजः पुण्यस्कन्धः स च पुण्यस्कन्ध आचार्यस्यैव रोमकूपाग्रविवरे विशिष्यते। तत्कस्य हेतोः? बोधिचित्तं कूलपुत्र सर्वबुद्धज्ञानानां सारभूतमुत्पत्तिभूतं यावत् सर्वज्ञज्ञानाकरमिति।

अथ खलु मैत्रेयो बोधिसत्त्वो महासत्त्वो भीतः सन्त्रस्तमानसस्तूष्णीमभूत्।अथखलुअक्षोभ्यस्तथागतो रत्नकेतुस्तथागतोऽमितायुस्तथागतोऽमोघसिद्धिस्तथागतो वैरोचनस्तथागतः सर्वधर्मसिद्धिसमयालम्बनवज्रं नाम समाधिं समापद्यैतान् सर्वबोधिसत्त्वानामन्त्रयते स्म। श्रृण्वन्तु भगवन्तः सर्वबोधिसत्त्वाः येऽपि ते दशसु दिक्षु बुद्धा भगवन्तस्त्र्याध्ववज्रज्ञानसंभूतास्तेऽपि सर्वे गुह्यसमाजाभिषिक्तमाचार्यमागत्य पूजयन्ति नमस्कुर्वन्ति च। तत्कस्माद्धेतोः? शास्ता सर्वबुद्धबोधिसत्त्वानां सर्वतथागतानां च स एव भगवान् महावज्रधरः सर्वबुद्धज्ञानाधिपतिरिति। अथ ते सर्वे महाबोधिसत्त्वाःतान्सर्वतथागतानेवमाहुः। सर्वतथागतकायवाक्चित्तसिद्धीति भगवन्तः कुत्र स्थितानि क्व वा संभूतानि? सर्वतथागताः प्राहुः। त्रिकायगुह्यं सर्वतथागतकायवाक्चित्तं वज्राचार्यस्य कायवाक्चित्तवज्रे स्थितम्। महाबोधिसत्त्वा आहुः। कायवाक्चित्तगुह्यवज्रं कुत्र स्थितम्? सर्वतथागताः प्राहुः। आकाशे स्थितम्। महोबोधिसत्त्वाः प्राहुः। आकाशं कुत्र स्थितम्? सर्वतथागताः प्राहुः। न क्वचित्। अथ ते महाबोधिसत्त्वा आश्चर्यप्राप्ता अद्भुतप्राप्ताः तूष्णींस्थिता अभूवन्।

अथ भगवान् वज्रपाणि स्तथागतः सर्वतथागतकायवाक्चित्तगुह्यवज्रसमाधेर्व्युत्थाय सर्वतथागतान् सर्वबोधिसत्त्वांश्चामन्त्रयते स्म। श्रृण्वन्तु भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वबोधिसत्त्वाश्च सर्वतथागत बोधिसत्त्वसंभवज्रं नाम महामण्डलम्।

अथ खलु सर्वतथागता बोधिसत्त्वाश्च कृताञ्जलिपुटा भगवन्तं वज्रधरमेवमाहुः। देशयतु भगवान् देशयतु सुगतो महामण्डलमिति।

खधातुमध्यगतं चिन्तेच्चतुरस्त्रं सुशोभनम् ।
बुद्धमण्डलयोगेन ध्यानवज्रं प्रचोदयेत् ॥ ५२ ॥

अब सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र तथागत भगवान् ने सर्वतथागत समता विहार नामक समाधि में प्रवेश किया। उस समाधि में जाकर सर्वतथागत परिषद् मण्डल को देखकर मौन हो गए।

अब इसके बाद मैत्रेय - बोधिसत्त्व-महासत्त्व ने सर्वतथागतों को प्रणाम कर यह कहा। सर्वतथागत काय-वाक्-चित्त-वज्र-गुह्य समाज में अभिषिक्त भगवान् वज्राचार्य को सर्वतथागतों के द्वारा और सर्व बोधिसत्त्वों के द्वारा किस दृष्टि से देखा जाना चाहिए? यह सर्वतथागतों ने पूछा। हे कुलपुत्रों सर्वतथागत - बोधिसत्त्वों के द्वारा उन्हें बोधि चित्त वज्र के जैसे रूप में देखना चाहिए। ऐसा क्यों है कि - बोधिचित्त और आचार्य को द्वैधीकरण न करना ही अद्वय है। जहाँ तक मैं संक्षेप में कहता हूँ। जितने भी दशदिक् लोकधातुओं में बुद्ध और बोधिसत्त्व गण निवास करते हैं, रहते हैं, धारण करते हैं, समय बिताते हैं, वे सभी त्रिस्काल में आकर उस आचार्य को सर्वतथागत पूजाओं के द्वारा पूजा करके स्वबुद्ध क्षेत्र को फिर भी चले जाते है। एवं वाग्वज्राक्षर पद को उत्पन्न करते हैं। हमारे सर्वतथागत के पिता वे ही हैं। हमारे सर्वतथागत की माता भी वे ही हैं और जैसा कि हे कुल पुत्र जितने भी बुद्ध भगवान् दशों दिशाओं में विहार करते हैं उन बुद्ध भगवानों का काय-वाक् चित्त वज्रों से उत्पन्न पुण्य का समूह है वह पुण्य स्कन्ध आचार्य का ही है और रोमकूपों के अग्र विवर में विशिष्ट हो जाता है। वह क्यों? हे कुल पुत्र बोधिचित्त सर्वबुद्ध ज्ञानों का सारभूत है और इस प्रकार सर्वज्ञ ज्ञानाकर भी यही है।

अब मैत्रेय बोधिसत्त्व, सन्त्रस्त होकर मौन हो गये।

अब, निश्चय भी अक्षोभ्यस्तथागत, रत्नकेतु तथागत, अमोघसिद्धि तथागत और वैरोचन तथागत सर्वधर्म सिद्धि समयावलम्बन नामक समाधि में प्रविष्ट होकर इन सर्वबोधिसत्त्वों को कहने लगे। सुनें आप भगवान् सर्वबोधिसत्त्व, जो भी दशों दिशाओं में बुद्ध भगवान् त्र्यध्ववज्र ज्ञान से समुत्पन्न वे सब गुह्यसमाज में अभिषिक्त आचार्य के पास आकर पूजा और नमस्कार करने लगे। यह क्यों! सर्वबुद्धबोधिसत्त्वों का सर्वतथागतों का वे भी भगवान् महावज्रधर सर्वबुद्धज्ञानाधिपति त्रि शास्ता हैं। अब वे सभी महाबोधिसत्त्वों ने

उन सर्वतथागतों से यह कहा। सर्वतथागत काय-वाक्चित्त सिद्धियाँ हे भगवन्! कहाँ स्थित हैं और कहाँ से उत्पन्न हुई हैं - सर्वतथागतों ने कहा। त्रिकायगुह्य, सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्राचार्य के कायवाक्चित्तवज्र में स्थित हैं। महाबोधिसत्त्वों ने कहा। काय वाक् चित्त गुह्यवज्र कहाँ अवस्थित हैं? सर्वतथागतों ने कहा। आकाश में स्थित हैं। महाबोधिसत्त्वों ने कहा। आकाश कहाँ स्थित है? सर्वतथागतों ने कहा। कहीं भी नहीं अब वे महाबोधिसत्त्व आश्चर्य को प्राप्त हुए अद्भुतता को प्राप्त हुए फिर मौन हो गए।

अब भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्वतथागत कायवाक् चित्तगुह्य वज्र समाधि से उठकर सर्वतथागत बोधिसत्त्वों को आमन्त्रित किया। आप भगवान् सर्वतथागत, सर्वबोधिसत्त्व सर्वतथागत बोधि सत्त्व संभव वज्र नामक महामण्डल के विषय में सुनें।

अब, निश्चय भी सर्वतथागत बोधिसत्त्वों ने अञ्जलि बद्ध होकर भगवान् वज्रधर को यह कहा। हे सुगत! हे भगवान् महामण्डल के विषय में आप फिर से देशना करें।

आकाश धातु मध्य में स्थित चतुरस्र, सुशोभन बुद्धमण्डल योग द्वारा ध्यान वज्र की भावना करनी चाहिए।

वज्रमण्डलध्यानेन आसनं सर्वचक्रिणाम् ।
पूजां तेनैव विधिना कुर्वीत मतिमान् सदा ॥ ५३ ॥
आचार्यं हृदये ध्यात्वा अभिषेकं समारभेत् ।
खधातुं सर्वबुद्धैस्तु परिपूर्णं विचिन्तयेत् ॥ ५४ ॥
पातयेद्विधिवत् सर्वान् अभिषेकपदैस्त्रिभिः ।
अनेन बोधिमाप्नोति सर्वसत्त्वहितैषिणीम् ॥
सिद्धयति कायवाक्चित्तं सर्वसिद्धिमहाद्भुतम् ॥ ५५ ॥
॥ सर्वबुद्धबोधिसत्त्वसमयचक्रं नाम ध्यानमण्डलम् ॥

वज्र मण्डल ध्यान द्वारा सर्वचक्रिओं का आसन की कल्पना करने के बाद उसी विधि से पूजा करनी चाहिए विद्वान् साधक द्वारा। आचार्य को हृदय में रखकर अभिषेक का आरंभ करें। और आकाश धातु को सर्वबुद्धों से परिपूर्ण है ऐसी भावना करनी चाहिए। तीन अभिषेक पदों से सभी को

विधिवत् आकर्षित करें। इसी से सर्वलोक कल्याण कारक बोधि प्राप्त कर सकता है। और सभी सिद्धियों में अद्भुत कायवाक्चित्तों की सिद्धि होती है।

सर्व बुद्ध बोधिसत्त्व समय चक्र नामक ध्यान मण्डल यही है।

अथ खलु वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वतथागतवज्रयोगं नाम कायवाक्चित्तगुह्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास। ॥ हूँ ह्रीः खँ ॥

खधातुमध्यगतं चिन्तेदस्थिमांसादिमण्डलम् ।
त्रिकायवाक्चित्तहृदये वज्रसत्त्वं विभावयेत् ॥ ५६ ॥
क्रूरं विकृतं संक्रुद्धं नीलोत्पलसमप्रभम् ।
चतुर्भुजं विधानेन कपालहस्तं विभावयेत् ॥ ५७ ॥
पञ्चरश्मिप्रभोद्योतां स्वजिह्वां भावयेद्व्रती।
ध्यानमन्त्रप्रयोगेण रुधिराकर्षणमुत्तमम् ॥ ५८ ॥
त्रिशूलं वज्रसमयं कीलकं दारुणोत्तमम् ।
पीड़येद्वज्रयोगेन बुद्धकायमपि स्वयम् ॥ इति ॥ ५९ ॥

अब, फिर, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने सर्वतथागत वज्र योग नामक समाधि में प्रविष्ट होकर स्वकायवाक्चित्त वज्रों से काय-वाक्चित्त गुह्यों को उत्पन्न किया। हूँ । ह्रीं । खँ ।

आकाश मण्डल में व्याप्त हड्डि-माँस आदि के मण्डल का चिन्तन करते हुए त्रिकायवाक्चित्त हृदय में वज्रसत्त्व का ध्यान करें। क्रूर, विकृत, संक्रुद्ध, नील-कमल जैसी प्रभायुक्त चार हाथ और कपालधारण करने वाले का ध्यान करें। पाँच तेज के प्रभाव से उद्दत अपने जिह्वा का चिन्तन करे व्रतधारी, और ध्यान मन्त्र के प्रयोग द्वारा रुधिर से भी उत्तम आकर्षण किया जाता है। त्रिशूल, वज्रसमय, भयंकर कीलक का धारण करें। वज्र योग द्वारा इससे स्वयं बुद्ध का शरीर भी वहाँ आ जाता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि वज्राहारसमयकृत्यार्थं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

अन्नं वा अथवा पानं यत्किञ्चिद्भक्षयेद्व्रती।
विण्मूत्रमांसयोगेन विधिवत्परिकल्पयेत् ॥ ६० ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से वज्राहार समय कृत्य को उत्पन्न किया। अन्न का पान अथवा जो कुछ भक्ष्य योगी कल्पित करता है उसे विष्ठा-मूत्र-मांस आदि से विधिपूर्वक परिकल्पित करना चाहिए।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपति पुनरपि सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रपूजाग्र्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

पञ्चोपहारपूजाग्रैः पूजनं च प्रकल्पयेत् ।
एषो हि सर्ववज्राणां समयो दुरतिक्रमः ॥ ६१ ॥

अब सर्वतथागत वज्रपाणि ने फिर भी स्वकायवाक् चित्त वज्रों से सर्वतथागत कायवाक् चित्त वज्र पूजा के अग्रता को उत्पन्न किया। पञ्च उपचार पूजा विधि से पूजा की कल्पना करनी चाहिए। यही सभी वज्रों का दुरतिक्रम समय है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वतथागतकायवाक्चित्तपूजारहस्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

द्वयेन्द्रियप्रयोगेण स्वशुक्रादिपरिग्रहैः।
पूजयेद्विधिवत्सर्वान् बुद्धबोधिमवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी स्वकायवाक् चित्तवज्रों से सर्वतथागत कायवाक् चित्त पूजा रहस्य को उत्पन्न किया। दो इन्द्रियों के प्रयोग पूर्वक शुक्र रजः आदि के योग से विधिपूर्वक पूजा करें सभी की, इससे बुद्ध ज्ञान प्राप्त होता है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वतथागतकायवाक्चित्तसम्बरं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

सत्त्वधातोरनन्तस्य मातां समयधारिणीम्।
काये त्रिवज्रसमयैः सम्बरोऽयं महाद्भुतः ॥ ६३ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी स्वकायवाक् चित्तवज्रों से सर्वतथागत कायवाक् चित्त सम्बर को उत्पन्न किया। अनन्त सत्त्व धातुओं

की माता लोचना को कहा गया है। उन्हें त्रिवज्रयोग से शरीर में धारण करने से यह सिद्धि प्राप्त होती है। यह अद्भुत समय कहा गया है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वसाधकसम्बरवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

कायवाक्चित्तसंभोगं त्रिगुह्यालयवज्रजम्।
साधयामि अहं भद्रं संशयो नात्र सर्वथा ॥ ६४ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने कायवाक् चित्तवज्रों से फिर भी सर्वसाधक सम्बर वज्र को उत्पन्न किया। काय-वाक्-चित्तों का संयोग ही त्रिगुह्यालयवज्र से समुत्पन्न है। इसी से मैं कल्याण प्राप्त करूँगा। इसमें कोई भी सन्देह नहीं है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वसाधकवज्रसत्त्वसम्बरं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

वितस्तिमात्रमतिक्रम्य मूर्ध्नि मण्डलकल्पना।
ओंकारं मध्यगतं ध्यात्वा पञ्चामृतनिपातनम् ॥ ६५ ॥
अनेन वज्रयोगेन तेजस्वी भवति क्षणात् ।
कायवाक्चित्तसौस्थित्यं भवति नात्र संशयः ॥ ६६ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने फिर भी अपने काय-वाक्-चित्त वज्रों से सर्वसाधक वज्र सत्त्व सम्बर को उत्पन्न किया। समग्र विस्तार भूमि को अतिक्रमण करके फिर अपने शिर में मण्डल की कल्पना करनी चाहिए। उसके बीच में ॐ कार का ध्यान और पञ्चामृत का निपात करे। इस वज्र योग से उसी क्षण साधक तेजस्वी हो जाता है। और काय-वाक् चित्तों में संस्थित हो जाता है इसमें सन्देह नहीं है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः पुनरपि सर्वमण्डलधरकायवाक्चित्तगुह्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

चैत्यकर्म न कुर्वीत न च पुस्तकवाचनम्।
मण्डलं नैव कुर्वीत न त्रिवज्राग्रवन्दनम् ॥ ६७ ॥

अब वज्रपाणि सर्वतथागताधिपति ने फिर भी अपने-काय-वाक्-चित्त वज्रों से सर्वमण्डल धर काय वाक् चित्त गुह्य को उत्पन्न किया। चैत्य कर्म न करें,

पुस्तकों का वाचन भी न करें। मण्डल निर्माण भी न करें, त्रिवज्राग्र का वन्दन भी न करें।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः सर्वविषपरिहारस्तम्भनाकर्षणगुह्यं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास। ॥ भ्रुँ ॥

चक्रमध्यगतं स्थाप्य सितांशुज्वालमालिनम् ।
पीतांशुरश्मिगहनं भावयेत् पीतसन्निभम् ।
त्रिवज्ररश्मिसमयैर्बीजोऽयं गुह्यसम्भवः ॥ ६८ ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने अपने कायवाक्चित्त वज्रों से सर्व विष परिहार स्तम्भनाकर्षण गुह्य को उत्पन्न किया। ॥ भ्रुँ ॥

चक्र के बीच में उसको अवस्थित कर सफेद ज्वालाओं से चमकते हुए पीले किरण से युक्त पीले स्वरूप का ध्यान करे। त्रिवज्ररश्मि समयों के कारण यह गुह्यसंभव बीज कहा गया है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः कायवाक्चित्तरक्षाचक्रमन्त्रं वज्रसंयुक्तं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास ॥

उँ हूलू हूलू तिष्ठ तिष्ठ बंध बंध हन हन दह दह अमृते हूँ फट् स्वाहा।
भूर्जपत्रादिषु चक्रं कर्मवज्रप्रतिष्ठितम् ।
हकारमध्यगं कृत्वा नाममध्ये समालिखेत् ॥ ६९ ॥
मन्त्राक्षरपदैः सम्यक् मण्डितं स्थापयेत् सदा ।
एषो हि सर्वमन्त्राणां त्रिगुह्यालयसम्भवः ॥ ७० ॥

अब सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से कायवाक्चित्त रक्षाचक्र मन्त्र को उत्पन्न किया। ऊँ हूलू हूलू तिष्ठ तिष्ठ बंध बंध हन हन दह अमृते हूँ फट् स्वाहा। यह चक्र भोजपत्रादि में कर्मवज्र के रूप में प्रतिष्ठित है। हकार के बीच में नाम के स्थान में इस मन्त्राक्षर को लिखकर उन्हीं पदों के द्वारा मण्डित करके उस स्थान पर स्थापित करें। यही सभी मन्त्रों का गुह्यालय सम्भव कहा गया है।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः वज्राञ्जनपदं स्वकायवाक्चित्तवज्रेभ्यो निश्चारयामास।

चतुष्पथैकवृक्षे च मातृस्थाने शिवालये।
वज्राञ्जनपदं तत्र कपाले पातयेत्सदा ॥ ७१ ॥

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने स्वकायवाक्चित्त वज्रों से वज्राञ्जनपद को उत्पन्न किया। चौराहों पर स्थित वृक्ष के मूल में, मातृस्थान में, शिवालय में वज्राञ्जन पद को उस अवसर पर कपाल में संपात करें।

महातैलरुधिरं विष्ठं पद्मसूत्रमर्कतूलेन वर्तिं कृत्वा कृष्णचतुर्दश्यामर्द्धरात्रौ वज्राञ्जनं पातयेद्बुधः तत्रैवाष्टशताभिमन्त्रितं कृत्वा। त्रिविधा सिद्धिर्भवति इत्याह भगवान् समन्तभद्रः। अथ भगवन्तः सर्वतथागता वज्रपाणिं सर्वतथागताधिपतिमेवमाहुः। कतिभिर्भगवन् गुह्याक्षैरः समन्वागतास्ते बोधिसत्त्वा महासत्त्वा य इदं सर्वतथागतचर्यावज्रं सर्वतथागतगुह्यसमयं श्रद्धास्यन्ति भावयिष्यन्ति च। अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः तान् सर्वतथागतानेवमाह। त्रिगुह्याक्षरैर्भगवन्तः सर्वतथागताः समन्वागतास्ते बोधिसत्त्वा महासत्त्वा य इदं सर्वतथागतबोधिचर्यावज्रं श्रद्धास्यन्ति भावयिष्यन्ति च। सर्वतथागताः प्राहुः। कतमैस्त्रिभिः? वज्रधरः प्राह। यदुत सर्वतथागतकायवज्रेण, सर्वतथागतवाग्वज्रेण, सर्वतथागताचित्तवज्रेण, एभिस्त्रिभिः।

अथ ते सर्वतथागता भगवतो वज्रपाणेः पादयोर्निपत्य तूष्णींस्थिता अभूवन् ।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः तान् सर्वतथागतान् बोधिसत्त्वांश्चामन्त्रयते स्म। भूतपूर्वं भगवन्तः सर्वतथागता अनभिलाप्यानभिलाप्यबुद्धक्षेत्रसुमेरुपरमाणुरजः समाकल्पाः क्षीणा यावद् भगवतो दीपङ्करस्य तथागतस्यार्हतः सम्यक्सम्बुद्धस्यातिक्रान्तस्य काश्यपस्यापि महामुनेरभिसम्बुद्धस्य न भाषितम्। तत्कस्माद्धेतोः? अभव्या भगवन्तः सत्त्वा अस्य महागुह्यपदार्थस्य तेन कालेन तेन समयेन मया न भाषितम्। अपि तु भगवन्तः सर्वतथागता अस्मिन् गुह्यसमाजे बुद्धबोधिं क्षणलवमुहूर्तेनैव निष्पादयन्ति। यदनेकैर्गङ्गानदीबालुकासमैः कल्पैः घटयन्तो

व्यायच्छन्तो बोधिसत्त्वा बोधिं न प्राप्नुवन्ति। तदिहैव जन्मनि गुह्यसमाजाभिरतो बोधिसत्त्वः सर्वतथागतानां बुद्ध इति संख्यां गच्छति।

अथ ते महाबोधिसत्त्वा इदं वाग्वज्राक्षरपदं श्रुत्वा प्ररोदयामासुः। अथ ते सर्वतथागतास्तान्बोधिसत्त्वानेवमाहुः। मा भगवन्तः महाबोधिसत्त्वाः प्ररोदयत मा च त्रिदुःखं समुत्पादयत। अथ ते महाबोधिसत्त्वास्तान् सर्वतथागतानेवमाहुः। कथं ते भगवन्तः सर्वतथागता न प्ररोदामहे? कथं न दुःखमुत्पादयामहे? तत्कस्मात् हेतोः? अभव्या भगवन्तः त्रिगुह्याक्षरम्। अभव्या भगवन्तोऽन्तशो नाम श्रवणेनापि। सर्वतथागताः प्राहुः। सामान्याक्षरपदं कुलपुत्रा यथा भवद्भिर्न ज्ञातं न श्रुतं तथास्माभिरपि सर्वतथागतैः सर्वबुद्धबोधिसत्त्वैश्च कुलपुत्रास्ते गुह्याक्षरा न संप्राप्तानाभिसम्बुद्धाश्च। तत्कस्माद्धेतोः? त्रिगुह्याक्षरविशुद्धत्वात्।

अथ ते सर्वे बोधिसत्त्वाः तूष्णीं व्यवस्थिता अभूवन्। अथ भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रयोषिद्भगेषु विजहार।

अथा सा सर्वतथागतचित्तदयिता मामकी भगवन्तं सर्वतथागताधिपतिं महावज्रधरं एभिर्वज्रधरकामरतिपूजाग्राक्षरपदैः प्रीत्या संस्तूयामास।

त्वं वज्रचित्त भुवनेश्वर सत्त्वधातो त्रायाहि मां रतिमनोज्ञ महार्थकामैः ॥
कामाहि मां जनक सत्त्वमहाप्रबन्धो यदीच्छसे जीवितं मञ्जुनाथ ॥ ७२ ॥

महातैल, रक्त, विष्ठा, पद्मसूत्र को अर्कयुक्त वस्त्र के द्वारा बाती बनाकर कृष्ण चतुर्दशी तिथि के आधीरात को वज्राञ्जन का पात करें और साधक १०८ बार जाप भी करें। इससे तीन प्रकार की सिद्धि होती है ऐसा भगवान् समन्तभद्र ने कहा।

इसके बाद भगवान् सर्वतथागतों ने सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि को यह कहा – हे भगवन् कितने गुह्य अक्षरों से युक्त होकर बोधिसत्त्व, महासत्त्व यह सर्वतथागतचर्या वज्र एवं सर्वतथागत गुह्य समय को श्रद्धा करेंगे और इसकी भावना करेंगे।

अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने उन सर्वतथागतों से इस प्रकार कहा। तीन गुह्य अक्षरों से युक्त होकर भगवान् सर्वतथागत वे बोधिसत्त्व, महासत्त्व सर्वतथागत बोधिचर्या वज्र की श्रद्धा और भावना करेंगे। तथागतों ने

कहा - किन तीन अक्षरों से। वज्रधर ने कहा जैसा कि सर्वतथागत कायवज्र, सर्वतथागतवाग्वज्र एवं सर्वतथागतचित्त वज्रों से। वे ही तीन हैं इन्हीं से।

इसके बाद वे सब सर्वतथागत भगवान् वज्रपाणि के पैर पर गिरकर मौन होकर बैठ गए। अब, सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने उनसे सर्वतथागत - बोधिसत्त्वों को यह कहा। पहले हुए भगवान् सर्वतथागत जो अनभिलाप्य एवं अनन्त भगवान् दीपङ्कर तथागत अर्हत्, सम्यक्-सम्बुद्ध, अतिक्रान्त काश्यप मुनि जो अभिसम्बुद्ध थे उन्होंने नहीं कहा।

क्योंकि यह अभव्य है कि भगवान् सत्त्व, इस महागुह्यपदार्थ की व्याख्या-वाचन-उपदेश उस समय मैंने नहीं किया है। और भी भगवान् सर्वतथागत इस गुह्य समाज में बुद्ध बोधि को क्षण में, मुहुर्त में तत्काल ही उत्पन्न नहीं करते। व्याख्या नहीं करते। यहाँ तक कि अनेक गङ्गानदी बालुका के समान कल्पों में घटित होने वाले बोधिसत्त्व सर्वतथागतों की बुद्ध यह संख्या होती है।

अब, वे महाबोधि सत्त्व यह वाग्वज्राक्षर पद को सुनकर रोने लगे। अब सर्वतथागतों ने उन बोधिसत्त्वों को यह कहा। आप भगवान् बोधिसत्त्व न रोयें। और तीन दुखों को उत्पादन भी न करें। अब इन बोधिसत्त्वों ने उन सर्वतथागतों से यह कहा। क्यों हम सर्वतथागत न रोये। क्यों हम दु:खी न हों! क्योंकि त्रिगुह्याक्षरपद हे भगवन् वे अभव्य हैं। अन्तशः भगवान् नाम श्रवण के द्वारा भी अभव्य है। सर्वतथागतों ने कहा। सामान्याक्षर पद हे कुल पुत्रों जैसा कि आप लोगों ने नहीं जाना नहीं सुना है, वैसे ही हम सर्वतथागतों ने भी सर्वबुद्ध बोधिसत्त्वों ने भी हे कुल पुत्र! वे गुह्याक्षर न संभव है न ही अभिसम्बुद्ध ही हैं। क्योंकि त्रिगुह्याक्षर विशुद्ध हैं।

अब वे सब बोधिसत्त्व मौन होकर बैठ गए। अब भगवान् सर्वतथागत सर्वतथागत काय वाक् चित्त वज्र योषिद् भगों में विहार किया।

इसके बाद सर्वतथागत चित्तदायिकी उस मामकी देवी ने सर्वतथागताधिपति महावज्रधर भगवान् को निम्नलिखित वज्रधर कामरतिपूजाग्राक्षर पदों से प्रीति पूर्वक संस्तुति की। आप वज्राधिक हैं। भुवनेश्वर हैं। सत्त्वधातु हैं। मेरी रक्षा करें महार्थकामों से और मनोज्ञरतिक्रिया द्वारा। हे सत्त्वों के बन्धु मुझे आनन्दित करें। यदि आप मुझे जीवित चाहते हैं तो यह अवश्य करें।

अथ सा बुद्धलोचना सर्वतथागतकायदयिता भगवन्तं सर्वतथागताधिपतिं महावज्रधरमेभिः सर्ववज्रकामरतिपूजाग्राक्षरपदैः सुखसौमनस्यप्रीत्या संस्तूयामास ॥

त्वं वज्रकाय बहुसत्त्वप्रियाङ्कचक्र बुद्धार्थबोधिपरमार्थहितानुदर्शी ।
रागेण रागसमयं मम कामयस्व यदीच्छसे जीवितं मञ्जुनाथ ॥ ७३ ॥

इसके बाद वह बुद्ध लोचना, सर्वतथागत कायदायिका ने भगवान् सर्वतथागताधिपति महावज्रधर को इन सर्वकाम रति पूजाग्राक्षर पदों से सुख आनन्द और प्रीति पूर्वका संस्तुति की।

आप वज्रकाय हैं। बहुसत्त्वों के प्रिय हैं। बुद्धत्व एवं बोधि के लिए परमार्थहितानुदर्शी भी हैं। राग से राग समय की आप कामना करें। यदि आप मुझे जीवित चाहते हैं तो कृपया मुझे रति द्वारा आनन्दित करें, जीवित करें।

अथ सा लोकेश्वरदयिता कायावस्थितनेत्री भगवन्तं सर्वतथागताधिपतिं महावज्रधरं कामोपभोगसमयैः संस्तूयामास ॥

त्वं वज्रवाच सकलस्य हितानुकम्पी लोकार्थकार्यकरणे सद संप्रवृत्तः।
कामाहि मां सुरतचर्य समन्तभद्र यदीच्छते जीवितं मञ्जुनाथ ॥ ७४ ॥

इसके बाद वह लोकेश्वरदयिता, कायावस्थित ने भी ने सर्वतथागताधिपति महावज्रधर भगवान् को कामोपभोग समयों के द्वारा स्तुति की।

आप वज्रवाक् हैं समस्त सत्त्वों के हितानुकम्पी हैं। लोक के कल्याणार्थ सदा काम करने वाले हैं। मुझे आप रति पूर्वक आनन्दित करें हे सुखचर्य, हे समन्तभद्र यदि मुझे जीवित चाहते हैं तो हे मञ्जुनाथ!

अथ सा सर्वतथागतकायवाक्चित्तसमयवज्रदयिता भगवन्तं सर्वतथागताधिपतिं महावज्रधरमनया सर्वतथागतसुखसौमनस्यप्रीत्या संस्तूयामास ॥

त्वं वज्रकाय समयाग्र महाहितार्थ संबुद्धवंशतिलकः समतानुकम्पी।
कामाहि मां गुणनिधिं बहुरत्नभूतं यदीच्छसे जीवीतं मञ्जुनाथ ॥ ७५ ॥

अब इसके बाद वह सर्वतथागत काय वाक् चित्त समय वज्रदयिता ने सर्वतथागताधिपति भगवान् महावज्रधर को इस सर्वतथागत सुख सौमनस्य प्रीति के द्वारा संस्तुति की।

आप वज्रकाय हैं, आप ही समयाग्र हैं, महाहितार्थ भी आप ही हैं। हे संबुद्ध वंश के तिलक, हे समताज्ञान के अनुकम्पी! बहुत रत्न वाली, गुण की खान मुझे आप आनन्दित करें। रति से सुखी करें हे मञ्जुनाथ यदि मुझे जीवित चाहते हैं तो।

अथ भगवान् वज्रपाणिस्तथागतः सर्वकामोपभोगवज्रश्रियं नाम समाधिं समापन्नहस्तां सर्वतथागतदयितां समयचक्रेण कामयन् तूष्णीमभूत् ।

अथायं सर्वाकाशधातुः सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रसमयशुक्रेण परिपूर्णो वज्रोदकपरिपूर्णकुम्भइव संस्थितोऽभूत् ।

अथास्मिन्वज्रकाशधातौ ये सत्त्वांस्त्रिकायसमयसम्भूतास्त्रिवज्रश्रिया संस्पृष्टाः सर्वे ते तथागता अर्हन्तः सम्यक्सम्बुद्धास्त्रिवज्रज्ञानिनोऽभूवन्। ततः प्रभृति सर्वसत्त्वाः समन्तभद्र इति सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रेणाभिषिक्ता अभूवन्।

अथ वज्रपाणिस्तथागतस्तान्सर्वतथागतानेवमाह। दृष्टा भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वबुद्धधर्मसमता। अथ ते सर्वतथागता वज्रपाणिं सर्वतथागताधिपतिमेवमाहुः। दृष्टा भगवन् दृष्टा सुगतवज्रज्ञानसमता वज्रज्ञानचर्येति। अथ भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वतथागतयोषिद्भगेष्वभिनिष्क्रम्य भगवन्तं महावज्रपाणिं सर्वतथागताधिपतिं तथागतमेवमाहुः। आश्चर्यं भगवन्नाश्चर्यं सुगत यत्र हि नाम रागाक्षरपदैः बुद्धबोधिरनुगन्तव्येति।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिस्तान्सर्वतथागतानेवमाह। मा भगवन्तः सर्वतथागता एवं वदथ। तत्कस्माद्धेतोः? खवज्रसमयतुल्यत्वात् सर्वधर्माणां न रूपस्कन्धो न वेदनास्कन्धो न संज्ञास्कन्धो न संस्कारस्कन्धो न विज्ञानस्कन्धो न धातुर्नायतनं न रागो न द्वेषो न मोहो न धर्मो नाधर्म इति।

अथ ते सर्वतथागतास्तूष्णीमभूवन्।

अथ भगवान्वज्रपाणिः तान्सर्वतथागतान्बोधिसत्त्वांश्चामन्त्रयते स्म। आलोचयन्तु भगवन्तः सर्वतथागताः सर्वलोकधातुष्विदं सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रगुह्यम्। तत्कस्माद्धेतोः? भव्या बतामी दशदिक्संस्थिता बोधिसत्त्वा महासत्त्वा अस्य धर्मपर्यायस्य।

अथ वज्रपाणिः सर्वतथागताधिपतिः वज्रधर्ममामन्त्रयते स्म। उद्गृहाण कुलपुत्र इदं सर्वतथागतसमयतत्त्वं त्वं हि सर्वतथागतैर्धर्मेश्वर वज्रगज इत्यभिषिक्तः ।

अथ वज्रधर्मो बोधिसत्त्वो महासत्त्वस्तथास्त्विति कृत्वा तूष्णीमभूत्।

अथ ते भगवन्तः सर्वतथागताः त्रिवज्रतत्त्वाक्षरेषु कायवाक्चित्तं प्रवेशयामासुः। अथ वैरोचनस्तथागतः सर्वत्रैधातुककायवज्रेषु विहरन् सर्वतथागतकायसमतामध्यालम्ब्य तूष्णीमभूत्। अथ वाग्वज्रः तथागतः सर्वत्रैधातुकवाग्वज्रेषु विहरन् सर्वतथागतवाक् समतामध्यालम्ब्य तूष्णीमभूत्। अथ वज्रपाणिस्तथागतः सर्वत्रैधातुकचित्तवज्रेषु विहरन् सर्वतथागतचित्तसमतामध्यालम्ब्य तूष्णीमभूत्।

इदमवोचत् भगवान्।

इति सर्वतथागतकायवाक्चित्तगुह्यरहस्यातिरहस्ये श्रीगुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वतथागतसमयसम्बरवज्राधिष्ठानपटलः सप्तदशोऽध्यायः।

अब, इसके बाद भगवान् वज्रपाणि तथागत ने सर्वकामोपभोग वज्रश्री नामक समाधि में प्रविष्ट होकर उन सर्वतथागत दयिता को समयचक्र द्वारा चाहते हुए मौन हुए।

इसके बाद, समग्र आकाशधातु सर्वतथागत काय वाक् चित्तवज्र समय शुक्र से परिपूर्ण हो गया जो वज्रोदक से भरे हुए घड़े के तरह स्थित हुआ।

इसके बाद इस वज्राकाशधातु में जो भी सत्त्व, त्रिकाय समय सम्भूत, त्रिवज्र श्री से सम्पन्न थे, वे सभी तथाग, अर्हत्, सम्यक्संबुद्ध आदि त्रिवज्रज्ञानी हो गए। उसके बाद से सभी सत्त्व, समन्द भद्र - समन्तभद्र ऐसे सर्वतथागत काय-वाक्चित्त वज्र के द्वारा अभिषिक्त हो गए हैं।

अब फिर से वज्रपाणि तथागत ने उन सर्व तथागतों को यह कहा। हे भगवान् सर्वतथागत सर्वबुद्धधर्म समता को देख लिया गया है। अब वे सर्वतथागतों ने वज्रपाणि को जो सर्वतथागताधिपति हैं, उन्हें यह कहा। हे भगवन् देख लिया है, देख लिया है सुगत वज्र ज्ञान समता, वज्र ज्ञान चर्या को देख लिया है। अब भगवान् सर्वतथागतों ने सर्वतथागत योषिद् भगों से बाहर निकल कर भगवान् महावज्रपाणि, सर्वतथागताधिपति तथागत को यह कहा।

हे भगवन् आश्चर्य है! हे सुगत आश्चर्य है! जहाँ नाम रागाक्षर पदों से बुद्ध बोधि को जानना चाहिए।

अब वज्रपाणि सर्वतथागताधिपति ने सर्वतथागतों को यह कहा। हे भगवन्त सर्वतथागतों! आप यह न कहें। क्योंकि सभी धर्म आकाश वज्रसमय तुल्य हैं। इसीलिए न रूप स्कन्ध, न वेदना स्कन्ध, न संज्ञावज्रसमय तुल्य हैं। इसीलिए न रूप स्कन्ध, न वेदना स्कन्ध, न संज्ञा स्कन्ध, न संस्कार स्कन्ध, न विज्ञान स्कन्ध, न धातु, न आयातन न राग, न द्वेष, न मोह, न धर्म, न अधर्म ही हैं। अब वे सर्वतथागत मौन हो गए।

अब भगवान् वज्रपाणि ने उन सर्वतथागत बोधिसत्त्वों को कहा। आप सब भगवान् सर्वतथागत सर्वलोक धातुओं में सर्वतथागत कायवाक्चित्त वज्र गुह्य क्या है विचार करें। क्यों कि इस धर्म पर्याय के वे सभी, दिशाओं में बोधिसत्त्व, महासत्त्व आदि भाव्य हैं। सम्मान्य हैं।

इसके बाद सर्वतथागताधिपति वज्रपाणि ने वज्रधर्म को उपदेश किया। हे कुल पुत्र आप इस सर्वतथागत समय तत्त्व को ग्रहण करो, आप ही सभी तथागत धर्मेश्वर वज्रगज इन नामों से अभिषिक्त हुए हैं।

अब वज्रधर्म, बोधिसत्त्व, महासत्त्व ऐसा ही हो कहकर मौन हो गए।

अब इन भगवान् सर्वतथागतों ने त्रिवज्र सत्त्वाक्षरों में कायवाक्चित्तों को प्रवेश कराया। अब वैरोचन तथागत ने सर्व त्रैधातुक काय वज्रों में विहार करते हुए सर्वतथागत काय समता का आलम्बर कर मौन हो गए। इसके बाद वाग्वज्र तथागत ने भी सर्वत्रैधातुक वाग्वज्रों में विहार करते हुए सर्व तथागत काय वाक् सकता का आलम्बन बनाकर मौन हो गए। अब वज्रपाणि तथागत ने सर्वत्रैधातुकचित्त वज्रों में विहार करते हुए सर्वतथागत चित्त समता को आलम्बन बनाकर मौन हो गए। यही कहा भगवान् ने।

सप्तदश पटल पूर्ण हुआ।

अष्टादशपटलः

अथ खलु मैत्रेयप्रभृतयो महाबोधिसत्त्वाः सर्वतथागताभिषेककायवाक्चित्तगुह्यनिर्देशं सर्वभावेन यथावद् यथासमयं दृष्ट्वा श्रुत्वा चाधिगम्य तान् सर्वतथागतान् दृष्टधार्मिकानेवमाहुः।

अहो समन्तभद्रस्य कायवाक्चित्तनिर्णयः ।
विहरन्ति त्रिवज्रेण त्रिवज्रेषु समन्ततः ॥ १ ॥
सर्वसत्त्वाः समुत्पन्नास्त्र्यध्ववज्रस्वभावतः ।
बोधिवज्रपदं प्राप्ता बुद्धवज्रमहर्धिकाः ॥ २ ॥
अहो सुविस्मयमिदमहो शान्तमतीन्द्रियम् ।
अहो परमनिर्वाणमहो संसारसन्ततिः ॥ ३ ॥

अब, निश्चित रूप में मैत्रेय आदि बोधि सत्त्वों ने सर्वतथागताभिषेक - काय-वाक्-चित्त गुह्य निर्देश को सभी प्रकार से यथावत् उचित समय में देखकर, सुनकर और जानकर भी उन सभी धार्मिक तथागतों को यों कहा।

आश्चर्य है भगवान् समन्तभद्र का कायवाक् और चित्तों का निर्णय। क्योंकि वे ही त्रिवज्र के द्वारा त्रिवज्रों में निरन्तर विहार करते रहते हैं। सभी सत्त्व समुत्पन्न हैं त्र्यध्व वज्रस्वभाव ये सुक्त हैं। और बोधि वज्रपद को भी प्राप्त हैं, बुद्ध वज्रों से बढ़े हुए भी हैं। अहो यह सुविस्मय है! यह अति-इन्द्रिय शान्त स्वरूप है। यही परम निर्वाण एवं संसार सन्तति भी है जो आश्चर्यमय है।

ततस्ते सर्वतथागतास्तान् बोधिसत्त्वान् महासत्त्वानेवमाहुः। एवमेवबोधिसत्त्वा एवमेव महासत्त्वा इति।

अथ ते सर्वे बोधिसत्त्वा महासत्त्वाः पुनः समाजमागम्य तान्सर्वतथागतान् गुह्येतरपूजाभिः संपूज्य प्रणिपत्यैककण्ठेनैवमाहुः।

अहो सुदुर्लभमिदमुपायं बोधिसाधनम्।
तन्त्रं गुह्यसमाजाख्यं तन्त्राणामुत्तरोत्तरम् ॥ ४ ॥

इसके बाद उन्होंने सर्वतथागत-बोधिसत्त्वों को यह कहा। ऐसा ही है बोधिसत्त्व, ऐसा ही है महासत्त्व। अब वे सभी बोधिसत्त्व, महासत्त्व फिर से समाज में आकर उन सर्वतथागतों को गुह्येतरपूजाओं के द्वारा पूजकर, प्रणाम कर एक ही स्वर से कहने लगे। अहो बोधिसाधन उपाय अत्यन्त दुर्लभ है। और गुह्य समाज नामक तन्त्र भी जो उत्तर तन्त्र है अत्यन्त दुर्लभ है। महत्त्वपूर्ण है।

अध्येषयामस्त्वां नाथ यदुक्तं भूतवादिना।
तद्गूढावबोधनार्थाय सत्त्वानां हितकाम्यया ॥ ५ ॥

इसीलिए आपकी हम प्रार्थना करते हैं। जैसा कि भूतवादी ने कहा है। क्योंकि उसके गूढ अर्थ को जानने के लिए एवं समस्त-प्राणियों के हित के लिए।

अथ ते सर्वतथागतास्तान् बोधिसत्त्वानेवमाहुः ।
साधु साधु महासत्त्वाः साधु साधु गुणाकराः ।
यत्सुगुढपदं तन्त्रे तत्सर्वं पृच्छतेच्छया ॥ ६ ॥

अब फिर उन सर्वतथागतों ने उन बोधिसत्त्वों को कहा। साधु-साधु हे महासत्त्व! हे गुणकारी साधु साधु। बहुत ही अच्छा। जो भी गुप्तपद हैं तन्त्र में उन्हें आप सब पूछ सकते हैं।

अथ ते -
सर्वे महाबोधिसत्त्वाः प्रहर्षोत्फुल्ललोचनाः ।
पच्छन्तीह स्वसन्देहान् प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः ॥ ७ ॥
गुह्येत्यत्र किमुच्येत समाजेति किमच्यते।
कीदृशस्तत्र सम्बन्धः योगेत्यत्र किमुच्यते ॥ ८ ॥
तत्त्वं कतिविधं प्रोक्तं गुह्यं कतिविधं तथा ।

रहस्येति किमुच्येत परमं कतिविधं भवेत् ॥ ९ ॥
बोधिचित्तेति किं ज्ञेयं विद्यापुरुषेति किं तथा।
वज्रधृगिति किं ज्ञेयं जिनजिगिति किं तथा ॥ १० ॥
रत्नधृगिति किं तत्र आरोलिगिति किं तथा।
प्रज्ञाधृगिति किं ज्ञेयं कुलमित्यत्र किं तथा ॥ ११ ॥
मोह इति किमुच्येत द्वेषेत्यत्र किमुच्यते।
राग इति किमुच्येत वज्रमत्र किमुच्यते ॥ १२ ॥
रतीत्यत्र किमुच्येत कथं सम्पदिति स्मृतम्।
यमान्तकृत् किमर्थेन किन्तत् प्रज्ञान्तकृत्तथा ॥ १३ ॥
पद्मान्तकृत्कथं नाम कथं विघ्नान्तकृत्तथा।
समन्तचर्येति किं ज्ञेयं मन्त्रचर्येति किं तथा ॥ १४ ॥
जपमित्यत्र किं ज्ञेयं किमामुद्रणमुच्यते ।
धर्मोदयं कथं भाव्यं सम्बरं कीदृशं तथा ॥ १५ ॥
द्वेषमोहमहारागैः सत्त्वार्थं कुरुते कथम्।
मण्डलेति किमुच्येत मुद्रान्यासं कथं भवेत् ॥ १६ ॥
पुष्पमित्यत्र किं ज्ञेयं चैत्यं चेति किमुच्यते।
ज्ञानचक्रं कथं ज्ञेयं पदमत्र किमुच्यते ॥ १७ ॥
चोदनं च कथं नाथाः प्रेरणं च कथं भवेत् ।
आमन्त्रणं कथं तेषां बन्धनं कथमत्र वै ॥ १८ ॥
अभिषेकं कथं देयं कथं विद्याव्रतं तथा।
पञ्चामृतं कथं भक्ष्यं पञ्चवीर्यं कथं तथा॥ १९ ॥
कीदृशं सिद्धिसामान्यमुत्तमं कीदृशं तथा।
उपायाः कतिविधास्तत्र उपेयः कीदृशस्तथा ॥ २० ॥
कथमाज्ञां प्रयच्छन्ति योगिनः सर्ववज्रिणाम् ।
कथं कुर्वन्ति नानात्वं तत्सर्वं कथायाशु च ॥ २१ ॥

अब वे (सब कहने लगे) –

सभी महाबोधिसत्त्व हर्ष से बड़े आँख वाले और आनन्दित होकर बारम्बार प्रणाम करके अपने सन्देहों के निवारण के लिए पूछने लगे। गुह्य क्या है?

समाज का अर्थ क्या है? उन दोनों का सम्बन्ध कैसा है? योग का अर्थ क्या है? तत्त्व कितने प्रकार के हैं? गुह्य कितने हैं। रहस्य का क्या अर्थ है? परम कितने हैं। बोधिसत्त्व से क्या समझना चाहिए? विद्यापुरुष क्या है? वज्रधृक् क्या है? जिनजिक् क्या है? रत्नधृक् क्या है? आरोलिक् क्या है? प्रज्ञाधृक् क्या है? कुल शब्द का क्या अर्थ है? मोह से क्या कहा जाता है? द्वेष क्या है? राग और वज्र का क्या अर्थ है? रति से क्या तात्पर्य लगाया जाता है? सम्पद् क्या है? यमान्तकृत एवं प्रज्ञान्तकृत् क्यों कहा गया है। पद्मान्तकृत् क्या है विघ्नान्तकृत् क्या है? समन्त चर्या से क्या जाने? मन्त्रचर्या क्या है? जप से क्या जाने? मुद्रण से क्या तात्पर्य है जानें? धर्मोदय क्या है? सम्बर कैसा होता है? द्वेष, मोह और राग से प्राणियों का हित कैसे होता है? मण्डल क्या है? मुद्राओं का न्यास कैसे होता है? पुष्प क्या है? चैत्य का क्या अर्थ है? ज्ञानचक्र को कैसे जानें, पद क्या है? प्रेरणा क्या है? हे नाथ! नोदना क्या है? आमन्त्रण और बन्धन क्या हैं? अभिषेक कैसा होता है? विद्याव्रत क्या है? पञ्चामृत का कैसे भक्षण करें? पञ्चवीर्य क्या है? सामान्यसिद्धि एवं उत्तम सिद्धि क्या है? उपाय कितने हैं? उपेय कैसा होता है? सर्ववज्रियों की आज्ञा योगी कैसे करते हैं? नानात्व वे कैसे करते हैं? हे प्रभो यह सब शीघ्र आप कृपया बतायें।

अथ ते सर्वतथागतास्तेषां बोधिसत्त्वानां महासत्त्वानां प्रश्नवाक्यमुपश्रुत्य मुहूर्तं महाबोधिसत्त्वं महावज्रधरमालम्ब्य तूष्णीमभूवन्। अथ ते -

सर्वे महाबोधिसत्त्वाः प्रहृष्टाः करुणात्मनः।
सम्बुद्धान् सुगतान् नाथान् प्रचोदन्ति पुनः पुनः ॥ २२ ॥
अथ ते सर्वतथागतास्तान् बोधिसत्त्वानेवमाहुः।
कायवाक्चित्तवज्रेण कायवाक्चित्तवज्रिणः।
सत्त्वार्थं बोधिसत्त्वेन्द्राः श्रृण्वन्तु प्रश्नविस्तरान् ॥ २३ ॥

अब वे सर्वतथागत उन बोधिसत्त्व-महासत्त्वों के प्रश्न वाक्यों को सुनकर एक मुहूर्त तक महाबोधिसत्त्व महावज्रधर को अवलंम्बन करके मौन हो गए। इसके बाद वे - सभी महाबोधिसत्त्व आनन्दित एवं करुणापूर्ण हुए और बारम्बार सम्बुद्ध, सुगत, नाथों को बारम्बार प्रेरित करते हैं। इसके बाद वे सर्वतथागत उन बोधिसत्त्वों से ऐसा कहने लगे कायवाक्चित्त वज्र के द्वारा

कायवाक्चित्त वज्री और प्राणियों के कल्याण के लिए प्रश्नों के विस्तारपूर्वक उत्तर आप सब लोग सुनें।

अथ ते सर्वे महाबोधिसत्त्वास्तेषां सर्वतथागतानामनुग्रहवचनमुपगृह्य महाबोधिसत्त्वस्य महावज्रधरस्य कायवाक्चित्तवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रैरालम्ब्य साधु साधु भगवन्तः साधु साधु सुगता इति तूष्णीमभूवन्।

ततस्ते सर्वतथागता महाकरुणात्मानः सहृद्यालम्ब्याधितिष्ठन् तेषां महाबोधिसत्त्वानामेककण्ठेनैव तान् प्रश्नान् निर्दिशन्ति स्म।

त्रिविधं कायवाक्चित्तं गुह्यमित्यभिधीयते।
समाजं मीलनं प्रोक्तं सर्वबुद्धाभिधानकम् ॥ २४ ॥
पञ्चमं नवमं चैकदश सप्त त्रयोदशम्।
बुद्धानां बोधिसत्त्वानां देशना साधनं महत् ॥ २५ ॥
चतुर्थं षोडशं चैव अष्टमं द्वादशं तथा।
आचार्यकर्मसामान्यं सिद्धिश्च व्रतसम्बरम् ॥ २६ ॥
अष्टमं च द्वितीयं च दश पञ्च चतुर्दशम्।
हठमनुरागणं चैव उपसाधनसम्बरम् ॥ २७ ॥
सप्तमं च तृतीयं च दशैकादशपञ्चमम्।
सिद्धिक्षेत्रनिमित्तं च सेवासाधनसम्बरम् ॥ २८ ॥
सर्वतथागतकर्म निग्रहानुग्रहक्षमम्।
दान्तदौर्दान्तसौम्यानां सत्त्वानामेव तारणम् ॥ २९ ॥
उत्पत्तिक्रमसम्बन्धं सेवावज्रविधिश्चतुः।
गुरूणां मन्त्रमार्गेण शिष्याणां परिपाचनम् ॥ ३० ॥
सुव्रतस्याभिषिक्तस्य सुशिष्यस्य महात्मनः।
बुद्धानां बोधिसत्त्वानां देशना परिमोचना ॥ ३१ ॥
प्रज्ञोपायसमापत्तिर्योग इत्यभिधीयते।
योनिस्वभावतः प्रज्ञा उपायो भावलक्षणम् ॥ ३२ ॥
प्रबन्धं तन्त्रमाख्यातं तत् प्रबन्धं त्रिधा भवेत्।

आधारः प्रकृतिश्चैव असंहार्य्यप्रभेदतः ॥ ३३ ॥
प्रकृतिश्चाकृतेर्हेतुरसंहार्यफलं तथा।
आधारस्तदुपायश्च त्रिभिस्तन्त्रार्थसंग्रहः ॥ ३४ ॥
पञ्चकं त्रिकुलं चैव स्वभावैकशतं कुलम् ।
सहोक्तिर्बोधिवज्रस्य सोत्तरं तन्त्रमिष्यते ॥ ३५ ॥
तत्त्वं पञ्चकुलं प्रोक्तं त्रिकुलं गुह्यमच्यते।
अधिदेवो रहस्यं च परमं शतधा कुलम् ॥ ३६ ॥

इसके बाद वे सभी महाबोधिसत्त्व उन सर्वतथागतों के अनुग्रह वचन को ग्रहण कर महावज्रधर बोधिसत्त्व के कायवाक्चित्त वज्र को अपने कायवाक्वित्तवज्रों से आलम्बित करके साधु-साधु हे भगवान् साधु-साधु से सुगत ऐसा कहकर मौन हो गए। अब, वे महाकरुणा के खान सर्वतथागत सहृदय युक्त होकर उन महाबोधिसत्त्वों के उन प्रश्नों के उत्तर एक ही कण्ठ के माध्यम से कहने लगे। काय-वाक्-चित्त के त्रिरूप को गुह्य कहा गया है। मीलन को समाज कहा गया है। जिसे सर्व बुद्धों का अभिधान = नाम के रूप में लिया जाता है। पाँचवाँ, नवाँ, दश, सप्त और तेरह ये ही बुद्ध और बोधिसत्त्वों की साधना कही गई है। चौथा, १६वाँ, आठवाँ और १२वाँ ही आचार्य कर्मसामान्य है और व्रत और सम्बर तथा सिद्धि भी वही है। आठवाँ, द्वितीय, दश, पञ्च और चतुर्दश वे ही हठ तथा अनुराग एवं उपसाधन सम्बर कहे गए हैं। सातवाँ, तृतीय, दश, एकादश और पाँचवाँ से ही सिद्ध क्षेत्रों के निमित्त हैं और सेवा-साधन मन्त्र कहे गए हैं। सर्वतथागतों के कर्म निग्रह और अनुग्रहात्मक हैं। दान्त, दुर्दान्त एवं सौम्य प्राणियों का तारण ही उनके कर्म हैं। उत्पत्तिक्रम का सम्बन्ध, सेवा-वज्र विधि चार हैं। गुरुओं के मन्त्र मार्ग द्वारा शिष्यों की सहायता, सुव्रत में स्थित शिष्य का अभिषेक, बुद्ध और बोधिसत्त्वों की देशना तथा उनका परिमोचन करना भी तथागतों का ही कर्म है। स्वभाव से ही योनि प्रज्ञा है। भावलक्षण ही उपाय है। प्रबन्ध को तन्त्र कहा गया है। वह प्रबन्ध तीन प्रकार का है। आधार, प्रकृति और असंहार्थ भेद हैं। प्रकृति आकृतिका हेतु है और असंहार्थ फल एवं आधार और उसका उपाय ये तीनों से ही तन्त्रार्थ का संग्रह हो जाता है। पाँच कुल, तीन कुल और स्वाभाविक सौ

कुल भी हैं, इनके साथ विधि वज्र का कुल भी है उसका उत्तर ही तन्त्र कहा गया है। पाँच कुल ही तत्त्व हैं, त्रिकुल गुह्य हैं, अधिदेवता एवं रहस्य और अन्ततः सौ प्रकार के कुल भी हैं।

अनादिनिधनं शान्तं भावाभावाक्षयं विभुम्।
शून्यताकरुणाभिन्नं बोधिचित्तमिति स्मृतम् ॥ ३७ ॥
कायवाक्चित्तवज्रेण भेद्याभेद्यस्वभावतः।
विद्यया सह संयुक्तो विद्यापुरुष उच्यते ॥ ३८ ॥
पञ्च हेतिश्च वेतिश्च वज्रमित्यभिधीयते।
धारणं धृगिति ख्यातं विज्ञानं वज्रधृङ्मनः ॥ ३९ ॥
सदसन्मध्यमं ख्यातं भूतभौतिकसम्भवम्।
विग्रहः सर्वसत्त्वानां जिनजिग्जननं जिनः ॥ ४० ॥
चित्तं रत्नमिति ख्यातमर्थैः सर्वैः समुद्भवम्।
वेदकेन ध्रुवं वेद्यं वेदना रत्नधृङ्मनः ॥ ४१ ॥
लक्ष्यलक्षणभावैस्तु सर्वं सर्वेण सर्वतः।
रमणं लक्षणं लक्ष्यमारोलिगिति कथ्यते ॥ ४२ ॥
प्रकर्षकृतविज्ञानं यत् तत् प्रज्ञेति भण्यते।
संस्कारचेतनां धार्यं प्रज्ञाधृगिति कथ्यते ॥ ४३ ॥
कुलमन्वयमाख्यातमन्वयैरादिरुच्यते।
अविनाशमनुत्पन्नं यन्नाम तत् प्रकथ्यते ॥ ४४ ॥
विज्ञानं द्वेषमाख्यातं देति वेति द्वयैर्द्विषाम्।
रूपं मोहमिति ख्यातं जडबन्धस्वभावतः॥ ४५ ॥
वेदना घट्टमानाख्या अहङ्कारस्वभावतः।
संज्ञा संरागमात्मानं वस्तुतः शक्तिलक्षणम् ॥ ४६ ॥
संस्कारस्तु सदा ईर्ष्या प्रतीत्य प्रेरणात्मनाम्।
स्वभावं बोधिचित्तं तु सर्वत्र भवसम्भवम् ॥ ४७ ॥
कामं चित्तमिति प्रोक्तं रागद्वेषतमोऽन्वितम्।
समयं विश्वसङ्काशाभिमुखं कर्मजं फलम् ॥ ४८ ॥

अद्वयज्ञानधर्मेर्ष्याऽहङ्कारो मोह उच्यते।
अन्योन्यघट्टनं तत्र द्वेष इत्यभिधीयते ॥ ४९ ॥
लक्षणं रागमासक्तिः ज्ञानोऽयं वज्रमुच्यते।
रतिरत्यन्तसंभोगं सम्पदः स्त्रीसुखं परम् ॥ ५० ॥
मोहो द्वेषस्तथा रागः सदा वज्रे रतिः स्थिता।
उपायस्तेन बुद्धानां वज्रयानमिति स्मृतम् ॥ ५१ ॥
अविनाशात्मका धर्मा अनुत्पादस्वभावतः ।
समयः सर्वभावानां तेनैवान्तककृद्यमः ॥ ५२ ॥
अविज्ञानात्मका धर्माः परमार्थविशुद्धितः।
समयः सर्वचित्तानां तेन प्रज्ञान्तकृज्जिनः ॥ ५३ ॥

अनादि निधन, शान्त भावाभाव-अक्षय, विभु, करुणा-अभिन्न-शून्यता ही बोधिचित्त कहा गया है। कायवाक् चित्त वज्र द्वारा मेघामेघ स्वभाव से विद्या के साथ संयुक्त को विद्यापुरुष कहा गया है। पाँच हेति और वेति को ही वज्र कहा गया है। धारण को ही धृक् कहा गया है और वज्रधारणात्मक मन को विज्ञान कहा गया है। सत् और असत् ही मध्यम हैं जो भूत और भौतिक से समुत्पन्न है। सभी प्राणियों का विग्रह ही जिनजिक् है जन तथा जिन भी है। चित्त को ही रत्न कहा है, जो समग्र पदार्थों से उत्पन्न हुआ है। वेदन द्वारा निश्चय ही वेद्य वेदना ही रत्नधृक् मन है। लक्ष-लक्षण भाव के द्वारा सभी ओर से सभी से सब कुछ, रमण-लक्षण-लक्ष्य को ही आरोलिक् कहा गया है। जो कुछ उत्कृष्ट विज्ञान को ही प्रज्ञा कहा गया है। संस्कार चेतना के धारक को ही प्रज्ञाधृक् कहा गया है। कुल को ही अन्वय कहा है, अन्वय से आदि कहा गया है। अविनाश ही अनुत्पन्न है जो नाम है उसे ही कहा गया है। विज्ञान ही द्वेष है, द और व से ही द्वेष हुआ है। रूप को ही मोह कहा गया है। जड और बन्ध स्वभाव के कारण। अहंकार स्वभाव के कारण वेदना को ही घट्टमान कहा गया है। संराग को ही संज्ञा कहा गया है शक्ति लक्षण के कारण। संस्कार ही ईर्ष्या है व प्रेरणा से प्रतीत होता है। स्वभाव ही बोधिचित्त है। सर्वत्र भव सम्भव होता है। काम ही चित्त है। राग और द्वेष इसी से सम्बन्धित हैं। समय ही विश्वसङ्काशाभिमुख है। कर्म से फल है। अद्वय, ज्ञान, धर्म, ईर्ष्या अहंकार ही मोह है। एक दूसरे का घर्षण ही द्वेष ऐसा

कहा गया है। राग और आसक्ति का लक्षण ही वज्र ज्ञान कहा गया है। रति अत्यन्त संभोग को कहा गया है। सम्पत्ति पर स्त्रीसुख को कहा गया है। मोह, द्वेष तथा राग हमेशा वज्र में स्थित रति में स्थित हैं। इसी से बुद्धों का उपाय उक्त है यही वज्रयान है। अविनाशात्मक-धर्म अनुत्पाद स्वभाव से हुए हैं। समग्र पदार्थों के सिद्धान्त ही अन्तकारक यम कहे गए हैं। परमार्थ-विशुद्धि से अविज्ञात्मक धर्म होते हैं। सर्वचित्तों का समय ही प्रज्ञान्तकृत् जिन कहे गए हैं।

अवाच्यात्मका धर्मा अभावनामरूपधीः।
समयः सर्वधर्माणां तेन पद्मान्तकृद्विभुः ॥ ५४ ॥
निर्विकल्पात्मका धर्माः प्रकृत्या शान्तभावतः
समयः सर्ववज्राणां तेन विघ्नान्तकृत् प्रभुः ॥ ५५ ॥
अविनाशमविज्ञेयमवाच्यमविकल्पितम्।
बुद्धबोधिरिदं ज्ञानं ज्ञात्वा सुखमवाप्नुते ॥ ५६ ॥
मोहो मोहोपभोगेन क्षयमोहो यमान्तकृत्।
कायान्तकृद्भवेत्तेन तथा ज्ञेयान्तकृद्भवेत् ॥ ५७ ॥
दोषो दोषोपभोगेन क्षयदोषः प्रज्ञान्तकृत्।
चित्तान्तकृद्भवेत्तेन तथा क्लेशान्तकृद्भवेत् ॥ ५८ ॥
रागो रागोपभोगेन क्षयरागः पद्मान्तकृत्।
वागन्तकृद्भवेत्तेन समापत्त्यन्तकृत्तथा ॥ ५९ ॥
सर्वक्लेशक्षयं यत्तत्सर्वकर्मक्षयन्तथा।
सर्वावरणक्षयं ज्ञानं विघ्नान्तकृदिति स्मृतम् ॥ ६० ॥

धर्म अवाच्य हैं। अभाव नाम रूप स्वभाव युक्त हैं। सर्वधर्मों के समय ही व्यापक पद्मान्तकृत हैं। प्रकृति से ही शान्त भाव के कारण धर्म निर्विकल्पात्मक हैं। सर्ववज्रों के समय को ही विघ्नान्तकृत् कहा गया है। अविनाश, अविज्ञेय, अवाच्य, अविकल्प ज्ञान ही बुद्ध बोधि है इसी को जानकर वह ज्ञान प्राप्त करता है। मोहोपमात्र से मोह, क्षयमोह ही यमान्तकृत् है। उसी से कायान्तकृत् और ज्ञेयान्तकृत् होते हैं। दोषों के उपभोग से क्षयदोष-प्रज्ञान्तकृत् हैं। उसी से वागन्तकृत् एवं समापत्ति अन्तकृत् होते हैं। चित्तान्तकृत् एवं क्लेशान्तकृत् भी इसी से हुए हैं। राग के उपभोग से क्षयराग ही पद्मान्त कृत् हैं।

क्लेशवज्रावृते शुद्धे सर्वं कर्म विशुध्यते।
सर्वकर्मविशुद्धत्वात् विशुद्धं कर्मजं फलम् ॥ ६१ ॥
ग्रहणं रागणं चैव आकारनिश्चलं तथा।
हेतुत्वञ्च फलत्वञ्च षड्भिश्चित्तसमुद्भवः ॥ ६२ ॥
टक्किराजादयः षट्काः क्रोधेन्द्रा इति विश्रुताः।
भूतभौतिकविख्याता विद्याराजेति विश्रुताः ॥ ६३ ॥

सभी क्लेशों का नाश, सर्व कर्मों का क्षय और सर्वआवरणों का क्षय ही ज्ञान है वही ज्ञान विभ्रान्तकृत् है। क्लेशवज्रों से आवृत कर्मों के शुद्ध होने पर सब कुछ शुद्ध हो जाता है। सर्वकर्मों के शुद्ध हो जाने पर कर्मज फल भी शुद्ध ही कहा जाता है। ग्रहण, रागण, आकार, निश्चलता, हेतु और फल इन छहों से चित्त का उद्भव होता है। टक्किराज आदि छह क्रोधेन्द्रों के रूप में प्रसिद्ध हैं। भूत-भौतिक के रूप में विख्यात विद्याराज हैं।

रूपवज्रादयः षट्का वज्राधिपतयः स्मृताः।
समयवज्रादयः षट्काः पृथिव्यादिषुः पञ्चकाः ॥ ६४ ॥
चित्तवाक्कायवज्रैस्तु सम्भवन्ति महात्मनः।
प्राज्ञोपायोद्भवं स्कन्धधात्वायतनविग्रहम् ॥ ६५ ॥
निश्चित्य योगतो मन्त्रीं निष्पन्नक्रमयोगतः ।
सर्वशुद्ध्यधिमोक्षेण सर्वसन्त्रासवर्जितः ॥ ६६ ॥
सिंहवद्विचरेन्मन्त्री निर्विशङ्केन चेतसा।
नाकार्य्यं विद्यते ह्यत्र नाभक्ष्यं विद्यते तथा॥ ६७ ॥
नावाच्यं विद्यते किन्ञ्चिनाचिन्त्यं विद्यते सदा ॥
असमाहितयोगेन नित्यमेव समाहितः ॥ ६८ ॥
सर्वचित्तेषु या चर्या समन्तचर्येति कथ्यते ॥
प्रतीत्योत्पद्यते यद्यदिन्द्रियैर्विषयैर्मनः ॥ ६९ ॥

रूप वज्र आदि छह वज्राधिपति हैं। छह समवज्र आदि और पृथिवी आदि पाँच चित्तवाक् काय वज्रों से उत्पन्न होते हैं, वे महात्मा कहलाते हैं। प्रज्ञा उपायों से समुद्भूत स्कन्ध-धातु आयतन का विस्तार है। निष्पन्न क्रमों से निश्चित होकर योग द्वारा सर्वशुद्धि अधिमोक्ष से सर्वसन्यास रहित हो जाता है

साधक। बिना किसी डर के सिंह के तरह ही साधक को विचरण करना चाहिए। उसके लिए अकार्य और अभक्ष कुछ भी नहीं है। अवा%य कुछ भी नहीं है। अचिन्त्य भी उसके लिए कुछ नहीं है। असमाहित योग द्वारा सदा वह समाहित होता है। सभी चित्तों में जो चर्या है वही समन्त चर्या है। इन्द्रियों और विषयों से प्रतीत होकर ही मन समुत्पन्न होता है।

तन्मनो मननं ख्यातं कारकत्राणनार्थतः ॥
लोकाचारविनिर्मुक्तं यदुक्तं समयसम्बरम् ॥ ७० ॥
पालनं सर्व वज्रैस्तु मन्त्रचर्येति कथ्यते ॥
स्वकस्वकस्वभावन्तु विचार्य मनसा हृदि ॥ ७१ ॥
जपं तु सृष्टिसंहारं मन्त्रमुच्चार्य भेदतः ॥
विश्ववज्रात्मकान् बुद्धान् ज्ञानबीजेन संहरेत् ॥ ७२ ॥
बोधिनैरात्म्यबीजेन निरात्मां भावयेद्व्रती ॥
संस्फरेद् विश्ववद्विश्वं त्र्यध्वबीजेन तं जपेत् ॥ ७३ ॥
जपं जल्पनमाख्यातं सर्ववाङ्मन्त्रमुच्यते ॥
मन्त्रं मन्त्रमिति प्रोक्तं तत्त्वं चोदनभाषणम् ॥ ७४ ॥
यथैव हृद्यधिष्ठानं समाधिं च तथैव च।
तेषां मूर्ध्न्यभिषेकं च तथा पूजां च सर्वतः ॥ ७५ ॥
विद्याया विद्यते योगं यस्य वज्रधरस्य च।
तस्य भोगाश्चतुर्ज्ञेयाः स्वाधिष्ठानादिभिस्तथा ॥ ७६ ॥
वीराणामेकवक्त्राणामेकैकं मूर्ध्नि सेचनम्।
हृन्मुद्रा मन्त्रमार्गेण मुद्र्यते स्वकुलक्रमैः ॥ ७७ ॥
फलेन हेतुमामुद्र्य फलमामुद्र्य हेतुना।
विभाव्यमन्यथा सिद्धिः कल्पकोटिर्न जायते ॥ ७८ ॥
चतुर्भोगसमायुक्तं विद्यापुरुषवज्रिणम् ।
कायवाक्चित्तभेदेन त्रिकोणेषु विभावयेत् ॥ ७९ ॥
दशारं चक्रमापीतं तत्र मध्ये विभावयेत्।
सर्वारेषु दशक्रोधान् दशज्ञानात्मकोदयान् ॥ ८० ॥

भावयेन्निरोधचक्रेण निष्पन्नेनाग्रचारुणा।
वज्रज्वालां स्फरेन्मेघैर्भ्रमन्तं निश्चलोपमम् ॥ ८१ ॥
इति धर्मोदयज्ञानं प्रकृत्या निर्मलं शिवम् ।
भावितेन क्षणेनैव बुद्धचक्षुः प्रजायते ॥ ८२ ॥
क्रमद्वयमुपाश्रित्य वज्रिणां तत्र देशना ।
क्रममौत्पत्तिकं चैव क्रममौत्पन्नकं तथा ॥ ८३ ॥
साधनं प्रतिपत्तिश्च समयसम्बरं तथा ।
सर्वं तद्विस्तरं पूर्वं भिद्यते क्रमभेदतः ॥ ८४ ॥
रूपशब्दादयः कामाः सुखदुःखोभयात्मकाः।
जनयन्ति हृदये नित्यं रागद्वेषतमोदयम् ॥ ८५ ॥
रागे रागमयं वज्रं वज्रवद्रत्नसम्भवम्।
रत्नवज्जायते समयं कामास्ते समयोपमाः ॥ ८६ ॥

कारक और त्राण होने से ही वह मन मनन कहलाता है। लोकाचार से विनिर्मुक्त जो कहा है वही समय सम्बर है। सभी वज्रों से जिसका पालन होता है वही मन्त्रचर्या है। अपने अपने कर्मों का हृदय धारण करके जप करना ही सृष्टि और संहार है जो मन्त्रों के भेद से भिन्न होता है। विश्व वज्रात्मक बुद्धों को ज्ञान बीज द्वारा हरण करें। बोधिनैरात्म्य बीज द्वारा व्रतधारी निरात्मा की भावना करें। विश्व के तरह ही विश्व को भी प्रकाशित करें। और त्र्यध्व मन्त्र का जप करें। जल्पन ही जप है। सभी वाणी मन्त्र है। मन्त्र को ही मन्त्र कहा गया है। चोदन-भाषण ही तत्त्व है। हृदय में उस मन्त्र की स्थिति ही समाधि है। उनका मूर्धा में अभिषेक ही पूजा है। विद्या के द्वारा योग होता है जिस वज्रधर का उसके चार प्रकार के भोग होते हैं - स्वाधिष्ठान आदि के भेद से। एक एक मुख वाले वीरों का एक एक करके शिर में सेचन करना ही अभिषेक है। हृदय मुद्रा को मन्त्रों के द्वारा स्वकुलक्रम से मुद्रण होता है। फल से हेतु का मुद्रण और हेतु से फल का मुद्रण होता है। अन्यथा विचार करने से कभी भी सिद्धि नहीं होती। विद्यापुरुष वज्री का जो चार भोगों से युक्त हैं उन्हें काय, वाक् और चित्त भेद से तीन कोणों में स्थापित करें। दशार चक्र को ही जब साधक समाहित कर लेता है उसी में (सभी अरों में) दश क्रोध एवं

दशज्ञानात्माओं का ध्यान करें। निरोधचक्र के द्वारा निष्पन्न अग्र चारु स्वरूप से वज्र ज्वाला का प्रकाशन करें जो भ्रमणशील एवं मेघों वाला स्वभाव युक्त है। यही धर्मोदय है, प्रकृति से तो निर्मल एवं शान्त है। इसकी भावना से तत्काल ही बुद्धचक्षु समुद्घाटित होता है। दो क्रमों की उपासना द्वारा वहाँ पर वज्रिओं की देशना-उसमें उत्पत्ति क्रम एवं उत्पन्न क्रम दोनों ही अवस्थित हैं। साधना, प्रतिपत्ति, समय सम्बर यह सब विस्तार पूर्वक क्रमभेद से भिन्न होते हैं। रूप शब्द आदि काम हैं जो सुख-दुःख उभय रूप हैं, वे ही हृदय में राग-द्वेष तमसों का उदय हृदय में करते हैं। राग में रागमयवज्र का निष्पादन होता है वज्र से ही रत्न संभव की उत्पत्ति, रत्न वज्र से समय और सभी काम समय के तरह ही हैं।

साकारं च निराकारं सर्वगं त्र्यक्षरात्मकम्।
करणं हरणं चैव स्फारणं कुर्यात् स्वजापतः ॥ ८७ ॥
एवं द्वेषं च मोहं च निष्पाद्य भुवनत्रयम्।
आमुद्रय गुह्यसंशुद्धमर्थं कुर्वन्ति वज्रिणः॥ ८८ ॥
निष्पाद्य द्वेषचक्रं तु द्वेषयोगेन योगिनाम्।
विदाह्य क्रूरवज्रेण संहरेदज्ञानवज्रिणः॥ ८९ ॥
तांस्तु संस्फार्य संबोध्य तद्वत्संहरणं पुनः।
अभ्यसेद्योगमेवन्तु द्वेषवज्रः स्वयं भवेत् ॥ ९० ॥
मारणं जीवनं चैव त्रैधातुकमशेषतः।
करोति क्षणमात्रेण व्यक्तशक्तिर्न संशयः ॥ ९१ ॥
निष्पाद्य मोहचक्रं तु मोहयोगेन योगिना।
भूषणाद्यानि यत्किञ्चित्तत्सर्वं चोदयेत्सदा ॥ ९२ ॥
मोहचित्तोदधिं भाव्यं सर्वरत्नैः प्रपूरितम्।
दानवर्षं प्रवर्षेत सर्वेषां मोहचक्रिणाम् ॥ ९३ ॥
प्रदानं हरणं चैव सर्वद्रव्यमशेषतः।
करोति क्षणमात्रेण चित्तवज्रस्थिरेण वै ॥ ९४ ॥
निष्पाद्य रागचक्रं तु रागयोगेन योगिना।
अपहृत्य सर्वदेवेभ्यः कामयेत् कामयोगतः ॥ ९५ ॥

रतिप्रीतिसुखैर्हर्षैः कामक्रीडाविकुर्वितैः।
प्रदातव्यं ततः पञ्चदेवेभ्यः सर्वचक्रिणा ॥ ९६ ॥
त्रैधातुकसमुत्पन्ना भार्या देवासुरा अपि।
कामयन्ति क्षणेनैव मानुष्यः किं पुनः स्त्रियः ॥ ९७ ॥
मण्डलभिषेकं च कर्माग्रप्रसराणि च।
अनुष्ठानमधिष्ठानं सिद्धानां गतिरन्यथा ॥ ९८ ॥
भगं मण्डलमाख्यातं बोधिचित्तं च मण्डलम्।
देहं मण्डलमित्युक्तं त्रिषु मण्डलकल्पना ॥ ९९ ॥
मुद्रितं मुद्रया सर्वं स्कन्धायतनधातुना।
तेन मुद्रा सदा न्यस्ता मण्डलेति विनिर्दिशेत् ॥ १०० ॥
अङ्कुशं दण्डशूलं च खड्गं कोणेषु विन्यसेत्।
टक्किदण्डबलं बालं चक्रं सुम्भमधोदर्ध्वतः ॥ १०१ ॥
विद्याराजादिवज्राणां मुद्रा षट्चक्रवर्तिनाम्।
पृथिव्यादिषु सत्त्वानां मुद्रामण्डलकं स्वकम् ॥ १०२ ॥

साकार एवं निराकार तीन अक्षरों वाले मन्त्र को जो व्यापक, करण, हरण स्वरूपात्मक है उसका प्रकाशन करें। और जाप करें। इस प्रकार द्वेष एवं मोह का निष्पादन करके तीनों लोकों को अभिमन्त्रित करें गुह्य संशुद्धि हेतु – यही वज्रिओं का कार्य है। योगियों के द्वेष चक्रों से द्वेष चक्र का उत्पादन करके क्रूर वज्र से दाह करके ज्ञानवज्री का संहार करें। उन्हें बारम्बार प्रकाशित करके इस प्रकार योग का अभ्यास करने से वह स्वयं द्वेष वज्र जो जाता है। तीनों लोकों का मारण या जीवन वह तत्क्षण ही कर सकता है इसमें सन्देह नहीं है। मोह योग से योगी जन मोह चक्र का निष्पादन करके जो कुछ भूषण आदि हैं उन्हें प्रेरित करें। ग्रहण करें। सर्वरत्नों से प्रपूरित मोह रूप चित्त का ध्यान करें। इससे दान की वर्षा होती है जो मोह चक्रों का समय कहलाता है। सभी पदार्थों का दान या प्रहरण वह क्षण मात्र से कह सकता है जब चित्त वज्र स्थिर होता है। राग योग से राग चक्र का निष्पादन करके कामयोग से सभी देवताओं के अपहरण करके वह कामकला में संलग्न हो जाय। रति, प्रीति एवं हर्षों से युक्त होकर काम क्रीडा करते हुए उसे पाँच देवों को दे देना चाहिए सर्व चक्रों से। त्रैधातुक से उत्पन्न

भार्या देवासुर सभी हैं तो वे ही उसे चाहते हैं फिर मनुष्य और स्त्रियोंकी बात ही क्या है। मण्डल और अभिषेक, कर्मों का प्रसारण, अनुष्ठान और अधिष्ठान आदि सिद्धों की गति भिन्न है। भग को ही मण्डल कहा गया है बोधिचित्त भी वही है। देह भी मण्डल है, तीनों में मण्डल की कल्पना की गई है। स्कन्ध-धातु-आयतनों की मुद्रा से सब कुछ मुद्रित है, इसी से हमेशा मुद्रा की जाती है मण्डलों में ऐसा जानना चाहिए। अङ्कुश, दण्डशूल, खड्गों को कोणों में रखें। जिसमें टक्कि, दण्ड बल, बाल, चक्र, सुम्भ मध को ऊपर से विन्यस्त करें। विद्याराज आदि वज्रधारकों की मुद्रा जो षट्चक्रवर्ति के हैं वे सब पृथिवी के प्राणियों के अपने हैं।

आदर्शं वीणां शङ्खं च पात्रं बिम्बपटांस्तथा।
धर्मोदयाख्या मुद्रैषा वज्राधिपतिवज्रिणाम् ॥ १०३ ॥
बुद्धाश्च बोधिसत्त्वाश्च क्रोधराजाभिमुद्रिताः।
ततोऽन्या एकवीरास्तु कुलवर्णेन कल्पिताः ॥ १०४ ॥
पुष्पमित्यभिधीयन्ते नवयोषित्खधातवः।
कायवाक्चित्तभेदेन न्यासं कुर्यात् कुलक्रमैः ॥ १०५ ॥
चैत्यं च सर्वबुद्धानामालयस्थानमुच्यते।
ज्ञानसत्त्वेन सत्सृष्टं ज्ञानचक्रमिति स्मृतम् ॥ १०६ ॥
बीजाक्षरपदं प्रोक्तं त्रिवज्राक्षरमक्षरम्।
चोदनं बोधनं प्रोक्तं कायवाक्चित्तभावतः ॥ १०७ ॥
प्रेरणं रश्मिसञ्चारं दशदिग्लोकधातुषु।
आमन्त्रणं सवज्राणां सर्ववज्रनिमन्त्रणम् ॥ १०८ ॥
रश्मिना सर्ववज्राणां सर्ववज्राणि तत्पदे।
संहृत्य पिण्डरूपेण बन्धो बन्धनमुच्यते ॥ १०९ ॥
कायवाक्चित्तवज्रेण कायवाक्चित्तमण्डले।
आमुद्र्य कायवाक्चित्तं कल्पयेल्लेख्यमण्डलम् ॥ ११० ॥
अभिषेकं त्रिधा भेदमस्मिन्तन्त्रे प्रकल्पितम्।
कलशाभिषेकं प्रथमं द्वितीयं गुह्याभिषेकतः ॥ १११ ॥

प्रज्ञाज्ञानं तृतीयं तु चतुर्थं तत्पुनस्तथा।
मन्त्रयोग्यां विशालाक्षीं सपुष्पां शुक्रसम्भवाम् ॥ ११२ ॥
गुह्यगुह्याभिषेकं तु दद्याच्छिष्यस्य मन्त्रिणः।
खधातुमध्यगतं कृत्वा विण्मूत्रमज्जसंयुतम् ॥ ११३ ॥
वज्रपद्मप्रयोगेण सर्ववज्रान् समाजयेत्।
सर्वांस्तान् हृदये पात्य कायवाक्चित्तवज्रतः ॥ ११४ ॥
उत्सृज्य वज्रमार्गेण शिष्यवक्त्रे निपातयेत्।
इदन्तत्सर्ववज्राणामभिषेकपदं परम् ॥ ११५ ॥
सिद्ध्यन्ति सर्वमन्त्राणि कर्माग्रप्रसराणि च।
अतिश्रद्धां महाप्राज्ञीं सुरूपां साधकप्रियाम् ॥ ११६ ॥
एकयोगक्रियाभ्यस्तां समयीं समपश्य वै।
दक्षिणा च प्रदातव्या गुरवे साधकेन वै ॥ ११७ ॥
अध्येष्य गुरुणा तस्य दातव्या साधकस्य तु।
मूढे मोहात्मकं योगं मोहरत्या समन्वितम् ॥ ११८ ॥
निःसेकान्मोहधाराभिर्मोहवज्रः स्वयं भवेत्।
द्विष्टे द्वेषात्मकं योगं द्वेषरत्या समन्वितम् ॥ ११९ ॥
निःसेकाद्द्वेषधाराभिर्द्वेषवज्रः स्वयं भवेत्।
रक्ते रागात्मकं योगं रागरत्या समन्वितम् ॥ १२० ॥

वज्राधिपति वज्रधारियों के, आईना, वीणा, शंख, पात्र बिम्ब-वस्त्र वे ही धर्मोदय नामक मुद्रा हैं। बुद्ध और बोधिसत्त्व, वे सब क्रोध राजाओं से मुद्रित हैं। उसके अतिरिक्त अन्य एक वीर भी हैं जो कुल वर्णों से कल्पित कहलाते हैं। नई स्त्रियाँ जो खधातु हैं वे ही पुष्प कहलाती हैं। कुलक्रमों से कायवाक् चित्त भेद से इनका न्यास करना चाहिए। सभी बुद्धों का चैत्य ही आलय स्थान है। ज्ञान सत्त्व से जो सृष्ट हुआ है वह ज्ञानचक्र है। त्रिवज्राक्षर-अक्षर ही बीजाक्षर पद है। चोदन ही बोधन है, - कायवाक्चित्त भावों के द्वारा प्रेरित करना ही रश्मि संचार है, दशदिक् लोकधातुओं में सभी वज्रों का आमन्त्रण ही सर्ववज्र नियन्त्रण है। रश्मिओं के द्वारा सर्ववज्रों का उस पंद में स्थापित करना, संहार द्वारा पिण्ड के रूप में बन्धन करना ही बन्धन है। कायवाक्

चित्त वज्र से कायवाक् चित्त मण्डल में आमुद्रित करके लेख्य मण्डल की कल्पना करें। इस तन्त्र में अभिषेक के तीन भेद बतलाए गए हैं – कलशाभिषेक – प्रथम, गुह्याभिषेक द्वितीय, प्रज्ञाज्ञानाभिषेक तृतीय है। चतुर्थ सभी का समष्टि है। मन्त्र जाप में संलग्न शिष्य के लिए – मन्त्र योग्य, विशालाक्षी, शुक्रसम्भव, सपुष्प स्त्री को गुह्य का अभिषेक देना चाहिए। उसे आकाश धातु में अवस्थित करके विष्ठा-मूत्र आदि से संयुक्त करके वज्र पद्म के प्रयोग द्वारा सभी वज्रों का समाज में सम्मिलित करें। कायवाक्चित्त वज्रों के द्वारा उन्हें हृदय में विराजित भी करें। वज्र मार्ग से उठाकर उन्हें शिष्य के मुख में डाल देवें। यही उन वज्रों का अभिषेक है। इससे सभी मन्त्र सिद्ध होते हैं। यह सब अतिश्रद्धायुक्त, महाप्राज्ञ, सुरूपा, साधकप्रिया, एक योग क्रिया में अभ्यस्त समयी को देख कर ही गुरु को दक्षिणा देनी चाहिए। अध्येषणा के द्वारा वह गुरु भी शिष्य को अभिषेक से समन्वित करें। मोहात्मक योग भी उसे प्रदान करें जिसमें मोह रति हो। मोह धाराओं से अभिषेक करने से स्वयं वह साधक मोह वज्र हो जाता है। इसी प्रकार उपदेश पूर्वक द्वेषरति से युक्त द्वेषात्मक योग के द्वारा अभिषेक करने से साधक स्वयं वह द्वेषरति हो जाता है । इसी प्रकार रक्त में रागरति से समन्वित योग द्वारा अभिषेक से – वह भी राग धाराओं के, स्वयं रागवज्र हो जाता है।

निःसेकाद्रागधाराभी रागवज्रः स्वयं भवेत्।
प्रज्ञाज्ञानात्मकं योगं वज्ररत्या समन्वितम् ॥ १२१ ॥
निःसेकाद् ज्ञानधाराभिः प्रज्ञाज्ञानः स्वयं भवेत्।
तामेव देवतां विद्यां गृह्य शिष्यस्य वज्रिणः ॥ १२२ ॥
पाणौ पाणिः प्रदातव्यः साक्षीकृत्य तथागतान्।
हस्तं दत्त्वा शिरे शिष्यं मुच्यते गुरुवज्रिणा ॥ १२३ ॥
नान्योपायेन बुद्धत्वं तस्माद् विद्यामिमां वराम्।
अद्वयाः सर्वधर्मास्तु द्वयभावेन लक्षिताः ॥ १२४ ॥
तस्माद् वियोगः संसारे न कार्यो भवता सदा ।
इदं तत्सर्वबुद्धानां विद्याव्रतमनुत्तमम् ॥ १२५ ॥

अतिक्रमति यो मूढः सिद्धिस्तस्य न चोत्तमा।
प्रकृत्या देहधर्मेषु भ्राजते मलपञ्चकम् ॥ १२६ ॥
पञ्चज्ञानैरधिष्ठानात्पञ्चामृतमिति स्मृतम्।
ज्वालनं तापनं चैवोद्योतनं रूपदर्शनम् ॥ १२७ ॥
मन्त्रमूर्तिप्रयोगेण भक्षेत्पञ्चामृतामृतम्।
अन्तरिक्षगतं चिन्तेद्वज्रहूङ्कारसम्भवम् ॥ १२८ ॥
अधस्तात्तु तत्र भागे पद्ममाकारसम्भवम्।
ऊँकाराङ्कितममृतं तत्र मध्ये निवेशयेत् ॥ १२९ ॥
वज्रपद्मसमायोगाज्ज्वाल्य सन्ताप्य योगिना।
उद्यते स्फटिकाकारं ज्ञानसूर्यमिवापरम् ॥ १३० ॥
आकृष्य परमास्त्रेण दशदिग्लोकधातुषु।
अमृतं तत्र सम्पात्य भक्षेद् भक्षणयोगतः ॥ १३१ ॥

वज्र रति के समन्वय के साथ प्रज्ञाज्ञानात्मक - ज्ञान धाराओं से अभिषेक करने से स्वयं प्रज्ञाज्ञान स्वरूप हो जाता है। उन्हीं विद्या देवता को ग्रहण कर शिष्य के हाथ को अपने हाथ में लेकर, तथागत को साक्षी मानकर फिर अपने हाथ को शिष्य के शिर में रख दें। क्योंकि इसके अतिरिक्त बुद्धत्व प्राप्त करने का कोई दूसरा उपाय नहीं है, इसीलिए इन विद्याओं को ग्रहण करें। सभी अद्वय धर्म द्वय भाव से लक्षित होते हैं। इसीलिए संसार से वियुक्त नहीं होना चाहिए। यही सर्व बुद्धों का उत्तम व्रत कहा गया है। जो मूढ इसका अतिक्रमण करता है वह उत्तम सिद्धि नहीं प्राप्त करता है। और प्रकृति से ही मलपञ्चक वह धारण करता है। पञ्च ज्ञानों के अधिष्ठान के कारण ही पञ्चामृत कहलाता है। जलाना, तपाना, उद्युक्त करना, रूप दिखाना - यही मन्त्रमूर्ति के भेद से पञ्चामृत का भक्षण कहलाता है। और वज्र हुँकार को अन्तरिक्ष में चिन्तन करना चाहिए। उसके नीचे आकार से समुत्पन्न पद्म का चिन्तन करें। उसके बीच में ओंकारयुक्त अमृत का निवेश करना चाहिए। वज्रपद्म के समायोग पूर्वक जलाकर, तपाकर ऊपर स्फटिक के आकार को ज्ञान सूर्य के तरह ही उसे आकृष्ट करके दशों दिशाओं में परम अस्त्र द्वारा उसके ऊपर अमृत गिराकर भक्षण योग से उसका भक्षण करना ही चाहिए।

पञ्चवीर्यं तथा भक्ष्यं साध्यसिद्धिविधानतः।
निष्पाद्यत्र्यक्षरैर्बीजैरन्यथा नैव सिद्धिदाः ॥ १३२ ॥
अन्तर्द्धानादयः सिद्धाः सामान्या इति कीर्तिताः।
सिद्धिरुत्तममित्याहुर्बुद्धा बुद्धत्वसाधनम् ॥ १३३ ॥
चतुवर्धिमुपायन्तु बोधिवज्रेण वर्णितम्।
योगतन्त्रेषु सर्वेषु शस्यते योगिना सदा ॥ १३४ ॥
सेवाविधानं प्रथमं द्वितीयमुपसाधनम्।
साधनं तु तृतीयं वै महासाधनं चतुर्थकम् ॥ १३५ ॥

साध्य-सिद्धि के विधानपूर्वक पञ्च वीर्य का भक्षण करना चाहिए त्र्यक्षर बीजों से निष्पादन करके, अन्यथा सिद्धि नहीं होती। अन्तर्ध्यान आदि सिद्धियाँ सामान्य कही जाती हैं। इन्हें ही उत्तम सिद्धि कहा गया है जो बुद्धत्व के साधन हैं। चार प्रकार के उपायों का वर्णन बोधिवज्र ने किया है। सारे योग तन्त्रों में इसकी प्रशंसा की गई है। प्रथम सेवा का विधान, उपाय साधन दूसरा, तृतीय साधन है, महासाधन चौथा है।

सामान्योत्तमभेदेन सेवा तु द्विविधा भवेत्।
वज्रचतुष्केण सामान्यमुत्तमं ज्ञानामृतेन च ॥ १३६ ॥

सामान्य और उत्तम भेद से सेवा दो प्रकार की है। वज्र चतुष्टय के कारण सामान्य और ज्ञानामृत द्वारा उत्तम कहा गया है।

प्रथमं शून्यताबोधिं द्वितीयं बीजसंहतम्।
तृतीयं बिम्बनिष्पत्तिश्चतुर्थं न्यासमक्षरम् ॥ १३७ ॥
एभिर्वज्रचतुष्केण सेवासामान्यसाधनम्।
उत्तमे ज्ञानामृते चैव कार्यं योगषडङ्गतः ॥ १३८ ॥
सेवाषडङ्गयोगेन कृत्वा साधनमुत्तमम्।
साधयदेन्यथा नैव जायते सिद्धिरुत्तमा ॥ १३९ ॥
प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा।
अनुस्मृतिः समाधिष्च षडङ्गो योग उच्यते ॥ १४० ॥
दशानामिन्द्रियाणान्तु स्ववृत्तिस्थानान्तु सर्वतः।
प्रत्याहारमिति प्रोक्तमाहार प्रतिपत्तये ॥ १४१ ॥

पञ्चकामाः समासेन पञ्चबुद्धप्रयोगतः।
कल्पनं ध्यानमुच्येत तद्धयानं पञ्चधा भवेत् ॥ १४२ ॥
वितर्कं च विचारं च प्रीतिश्चैव सुखं तथा।
चित्तस्यैकाग्रता चैव पञ्चैते ध्यानसंग्रहाः ॥ १४३ ॥
गुह्यतन्त्रेषु सर्वेषु विविधाः परिकीर्तिताः।
गुह्यं तर्कोदयं तर्कं विचारं तत् प्रयोगतः ॥ १४४ ॥
तृतीयं प्रीतिसङ्काशं चतुर्थं सुखसंग्रहम्।
स्वचित्तं पञ्चमं ज्ञेयं ज्ञानं ज्ञेयोदयक्षमम् ॥ १४५ ॥
सर्वबुद्धमयं शान्तं सर्वकामप्रतिष्ठितम्।
पञ्चज्ञानमयं श्वासं पञ्चभूतस्वभावकम् ॥ १४६ ॥
निश्चार्य पिण्डरूपेण नासिकाग्रे तु कल्पयेत्।
पञ्चवर्णं महारत्नं प्राणायाममिति स्मृतम् ॥ १४७ ॥
स्वमन्त्रं हृदये ध्यात्वा प्राणबिन्दुगतं न्यसेत्।
निरुध्य चेन्द्रियं रत्नं धारयन् धारणा स्मृतम् ॥ १४८ ॥
निरोधवज्रगते चित्ते निमित्तमुपजायते।
पञ्चधा तु निमित्तं तद् बोधिवज्रेण भाषितम् ॥ १४९ ॥
प्रथमं मरीचिकाकारं धूम्राकारं द्वितीयकम्।
तृतीयं खद्योताकारं चतुर्थं दीपवज्ज्वलम् ॥ १५० ॥
पञ्चमं तु सदालोकं निरभ्रं गगनसन्निभम्।
स्थिरन्तु वज्रमार्गेण स्फारयीत खधातुषु ॥ १५१ ॥
विभाव्य यदनुस्मृत्या तदाकारन्तु संस्मरेत्।
अनुस्मृतिरिति ज्ञेया प्रतिभासोऽत्र जायते ॥ १५२ ॥

प्रथम शून्यता बोधि है, बीज संहार दूसरा है, बिम्ब निष्पत्ति तृतीय और अक्षर न्यास चौथा है। इन वज्रचतुष्टय के कारण सेवा सामान्य साधन किया जाता है। उत्तम ज्ञान साधन में षडङ्ग योग द्वारा ही किया जाता है। सेवा षडङ्ग योग द्वारा उत्तम साधन करना चाहिए अन्यथा उत्तम सिद्धि नहीं होती। प्रत्याहार, ध्यान, प्राणायाम और धारणा, अनुस्मृति और समाधि यही षडङ्ग योग कहा गया है। आहार प्राप्ति के लिए दशों इन्द्रियों के अपने विषयों को लेकर

निवर्तन कराना ही प्रत्याहार कहा गया है। संक्षेप में पञ्च बुद्धों के प्रयोग द्वारा पञ्च कामों की कल्पना ही ध्यान कहा गया है। वह ध्यान भी पाँच प्रकार का है। वितर्क, विचार, प्रीति, सुख एवं चित्त की एकाग्रता वे ही पाँच ध्यान हैं। गुह्य तन्त्रों में सर्वत्र विविध कल्पना की गई है। तर्कों का उदय ही गुह्य है और विचारों का प्रयोग भी गुह्य ही कहा गया है। तीसरा प्रीति का सङ्काश और चौथा सुख का संग्रह कहा गया है। स्वचित्त को पाँचवाँ और ज्ञान, ज्ञेय, दया और क्षमा वे सभी सर्व बुद्धों का स्वरूप है जो शान्त और सर्वकामों में प्रतिष्ठित हैं । पञ्च ज्ञानमय श्वास को और पञ्चभूत स्वभाव को निकाल कर पिण्ड के रूप में नासिका के अग्र भाग में कल्पना करें। पञ्चवर्ण महारत्न ही प्राणायाम है। अपने मन्त्र का ध्यान करके हृदय में, प्राणबिन्दु का ध्यान करें। इन्द्रियों को रोककर धारण करना ही धारणा है। चित्त के निरोध वज्र के होने से निमित्त की उत्पत्ति होती है। वह निमित्त पाँच प्रकार का होता है जिसे बोधिवज्र ने भाषित किया है। पहला मरीचिका जैसा और धूम्राकार दूसरा, स्वद्योताकार तृतीय, दीपवत्ज्वलन चतुर्थ है। निरभ्र गगन जैसा आलोक पञ्चम है, वज्रमार्ग से स्थिर तत्त्व को आकाश में प्रकाशित करना यही ध्यान करके फिर उस आकार का ध्यान करें। इसे ही अनुस्मृति कहा गया और प्रतिभास भी यहाँ इसे ही कहा गया है।

प्रज्ञोपायसमापत्त्या सर्वभावान् समासतः ।
संहृत्य पिण्डयोगेन बिम्बमध्ये विभावनम् ॥ १५३ ॥
झटिति ज्ञाननिष्पत्तिः समाधिरिति संज्ञितः ।
प्रत्याहारं समासाद्य सर्वमन्त्रैरधिष्ठ्यते ॥ १५४ ॥
ध्यानज्ञानं समापद्य पञ्चाभिज्ञत्वमाप्नुयात्।
प्राणायामेन नियतं बोधिसत्त्वैरधिष्ठ्यते ॥ १५५ ॥
धारणानुबलान्नित्यं वज्रसत्त्वः समाविशेत्।
अनुस्मृतिसमायोगात्प्रभामण्डल जायते ॥ १५६ ॥
समाधिवसितामात्रे निरावरणवान्भवेत् ।
तच्चितं हृदये लक्ष्य चतुर्वज्रप्रयोगतः ॥ १५७ ॥

आकृष्य परमास्त्रेण चित्तं मन्त्रमयीकृतम्।
मन्त्रमूर्तिप्रयोगेण बोधिगाथामुदाहरेत् ॥ १५८ ॥
खमण्डलसमारूढं बोधिसंयोगभावनैः।
तच्चित्त ज्ञानबिम्बेन भावनमुपसाधनम् ॥ १५६ ॥

प्रज्ञोपाय समापत्ति के द्वारा संक्षेप में सभी पदार्थों को अपने में खींचकर पिण्डयोगपूर्वक बिम्ब के बीच में भावना करनी चाहिए। इससे तत्काल ही ज्ञान की निष्पत्ति होती है वही समाधि भी है। प्रत्याहार प्राप्त करके सर्वमन्त्रों से अधिष्ठित हुआ जाता है। ध्यान ज्ञान को प्राप्त करके पञ्चअभिज्ञता प्राप्त करें, यह सब प्राणायाम द्वारा बोधिसत्त्वों द्वारा पाया जाता है। धारणा के बल से वज्रसत्त्व की कल्पना करनी चाहिए। अनुस्मृति की समायोग द्वारा प्रभामण्डल की उत्पत्ति होती है। समाधि में बसने मात्र से निरावरण युक्त हो जाता है चतुर्वज्र प्रयोग से, उसको हृदय में रखें। चित्त को मन्त्रमय करके परम अस्त्र द्वारा आकर्षित करें, मन्त्रमूर्ति के प्रयोग से बोधिगाथा का ग्रहण करें। आकाश मण्डल में स्थित बोधि संयोग भावनाओं से उस चित्त को ज्ञान बिम्ब द्वारा उपसाधन ही भावना है।

दर्शनं च द्विधा यावत् तावत् षण्मासभावनम्।
सर्वकामोपभोगैस्तु कर्तव्यं सर्वतः सदा ॥ १६० ॥
दर्शनं यदि षण्मासैर्यदुक्तं नैव जायते।
आरभेत त्रिभिर्वारैर्यथोक्तविधिसम्बरैः ॥ १६१ ॥
दर्शनं तु कृतेऽप्येवं साधकस्य न जायते।
यदा न सिद्धयते बोधिर्हठयोगेन साधयेत् ॥ १६२ ॥
ज्ञानसिद्धिस्तदा तस्य योगेनैवोपजायते।
कुलभेदप्रयोगेण वज्रकीलेन कीलयेत् ॥ १६२ ॥
वशीकरणरक्षां च ततः कुर्यात्प्रयोगतः।
महारागनयेनैव संहृत्य ज्ञानचक्रिणम् ॥ १६४ ॥
योषितं स्फार्य नवधा साध्याया विग्रहे न्यसेत्।
परिवर्त्य चतुर्मुद्रां मण्डलं तत्र कल्पयेत् ॥ १६५ ॥
आत्ममध्यगतं कृत्वा संहरेत्सर्वचक्रिणम्।

सर्ववज्रमयं कृत्वा तदा बोधिं विभावयेत् ॥ १६६ ॥
चतुर्भिश्चोदनागीतैर्देवीभिश्चोदिते हृदि।
त्र्यध्ववज्रमयं चिन्तेद् ज्ञानबद्देहभावनम् ॥ १६७ ॥
मदेन भिद्यते वर्णं रसेन हृदयं तथा।
स्वहेतुरभिषेकेण फलमाधारभेदतः ॥ १६८ ॥

इष्ट का दर्शन दो प्रकार से होता है उसका छह महीना तक साधना करने से और सर्वकामों के उपभोग से सदा करना चाहिए। यदि उक्तयोग से छह महीनों में दर्शन नहीं होता है तो यथोक्त विधि से तीन बार संवर प्रारंभ करना चाहिए। ऐसा करने पर भी साधक को यदि उपयुक्त दर्शन नहीं होता है तो उसे उस बोधि के लिए हठ योग से साधना प्रारम्भ करना चाहिए। उस योग से ही उसे ज्ञान की सिद्धि होती है। कुल भेद प्रयोग द्वारा वज्र कीलन पूर्वक कीलित करनी चाहिए। प्रयोग पूर्वक वशीकरण की रक्षा भी करनी चाहिए। महाराग नीति से ज्ञान चक्र का संहार पूर्वक ही यह किया जाता है। नौ प्रकार से स्त्री का उपयोग करते हुए जो साध्य है उसे वहीं पर न्यस्त करना चाहिए। चार मुद्राओं का परिवहन करते हुए वहाँ मण्डल की कल्पना करनी चाहिए। अपने में ही स्थित करके सर्व चक्रों को संहत करें। उसे सर्व वज्रमय करके बोधि की भावना करनी चाहिए। चार प्रकार के चोदना गीतों से देवियों के द्वारा हृदय में त्र्यध्व वज्रयुक्त करके ज्ञान जैसे देह की ही भावना करनी चाहिए। मद से वर्ण का भेद और रस से हृदय का और स्वहेतु अभिषेक द्वारा फल भी आधार के भेद से होता है।

मन्त्रेण भिद्यते चर्म विद्यापि धर्ममुद्रया ।
षट्चक्रवर्तिनो राज्ञ उष्णीषात्तु विनिःसृता ॥ १६९ ॥
विद्या राज्ञीति विख्याता चतुर्भोगा महर्धिका ।
सर्वकामेति विज्ञेया वज्राधिपतयस्तथा ॥ १७० ॥
ध्यानवज्रेण सर्वेषामभिषेकः प्रशस्यते ।
अनेन विधियोगेन ज्ञानेन सह विग्रहम् ॥ १७१ ॥
कायवाक्चित्तवज्रेणाद्वयीकरणसाधनम् ।

पूर्वोक्तेनानुसारेण विद्यापुरुषवज्रिणः ॥ १७२ ॥
आत्मवन्मण्डलसृष्टिर्महासाधनमुच्यते।
सेवाकाले महोष्णीषं बिम्बमालम्ब्य योगतः ॥ १७३ ॥
उपसाधनकाले तु बिम्बममृतकुण्डलम्।
साधने देवतायोगं कुर्यान्मन्त्री विधानवित् ॥ १७४ ॥
महासाधनकाले च बिम्बं बुद्धाधिपं विभुम्।
इदं तत् सर्ववज्राणां रहस्यं परमयोगिनाम् ॥ १७५ ॥
इति बुद्धवा विभागेन साधयेत्सिद्धिमुत्तमाम्।
अन्यथा नैव संसिद्धिर्जायते उत्तमं शिवम् ॥ १७६ ॥
कल्पकोटिसहस्रेऽपि बुद्धानामपि तायिनाम्।
साध्यसाधनसंयोगं यत्तत् सेवेति भण्यते॥ १७७ ॥
वज्रपद्मसमायोगमुपसाधनमुच्यते।
साधनं चालनं प्रोक्तं हूँ फट्कारसमन्वितम् ॥ १७८ ॥
खभावं खमुखं शान्तं महासाधनमुच्यते।
सर्वबुद्धाधिपः श्रीमान् महावज्रधरैः पदम् ॥ १७९ ॥
उपेयः सर्वबुद्धानां धर्माणां सैव धर्मता ।
यद्यत्कर्मानुरूपेण योगमालम्ब्य योगिनः ॥ १८० ॥
निष्पाद्य मण्डलं तत्र श्रावयेत्समयदारुणम्।
समयं रक्षयेत्पूर्वं कायवाक्चित्तवज्रिणः ॥ १८१ ॥
अथवोष्णीषसमयी यथोक्तविधिसम्भवैः ।
तत्तत् कर्मानुरूपेण स्वचक्राज्ञां तु दीयते॥ १८२ ॥
साध्यमस्यापि यद्देहं मण्डलेन विभावयेत् ।
अपर श्रावयेत्तस्य तेषां देहस्थचक्रिणाम्॥ १८३ ॥
तस्य पातं ततः कृत्वा निष्क्रान्तान् प्रविभावयेत्।
आकृष्य सर्वभावेन स्वचक्रे तान् प्रवेशयेत् ॥ १८४ ॥
कृत्वा प्रतिकृतिं तस्य यथोक्तद्रव्यसम्भवैः।
लिङ्गमाक्रम्य पादेन क्रोधाविष्टेन चेतसा ॥ १८५ ॥

गृहीताज्ञान् ततः क्रोधान् नानाभीतगणैर्वृतान् ।
प्रेषयेत् घातनार्थाय साध्यसाधकवज्रिणः ॥ १८६ ॥
बन्धितं ताडितं तेन क्रोधराजेन वेष्टितम्।
सन्तप्तं त्रास सम्भूतं साध्यमाकर्षयेत्ततः ॥ १८७ ॥
पातयेप्रतिकृतौ तस्य त्रिवज्रस्य तु मन्त्रिणः।
कीलयेत्कीलमन्त्रेण मूर्ध्नि कण्ठे तथा हृदि ॥ १८८ ॥
ईतिश्चोपद्रवान् रोगान् नानाविषसमुद्भवान्।
निपात्य तत्र बिम्बेषु तेषामपि सुकीलयेत् ॥ १८९ ॥
ततः सर्वप्रयोगेण यथोक्तविधिसम्भवैः।
यन्त्र मन्त्रप्रयोगादीन् योजयेत्कर्मभेदतः ॥ १९० ॥
जपं वा लिङ्गमाक्रम्य होमं वा क्रोधमण्डले।
ध्यानं वा क्रूरसत्त्वैस्तु खाद्यमानं प्रकल्पयेत् ॥ १९१ ॥
शान्तिके शान्तचित्तं तु पौष्टिके पुष्टिमानसम्।
वश्ये रक्तं मनः कृत्वा क्रोधे क्रुद्धं प्रसाधयेत् ॥ इति ॥ १९२ ॥

मन्त्रों से चर्म का भेदन होता है। धर्म मुद्रा से विद्या का और षट् चक्रवर्त्ती राजा का उष्णीस के द्वारा निष्कासन होता है। विद्या ही रानी कही गई है। चतुर्भोग ही महा-ऋद्धि है। सर्वकाम वही है और वज्राधिपति भी है। ध्यानवज्र के द्वारा सभी का अभिषेक प्रशंसित है। इसी विधियोग द्वारा और ज्ञान के साथ एकाकार करके – काय वाक् चित्त वज्र से अद्वयीकरण साधन को पूर्वोक्त रूप से विद्या पुरुष वज्रों का अपने तरह ही मण्डल की सृष्टि ही महासाधन कहा गया है। सेवा काल में महोष्णीष का योगपूर्वक आलम्बन करके, उपसाधन काल में अमृत कुण्डल के बिम्ब का ध्यान करके विधानपूर्वक साधक देवता का ध्यान करे। मासाधन काल में व्यापक बुद्धाधिप बिम्ब का ध्यान करें। यही सर्ववज्रों का योगियों का परम रहस्य है। इस प्रकार समझ कर उत्तम सिद्धि की साधना करें। अन्यथा उत्तम शिवमय सिद्धि नहीं होती। कोटि कल्पों में भी बुद्धों की सिद्धि नहीं होती। साध्य साधन कर संयोग करके जो सेवा करता है उसे ही वज्रपद्म समायोग उपसाधन कहा गया है। हूँ फट् का संचालन ही साधन कहा गया है। आकाश भाव, आकाश मुख शान्त

ही महासाधन कहा गया है। यह सर्वबुद्धाधिप धीमान् पद है जो वज्रधरों का भी उपेय है, बुद्धों का भी है। धर्मों की धर्मता भी यही है। जिस-जिस कर्म का आरंभ करके योगी योग का आलम्बन करके मण्डला का निष्पादन करते हैं उसे श्रवण कराना चाहिए। उस दारुण समय की रक्षा भी की जानी चाहिए जो कायवाक् चित्त वज्री का है। अथवा यथा उक्त उष्णीय सिद्धान्ती उक्त विधि से ही यथा सम्भव उस-उस कर्म के अनुरूप स्वचक्र की आज्ञा देता है। साध्य इसका भी जो देह है उसे भावित करे। उसे दूसरा श्रवण कराये जो देहस्थ चक्री हैं। उसके बाद उसका पात कराके निकले हुए तत्त्वों का ध्यान करें। सर्वभावों से आकर्षण करके अपने चक्र में उन्हें प्रविष्ट करायें। उक्त द्रव्यों से उसकी छायाचित्र बनाकर उस पर आक्रमण करके, पैर से, क्रोधाविष्ट होकर नानाभीतगणों से आवृत गृहीता ज्ञान जो क्रोध रूप हैं, उन्हें घात करने के लिए भेज दें, जो साध्य साधक वज्रों का है। बन्धित, ताडित, क्रोधराज द्वारा वेष्टित और सन्तप्त, त्रास-सम्भूत साध्य को आकर्षित करें। उसके प्रतिकृति त्रिवज्री मन्त्री के द्वारा उसे कीलित करे मन्त्र से उसके कण्ठ, हृदय तथा शिर में विभिन्न विघ्न, उपद्रव, रोग एवं अनेक विषयों में उसे फँसाकर उस बिम्ब में उन्हें भी कीलित करें। उसके बाद सर्व प्रयोगों द्वारा यथोक्त विधि से कर्मभेदपूर्वक मन्त्र-तन्त्र-यन्त्रों का प्रयोग करें। चित्त में आक्रमण करके होमपूर्वक क्रोधमण्डल में ध्यान करके क्रूससत्त्वों से उसे खाते हुए अवस्था की भावना करे। शान्ति कर्म में शान्त चित्त होना और पौष्टिक कर्म में मन में पुष्टि की भावना, वश्य कर्मों में मन में राग की भावना तथा क्रोध सिद्धि में अपने को क्रुद्ध करना चाहिए। इति

अथ भगवन्तः सर्वतथागतास्तेषां बोधिसत्त्वानां महासत्त्वानां संशयच्छेदं कृत्वा सर्वसंशयच्छेत्तारं कायवाक्चित्तवज्रं स्वकायवाक्चित्तवज्रेषु विहरन्तं स्वकायवाक्चित्तेनालम्ब्य तूष्णीमवस्थिता अभूवन्।

अथ ते सर्वे बोधिसत्त्वा महासत्त्वास्तान्सर्वतथागतान् अनेन स्तोत्रराजेन स्तुवन्ति स्म।

नमस्ते सर्वकायेभ्यः सर्ववाग्भ्यो नमो नमः।

नमस्ते सर्वचित्तेभ्यः सत्त्वहृद्भ्यो नमो नमः ॥ १६३ ॥
कायवाक्चित्तवज्राणां कायवाक्चित्तभावतः।
सत्त्वासमसमा बुद्धाः कः साध्यः कश्च साधकः ॥ १६४ ॥
सर्वबुद्धविघातेन साधकस्य महात्मनः।
कथं न लिप्यते पापैर्यदि लिप्तः फलं कथम् ॥ १६५ ॥

अब, भगवान् सर्वतथागतों ने उन बोधिसत्त्व एवं महासत्त्वों के सन्देहों का निवारण करके सर्वसंशय को नाश करने वाले काय-वाक् चित्त वज्र को जो अपने कायवाक्चित्त वज्रों में विहार करने वाले हैं, को स्वकाय वाक् चित्त द्वारा आलम्बन करके मौन होकर बैठ गए।

अब वे सब बोधिसत्त्व महासत्त्वों ने उन सभी सर्वतथागतों को इस स्तोत्रराज के द्वारा स्तुति की। सभी कायों को नमस्कार, सभी वाक्-वचनों को नमस्कार। सभी चित्तों को नमस्कार, सत्त्वों के हृदयों को नमस्कार। काय वाक् चित्त वज्रों के सत्त्वों के समान आप बुद्ध भी हैं इसीलिए यहाँ कौन साधक और कौन साध्य है यह संभव ही नहीं है। अर्थात् जितने सत्त्व हैं वे सभी बुद्ध हैं। सभी बुद्धों का विघात करके महात्मा साधक का यही कम है तो यदि वह पापों से लिप्त नहीं होता तो वह फल से कैसे लिप्त होगा।

अथ ते सर्वतथागतास्तेषां महाबोधिसत्त्वानां साधुकारमददुः।
साधु साधु महासत्त्वाः साधु साधु महामुने।
साधु साधु महाघोषाः साधु साधु महामहाः ॥ १६६ ॥
सर्वबुद्धाधिपः श्रीमानाचार्यो बोधिवज्रिणः।
मायावत्सर्वभावान्वै सृष्टिसंहारकारकः ॥ १६७ ॥
तेन तस्य न पापं स्यात्पुण्यं नैव तथैव च।
यस्य न पुण्यं पापोऽस्ति तस्य बोधिः प्रगीयते ॥ १६८ ॥
वञ्चनं तस्य नाथस्य नाशनं सर्वदेहिनाम्।
दुर्गतिर्नैव जायेत बोधिश्चापि न दुर्लभा ॥ १६९ ॥
पूर्वेण कृतकर्मेण घोरेण यदि नारकम्।
जन्तूनां जायते तेषां नारकाणां महत्फलम् ॥ २०० ॥

ज्ञानेन मुद्रिता भोन्ति साध्योऽयं बोधिवज्रिणाम्।
परमानुग्रहो ज्ञेयः सत्त्वानां तेन योगिनाम् ॥ २०१ ॥
निग्रहानुग्रहं कर्म तेन कृत्यं महात्मनाम्।
महासाधनपर्यन्तं कृत्वा कर्म समारभेत् ॥ २०२ ॥

अब इन सभी सर्वतथागतों ने उन महाबोधिसत्त्वों को साधुवाद दिया। हे महासत्त्वों यह अत्यन्त उत्तम है। साधु। साधु। हे महामुनियों धन्य हैं आप सब, महाघोष भी धन्य है। साधु साधु महामहों धन्य हैं आप सब। सर्वबुद्धों का अधिप, धीमान् आचार्य, बोधिवज्री भी मेरे तरह ही सभी पदार्थों के सृष्टि एवं संहार कारक हैं। इसीलिए उनके लिए न कोई पाप है न कोई पुण्य ही होता है। जिसमें पुण्य और पाप दोनों नहीं हैं उनके लिए ही बोधि उपलब्ध होता है। उनके लिए किसी का वाचन भी नहीं है, नाश भी नहीं है, दुर्गति भी नहीं है इसीलिए बोधि दुर्लभ नहीं है। यदि वे बोधिसत्त्व पूर्व के किसी कर्म के फलस्वरूप नरक जाते हैं तो यह तो उन नाटकीय जीवों का बहुत बड़ा फल है। उनके ऊपर कृपा ही है। ज्ञान के द्वारा वे मुद्रित होते हैं जो ज्ञान बोधिवज्रों का साध्य है जिसमें परम अनुग्रह है ऐसा जानना चाहिए जिससे वे योगी एवं सत्त्वों का परम कल्याण होता है। निग्रह और अनुग्रह रूप कर्म उनका कृत्य है। महासाधन पर्यन्त उसे करके कर्म का आरम्भ करना चाहिए।

अथ ते सर्वे बोधिसत्त्वा महासत्त्वाः सर्ववज्राणा
महाकरुणानयधर्मं श्रुत्वा तुष्टाः प्रतुष्टाः सन्तुष्टाः साधुकारमददुः।
साधु साधु महानाथाः साधु साधु महामुने।
साधु साधु महाधर्माः साधु साधु महाकृपाः ॥ २०३ ॥

अब वे सभी बोधिसत्त्व एवं महासत्त्वों ने सर्ववज्रों का महाकरुणानय धर्म को सुनकर खुश, अति हर्ष, सन्तुष्ट होकर उन्हें धन्यवाद, साधुवाद दिया। हे नाथ साधु है। साधु! हे महामुनि आप धन्य हैं। महान् धर्म भी धन्य हैं। साधु हैं। महाकृपा भी धन्य है, साधु है।

अहो समन्तभद्रस्य कृपापरमनिर्मला।
क्रूरकर्मेऽपि दुष्टानां बुद्धत्वफलदायिका ॥ २०४ ॥

अहो आश्चर्य है समन्तभद्र की कृपा परमनिर्मल है। क्रूर कर्म करने वालों को भी बुद्धत्वरूप फल देने वाले हैं।

अथ ते सर्वतथागतास्तेषां बोधिसत्त्वानां महासत्त्वानामेवमाहुः। तेन हि कुलपुत्रा अस्मिन्सर्वतथागताभिषेकगुह्यसमाजेऽभिषिक्तेन मन्त्रिणा न त्रसितव्यं न संत्रसितव्यं न संत्रासमापत्तव्यम्। तत्कस्य हेतोः?

बोधिवज्राभिसम्भूता द्वेषवज्रादयो महाः।
प्रतिक्षेपो न कर्त्तव्यः प्रबन्धे मन्त्रसंग्रहे ॥ २०५ ॥

अब, वे सर्वतथागतों ने उन बोधिसत्त्व महासत्त्वों को यह कहा। इसीलिए हे कुलपुत्र इस सर्वतथागताभिषेक गुह्य समाज में अभिषिक्त हुए मन्त्री को कभी भी त्रसित नहीं होना चाहिए, संत्रसित नहीं होना चाहिए, किसी भी प्रकार संत्रास को उपलब्ध नहीं होना चाहिए। यह किसलिए? बोधि वज्रों से उत्पन्न जो द्वेष वज्र आदि तेज हैं उन्हें कभी भी प्रतिक्षेप आक्षेप नहीं करना चाहिए। इस मन्त्र संग्रह रूप प्रबन्ध कृति = पुस्तक में विशेष करके।

अथ ते बोधिसत्त्वा महासत्त्वास्तान्
सर्वतथागतानेककण्ठेनाभिर्गाथाभिः स्तुवन्ति स्म।
यं त्र्यध्ववज्रमुदर्य भवमोक्षभूतं
शान्तं निरावरण शुद्धखधातुभावम्।
बुद्धादिबुद्धपरमेश्वरबोधिवज्रं
तं कायचित्तवचनैः सततं नमामः॥ २०६ ॥

अब इन सब बोधिसत्त्व और समहासत्त्वों ने उन तथागतों को एक स्वर से इन गाथाओं से स्तुति किया। उन जिन्होने त्र्यध्व वज्रमय, भवमोक्षभूत, शान्त, निरावरण, शुद्ध खधातु में अवस्थित बुद्धादि-बुद्ध-परमेश्वर बोधिवज्र को हम कायचित्त वचनों से निरन्तर नमस्कार करते हैं।

यद्रूपवेदनसंज्ञसुसंस्कृतं च
विज्ञानमायतनषट्कषडिन्द्रियं च।
अप्तेजवायुपृथिवीगगनं च सर्वात्
तान् बोधिचित्तसदृशान् विपुलान् नमामः ॥ २०७ ॥

जो रूप वेदना-संज्ञा-संस्कार, विज्ञान आयातन षड् इन्द्रिय, जल-तेज-वायु-पृथिवी-आकाश स्वरूप हैं उन बोधि चित्त सदृश विपुल तथागतों को हम नमस्कार करते हैं।

यन्मोह द्वेष तथ राग सवज्रधर्मान्
विद्याप्रयोगजनितान् सततं प्रधर्मान्।
नानाविचित्ररति विह्वलभावभूतान्
तान् बोधिचित्तसदृशान् विपुलान् नमामः ॥ २०८ ॥

जो मोह, द्वेष, राग, वज्रधर्म सहित विद्याप्रयोगों से उत्पन्न हैं, निरन्तर प्रकृष्ट धर्मों को नाना विचित्र रति से विह्वल भावयुक्त, उन बोधिचित्त सदृश, विपुल स्वरूप युक्त तथागतों को नमस्कार करते हैं।

संग्राहणं रति तथ कृतिनिश्चलं च
हेतुफलप्रकृतिचित्तगतानुधर्मान्।
भ्रम दोष राग तथ आवरणञ्च वज्रान्
तान् बोधिवज्र सदृशान् विपुलान् नमामः ॥ २०९ ॥

रति का संग्रहण, कृति की निश्चलता और हेतुफल प्रकृति चित्तगत धर्मों के भ्रम, दोष राग और आवरणों के जो भी विकार हैं उन्हें नष्ट करने वाले उन बोधिवज्र सदृश, विपुल तथागतों को नमस्कार हैं।

ध्यायन्ति ये इमु विशुद्धमनादिभावं
प्रज्ञा-उपायजनितं विगतोपमं च।
गुह्याभिषेकव्रतसम्बरयोगनित्यं
तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः ॥ २१० ॥

जो इस विशुद्ध स्वभाव-अनादि भाव एवं प्रज्ञा-उपाय-उत्पन्न उपमा रहित गुह्याभिषेक व्रत सम्बर योग नित्य को जो बोधिवज्र के तरह लक्षिण होते हैं उन्हें सदैव नमस्कार करते हैं।

ये भावयन्ति इमु उत्तमसिद्ध्युपायं
सेवाविधानमुपसाधनसाधनेन।
ये महासाधनमतिनिश्चितसाधकेन्द्रा-
स्तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः ॥ २११ ॥

जो इस उत्तम सिद्धि के उपायभूत सेवाविधान को उपसाधन और साधनों से सुवेवित करते हैं और महासाधन के लिए निश्चयदृढ संकल्प युक्त होकर साधकों के इन्द्र के रूप में अवस्थित हैं और बोधिवज्र के तरह लक्षित होते हैं उन्हें हमेशा हम नमस्कार करते हैं।

ये साधयन्ति कृतसन्ध्यचतुष्कवज्रै-
रन्तर्हितादि विविधानिह हीनसिद्धीन्।
अविनष्टमार्ग इमु बुद्धगुरुप्रसादै-
स्तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः ॥ २१२ ॥

जो किए हुए चार सन्ध्या वज्रों के द्वारा अन्तर्हित - विविध हीनसिद्धियों को सिद्ध करते हैं, जिनके मार्ग अविनष्ट हैं बुद्धगुरु के कृपा से उन बोधिवज्र के तरह तथागतों को हम नमस्कार करते हैं।

श्रृण्वन्ति ये इमु समाजसुगुह्यतन्त्रं
स्वाध्यां करोन्ति च पठन्ति च चिन्तयन्ति।
पूजां करोन्ति च लिखन्ति च लेखयन्ति
तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः॥ २१३ ॥

जो इस अत्यन्त गोपनीय गुह्य समाज का श्रवण करते हैं, जो इसका स्वाध्याय करते हैं, पढ़ते हैं और चिन्तन भी करते हैं, पूजा करते हैं लिखते है और लिखाते हैं उन बोधिवज्र के तरह दिखने वाले तथागतों को हम नमस्कार करते हैं।

स्वाध्यां च ये इमु अभियुक्तसुसाधकेन्द्राः
शान्त्यादिकर्मप्रसरेण सुकल्पितेन।
यन्त्रेण मन्त्रविदितेन तथ मुद्रितेन
तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः ॥ २१४ ॥

इस ग्रन्थ का जो स्वाध्यायपूर्वक साधना करते हैं अपने हृदय में रखकर और शान्ति आदि कर्मों में सुसंकल्प पूर्वक यन्त्र एवं मन्त्रों द्वारा तथा मुद्रा आदि के द्वारा भी उन बोधिसत्त्व सदृश तथागतों को हम नमस्कार करते हैं।

ये देशयन्ति च स्पृशन्ति च संस्मरन्ति
श्रृण्वन्ति साधकविभोः खलु नाममात्रम्।
श्रद्धां करोन्ति च वसन्ति च एकदेशे
तान् बोधिवज्र इव लक्ष्य सदा नमामः ॥ २१५ ॥

जो इस ग्रन्थ की देशना करते हैं, स्पर्श करते हैं, स्मरण करते हैं, सुनते हैं, इस साधना के रहस्य का नाम मात्र भी लेते हैं, श्रद्धा करते हैं, उसके समीप में बैठते हैं, उन्हें हम, बोधिसत्त्व के तरह मान कर नमस्कार करते हैं।

एभिः स्तोत्रपदैः शान्तैस्तनुयात् सर्वनायकान्।
अनुमोदयन्ति ते नाथा बोधिसत्त्वा महामहाः ॥ २१६ ॥

इन शान्त स्तोत्रों के पदों से सभी नायकों को नमस्कार करें, उन्हें वे नाथ, बोधिसत्त्व कृपा करते हैं।

सुभाषितमिदं तन्त्रं सर्वतन्त्राधिपं परम्।
सर्वताथागतं गुह्यसमाजं गुह्यसम्भवम् ॥ इति ॥ २१७ ॥

सभी तन्त्रों में अधिप - राजा के तरह उत्तम तन्त्र का अच्छे से उपदेश - भाषित = वाग्व्यवहार किया गया है। यही सर्वतथागत गुह्य है, यही गुह्य समाज है यही गुह्य सम्भव भी है। इति।

इदमुक्त्वा ते सर्वतथागतास्ते च बोधिसत्त्वा महासत्त्वाः स्वकायवाक्चित्तवज्रेषु विहरन्तं कायवाक्चित्तवज्रस्य कायवाक्चित्तं स्वकायवाक्चित्तेनालम्ब्य तूष्णीमभूवन् ॥ इति ॥

इस प्रकार कहकर वे सभी तथागत, बोधिसत्त्व एवं महासत्त्व अपने कायवाक्चित्त वज्रों में विहार करने वाले कायवाक्चित्त वज्र के कायवाक्चित्त को अपने कायवाक्चित्तों के द्वारा अवलम्बित = ग्रहणकर = एकाकार होकर मौन हो गए।

इति श्रीसर्वतथागतकायवाक्चित्तरहस्यातिरहस्ये गुह्यसमाजे महागुह्यतन्त्रराजे सर्वगुह्यनिर्देशवज्रज्ञानाधिष्ठानं नाम पटलोऽष्टादशः ॥
॥ समाप्तोऽयं श्रीगुह्यसमाजस्य तन्त्रराजस्य पूर्वार्द्धकायः ॥

अष्टादश पटल पूर्ण हुआ ।

गुह्य समाज तन्त्र पूर्ण हुआ।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

१- अश्वघोष, **बुद्धचरितम्**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, २००४ ।

२- अश्वघोष, **सौन्दरनन्द**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, २००४ ।

३- असंग एवं मैत्रेयनाथ, **महायानसूत्रालङ्कारः**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८५ ।

४- आप्टे, वामन शिवराम, **संस्कृत-हिन्दी कोश**, नई दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास, १९६६ ।

५- उपाध्याय, बलदेव, **बौद्धदर्शन मीमांसा**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, पञ्चम संस्करण, १९९९ ।

६- उपाध्याय, भरतसिंह, **बौद्धदर्शन तथा अन्य भारतीय दर्शन**, नई दिल्ली : मोतीलाल बनारसीदास, १९८१ ।

७- कमलशील, **प्रज्ञापारमिता वज्रच्छेदिका टीका**, वाराणसी : केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान, १९९० ।

८- गपि, यशोविजय, **जैन तर्क भाषा**, अहमदाबाद : सरस्वती पुस्तक भण्डार, १९३८ ।

९- गुप्त, मोक्षाकर, **बौद्ध तर्क भाषा**, वाराणसी : प्राच्य विद्या संस्थान, १९८५ ।

१०-चन्द्रकीर्ति, **प्रसन्नपदा**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८३ ।

११- चन्द्रधर शर्मा (सं०), **सौगत सिद्धान्तसारसंग्रह**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, १९५४ ।

१२- त्रिपाठी, रामशंकर, **सौत्रान्तिक दर्शनम्**, वाराणसी : केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान, १९९० ।

१३- त्रिपाठी, रामशंकर, **बौद्धदर्शन प्रस्थान**, वाराणसी : केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान, १९९७ ।

१४- दिङ्नाग, **प्रज्ञापारमिता पिण्डार्थः**, दरभंगा : मिथिला विद्यापीठ, १९६० ।

१५- दिव्यवज्र वज्राचार्य (अनु०), **सद्धर्मलंकावतारसूत्रम्**, ललितपुर : लोटस रिसर्च सेन्टर, १९९३ ।

१६- द्वारिकादास शास्त्री (सं०), **अपोहवादः**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९९२ ।

१७- धर्मकीर्ति, **प्रमाणवार्त्तिक**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, १९९४ ।

१८- धर्मकीर्ति, **न्याय बिन्दु**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८४ ।

१९- नागार्जुन, **मध्यमकशास्त्रम्**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८३ ।

२०- नागार्जुन, **विग्रहव्यावर्तनी**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८४ ।
२१- न्यौपाने, काशीनाथ, **बौद्धागमरहस्यम्** (अप्रकाशित)
२२- न्यौपाने, काशीनाथ, **मीमांसा पदार्थ विज्ञानम्** , वाराणसी : दिलीपकुमार पब्लिशर्स, १९९४ ।
२३- न्यौपाने, काशीनाथ, **लाहिडी क्रियायोग संहिता**, वाराणसी : सत्यलोक, २००५ ।
२४- नरेन्द्रदेव, **बौद्ध धर्मदर्शन**, पटना : बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, १९७१ ।
२५- परशुराम वैद्य (सं०), **अष्टसाहस्त्रिका प्रज्ञापारमिता**, दरभंगा : मिथिला विद्यापीठ, १९६० ।
२६- पेमा तेन्जिङ्ग (सं०), **प्रज्ञापारमिता वज्रच्छेदिकासूत्रम्**, वाराणसी : केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान, १९९४ ।
२७- परशुराम वैद्य (सं०), **प्रज्ञापारमिता हृदयसूत्रम्**, दरभंगा : मिथिला विद्यापीठ, १९६० ।
२८- पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र, **बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास**, लखनऊ : हिन्दी समिति, १९७६ ।
२९- प्रधान, भुवनलाल, **नेपालमा बौद्धधर्म**, काठमांडु : नेपाल राजकीय प्रज्ञा प्रतिष्ठान, १९८८ ।
३०- बुद्धघोष, **विशुद्धिमग्गो**, महाराष्ट्र : विपश्यना विशोधन विन्यास, १९९८ ।
३१- मल्लिषेण, **स्याद्वादमञ्जरी**, गुजरात : श्रीपरमश्रुतप्रभावकमण्डल, १९९२ ।
३२- **महावग्गो**, महाराष्ट्र : विपश्यना विशोधन विन्यास, १९९८ ।
३३- मिश्र, विरेन्द्रप्रसाद, **दर्शनशास्त्र : एक परिचय**, काठमांडु : श्रीमती श्यामा मिश्र, १९८३ ।
३४- मिश्र, ज्ञानश्री, **निबन्धावली**, पटना : काशी प्रसाद जायसवाल शोध संस्थान, १९८७ ।
३५- मैत्रेयनाथ, **अभिसमयालङ्कारकारिका**, दरभंगा : मिथिला विद्यापीठ, १९६० ।
३६- राधेश्यामधर द्विवेदी (सं०), **बौद्ध विज्ञानवाद : चिन्तन एवं योगदान**, वाराणसी : केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान, १९८३ ।
३७- वसुबन्धु, **अभिधर्मकोश**, इलाहाबाद : हिन्दुस्तानी एकेडेमी, १९८४ ।
३८- वसुबन्धु, **विज्ञप्तिमात्रतासिद्धिः**, वाराणसी : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, १९९२ ।
३९- शर्मा, चन्द्रधर, **बौद्धदर्शन और वेदान्त**, इलाहाबाद : विजन विभूति प्रकाशन, १९८६ ।
४०- शान्तिदेव, **बोधिचर्यावतारः**, वाराणसी : बौद्ध भारती, १९८८ ।

४१- सिंह, अमर, **अमरकोशः**, काठमांडु, रत्न पुस्तक भण्डार, २००८ ।
४२- स्थिरमति, **विज्ञप्तिमात्रतासिद्धिः स्थिरमतिभाष्य**, वाराणसी : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, १९९२ ।
४३- हरिभद्र, **अष्टसाहस्त्रिका आलोकटीका**, दरभंगा : मिथिला विद्यापीठ, १९६० ।
४४- हरिभद्र, **षड्दर्शन समुच्चय**, वाराणसी : चौखम्बा विद्या भवन, १९७६ ।
45. Akira Hirakawa, *A History of Indian Buddhism*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1993.
46. Bapat, P.V., *2500 Years of Buddhism*, Delhi: Ministry of Information and Broadcasting, 1956.
47. Bapat, and Chatterjee, *An Introduction to Indian Philosophy*, Calcutta: University of Calcutta, 1984.
48. Dasgupta, S.N., *A History of Indian Philosophy*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1973.
49. Gellner, David N, *Monk, Householder and Tantric Priest*, Delhi: Cambridge University Press, 1992.
50. Kewal Krishan Mittal (Editor), *Vijnanavada (Yogachar) and its Tradition*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1993.
51. Murti, T.R.V., *Central Philosophy of Buddhism*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1954.
52. Pandey, G.C., *Studies in Mahayana*, Varanasi: Central Institute of Higher Tibetan Studies, 1993.
53. Takakusu, Junjiro, *The Essentials of Buddhist Philosophy*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1949.
54. Wayman, Alex, *Buddhist Insight*, Delhi: Motilal Banarsidass, 1984.

Other books of related interest
published by us:

1. ***A Concise Dictionary of Indian Philosophy*** by *John Grimes*
2. ***The Aphorisms of Siva*** trans. with exposition and notes by *Mark S.G. Dyczkowski*
3. ***A Journey in the World of the Tantras*** by *Mark S.G. Dyczkowski*
4. स्पन्दप्रदीपिका ***Spandapradīpikā*** (Sanskrit) — A Commentary on the Spandakārikā by Bhagavadutpalācārya Edited by *Mark S.G. Dyczkowski*
5. ***Vijnana Bhairava : The Practice of Centring Awareness*** trans. and commentary by *Swami Lakshman Joo*
6. ***Abhinavagupta's Commentary on the Bhagavad Gita : Gītārtha Saṁgraha*** trans., introd. & notes by *Boris Marjanovic*
7. ***Stavacintāmaṇi*** of Bhaṭṭa Nārāyaṇa with the Commentary by Kṣemarāja स्तवचिन्तामणि: Translated from Sanskrit with Introduction and Notes by *Boris Marjanovic*
8. ***Aspects of Tantra Yoga*** by *Debabrata SenSharma*
9. ***An Introduction to the Advaita Saiva Philosophy of Kashmir*** by *Debabrata SenSharma*
10. आगम-संविद् ***Āgama-Saṁvid*** (Sanskrit) डॉ० कमलेश झा
11. ***The Khecarīvidyā of Ādinātha*** : A critical edition and annotated translation of an early text of ***haṭhayoga*** by *James Mallinson*

12. ***Shaivism in the Light of Epics, Puranas and Agamas*** by N.R. Bhatt
13. ***The Hindu Pantheon in Nepalese Line Drawings*** : Two Manuscripts of the Pratiṣṭhālakṣaṇasārasamuccaya compiled by *Gudrun Buhnemann*
14. ***Selected Writings of M.M. Gopinath Kaviraj***
15. शिव-संबोध और गंगा प्रतीक - डॉ० रमाकान्त पाण्डेय
16. ***Śrī Tantrālokaḥ*** (Sanskrit Text with English Translation) (3 vols.) by *Gautam Chatterjee*
17. ***Fundamentals of the Philosophy of Tantras*** by *Manoranjan Basu*
18. ***Yantra Images*** Compiled and edited by *Dilip Kumar*
19. ***White Shadow of Consciousness***: Recognition of the actor by *Gautam Chatterjee*
20. ***The Stanzas on Vibration*** by *Mark S.G. Dyczkowski*

डॉ० काशीनाथ न्यौपाने संस्कृत वाङ्मय के विशिष्ट साधक हैं। इन्होने वाराणसी में रहकर प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी योगीन्द्रानन्द जी के सान्निध्य में वेदान्त, न्याय, मीमांसा, बौद्धदर्शन, बौद्धतन्त्र, शैवदर्शन, शाक्ततन्त्र, पालि, प्राकृत एवं जैन दर्शन का गहन अध्ययन किया है। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय से पूर्वमीमांसा एवं बौद्धदर्शन में स्वर्णपदक सहित आचार्य करने के बाद विद्यावारिधि उपाधि प्राप्त किया है।

संस्कृत लेखन में सिद्धहस्त डॉ० न्यौपाने द्वारा लिखित मीमांसा पदार्थ विज्ञानम्, मीमांसातर्कभाषा, मीमांसानयभूषनम्, बौद्धदर्शनभूमिः, बौद्धप्रमाणशास्त्रम्, वज्रयानमहाशास्त्रम्, सौत्रान्तिकदर्शनम्, वज्रयोगसाधना, बौद्धागमरहस्यम्, दर्शनसंदोहः, तारिणीवरिवस्या, लाहिडी क्रियायोग संहिता आदि मौलिक कृतियाँ संग्रहणीय ग्रन्थ के रूप में प्रसिद्ध हैं जो विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भी निर्धारित हैं।

नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व रिसर्च डाइरेक्टर डॉ० न्यौपाने सम्प्रति नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय, काठमाण्डु में बौद्धदर्शन विभाग में कार्यरत हैं।

ISBN 818611710-5
9788186117101

₹ 325.00